आज़ादी का अमृत महोत्सव

अक्तूबर, 2022

I.S.S.N. : 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह
श्री जाहन्वी शेखर शर्मा
श्री अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

ISSN-2457-0494

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 195/-

वार्षिक : ₹ 2,100/-

© 2022 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

अक्तूबर, 2022 अंक - 10

प्रधान संपादक
कमला कान्त

संपादक
अविनाश शुक्ला

विधि साहित्य
प्रकाशन

[2022] 4 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से आपके अवलोकनार्थ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **कंचन कुमार** बनाम **बिहार राज्य** [2022] 4 उम. नि. प. 1 वाले मामले में तारीख 14 सितंबर, 2022 को पारित निर्णय प्रस्तुत किया जा रहा है । इस मामले में अपीलार्थी-लोक सेवक के विरुद्ध आय के ज्ञात स्रोतों के अननुपात में संपत्ति एकत्रित करने के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी । अपीलार्थी-लोक सेवक ने जांच में आय और व्यय की संगणना किए जाने पर स्पष्ट रूप से गलतियां पाए जाने का अभिकथन करते हुए विशेष न्यायाधीश के समक्ष मामले से उन्मोचित किए जाने के लिए आवेदन फाइल किया । विशेष न्यायाधीश द्वारा इस आवेदन को सरसरी में खारिज कर दिया गया । अपीलार्थी-लोक सेवक ने उसके आवेदन को सरसरी में खारिज किए जाने के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन प्रस्तुत किया, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । तत्पश्चात् अपीलार्थी-लोक सेवक ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील प्रस्तुत की और यह अभिकथित किया कि उन्मोचन के लिए प्रस्तुत किया गया आवेदन आक्षेपित आरंभिक संवीक्षा की अवसीमा तक यह विचार किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किया गया था कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं और यदि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री की जांच से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किया गया मामला प्रथमदृष्ट्या बनता ही नहीं, तो अभियुक्त मोचन का हकदार होगा । माननीय उच्चतम न्यायालय

ने अपील मंजूर करते हुए अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227 के अधीन उन्मोचन के आवेदन का न्यायनिर्णयन किए जाने के प्रयोजनार्थ अपेक्षित आरंभिक संवीक्षा की अवसीमा मामले की व्यापक अधिसंभाव्यताओं और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के संपूर्ण प्रभाव, जिसमें मामले में प्रतीत होने वाली अन्य त्रुटियों की परीक्षा भी सम्मिलित होती है, पर विचार किए जाने तक सीमित होता है । विद्वान् विशेष न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालय ने इस आधार को ध्यान में रखते हुए विचार नहीं किया कि उन्मोचन के प्रक्रम पर निरुद्देश्य जांच अनुज्ञेय नहीं होती और यदि अभियोजन द्वारा कोई प्रथमदृष्ट्या मामला साबित नहीं किया जाता, तो अपीलार्थी-लोक सेवक उन्मोचन का हकदार है । विशेष न्यायाधीश ने उन्मोचन आवेदन को मात्र इस आधार पर खारिज कर दिया कि उन्मोचन के प्रक्रम पर निरुद्देश्य जांच अनुज्ञात नहीं होती । उन्मोचन के आवेदन पर न्यायालय द्वारा की जाने वाली जांच निरुद्देश्य जांच नहीं होती, बल्कि उन्मोचन के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन का न्यायनिर्णयन किए जाने के प्रयोजनार्थ साधारण और आवश्यक जांच होती है । विशेष न्यायाधीश ऐसी जांच करने के लिए आबद्ध था कि अपीलार्थी-लोक सेवक का विचारण किए जाने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं । दुर्भाग्यवश उच्च न्यायालय ने भी वही गलती कि जो विशेष न्यायाधीश द्वारा की गई । अत: अपीलार्थी-लोक सेवक उन्मोचन का हकदार था ।

इस अंक में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

अक्तूबर, 2022

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
कंचन कुमार **बनाम** बिहार राज्य	1
गुरमेल सिंह और एक अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य	90
झारखंड राज्य **बनाम** शैलेन्द्र कुमार राय **उर्फ** पांडव राय	114
मरिनो एंटो ब्रुनो और एक अन्य **बनाम** पुलिस निरीक्षक	44
राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक **बनाम** लाली **उर्फ** मणिकंदन और एक अन्य, इत्यादि	76
ललनकुमार सिंह और अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य	19

संसद् के अधिनियम

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 - 15

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

ओषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 (1940 का 23)

– धारा 34, 16 और 18 [सपठित ओषधि और प्रसाधन सामग्री नियम, 1945 का नियम 76 और अनुसूची ग और ग(1)] – कंपनियों द्वारा अपराध – प्रतिनिधिक दायित्व – कंपनी द्वारा विनिर्मित ओषधि का ओषधि निरीक्षक द्वारा लिया गया नमूना परीक्षण रिपोर्ट में मानक गुणवत्ता न पाया जाना – कंपनी के विरुद्ध मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत फाइल किया जाना – मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा कंपनी के निदेशकों-अपीलार्थियों सहित सभी अभियुक्तों को समन जारी किया जाना – सेशन न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया पुनरीक्षण आवेदन खारिज हो जाना – उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई रिट याचिका भी खारिज हो जाना – अपील – किसी व्यक्ति को अधिनियम की धारा 34 के अधीन प्रतिनिधिक रूप में तब तक दायी नहीं बनाया जा सकता जब तक सुसंगत समय पर वह कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उसका भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी न हो और केवल इस कारण कि कोई व्यक्ति कंपनी का निदेशक है यह आवश्यक नहीं है कि उसे कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्यकलापों की जानकारी हो और कंपनी द्वारा किए गए अपराध के लिए निदेशक को उत्तरदायी ठहराने के लिए यह आवश्यक है कि उसके विरुद्ध शिकायत में इस बारे में स्पष्ट प्रकथन किए गए हों कि निदेशक कैसे और किस रीति में कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और चूंकि अभियुक्त-अपीलार्थी न तो

पृष्ठ संख्या

कंपनी के प्रबंध निदेशक और न ही पूर्णकालिक निदेशक हैं, वहां धारा 34 की अपेक्षाओं की पूर्णतया कमी होने के कारण उनके विरुद्ध आदेशिका जारी करने के आदेश को अभिखंडित करना उचित होगा ।

ललनकुमार सिंह और अन्य बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 19

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 227 [सपठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(घ) और 13(2)] – उन्मोचन के लिए आवेदन – अपीलार्थी लोक सेवक के विरुद्ध आय के ज्ञात स्रोतों के अननुपात में संपत्ति इकट्ठा करने का अभिकथन करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – अपीलार्थी द्वारा जांच में उसकी आय और व्यय की संगणना करने में स्पष्ट गलतियां होने का अभिकथन करते हुए विशेष न्यायाधीश के समक्ष उन्मोचन के लिए आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन को सरसरी तौर पर खारिज किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण आवेदन को खारिज किया जाना – अपील – उन्मोचन के लिए आवेदन का न्यायनिर्णयन करने के लिए अपेक्षित आरंभिक संवीक्षा की अवसीमा यह विचार करने तक है कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं और जहां अभिलेख पर सामग्री की साधारण और आवश्यक जांच से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता हो कि अभियोजन पक्ष द्वारा कोई प्रथमदृष्ट्या मामला नहीं बनाया गया है, वहां अभियुक्त उन्मोचन का हकदार होगा ।

कंचन कुमार बनाम **बिहार राज्य** 1

पृष्ठ संख्या

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 149 और 302 – विधिविरुद्ध जमाव – हत्या – मृतक की हत्या कारित करने में विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य के रूप में अपीलार्थी-अभियुक्त पर कोई स्पष्ट कृत्य आरोपित न किया जाना – दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य के रूप में घटनास्थल पर किसी अभियुक्त की मौजूदगी को सिद्ध किया गया हो और विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों द्वारा सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करते हुए मृतक की हत्या कारित की गई हो, वहां आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत के आधार पर उसकी सहापराधिता को सिद्ध करने के लिए पृथक् रूप से उसके द्वारा किए गए स्पष्ट कृत्य को सिद्ध करना अपेक्षित नहीं है और विधिविरुद्ध जमाव में सक्रिय मानसिकता के साथ सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसकी मौजूदगी उसे दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त है ।

गुरमेल सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** 90

– धारा 302/149 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 394] – विधिविरुद्ध जमाव – हत्या – दस अभियुक्तों द्वारा विधिविरुद्ध जमाव करके मृतक की हत्या किया जाना – अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील लंबित रहने के दौरान आठ सिद्धदोष व्यक्तियों की मृत्यु हो जाना – उनके विरुद्ध अपील का उपशमन हो जाना – सिद्धदोष व्यक्तियों की संख्या पांच से कम हो

पृष्ठ संख्या

जाने का प्रभाव और असर – जहां अपील के लंबित रहने के दौरान कुछ अभियुक्तों की मृत्यु हो जाने से उनके संबंध में अपील का उपशमन हो जाने पर अभियुक्तों की संख्या पांच से कम हो जाए और जहां कुछ अभियुक्तों की दोषमुक्ति के कारण यह संख्या पांच से कम हो जाए, ये दोनों स्थितियां पूरी तरह से अलग और सुभिन्न हैं और पूर्ववर्ती स्थिति में आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के लिए धारा 149 के उपबंध लागू होंगे ।

गुरमेल सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** 90

– धारा 302/149 – विधिविरुद्ध जमाव – हत्या – दस अभियुक्तों द्वारा विधिविरुद्ध जमाव करके मृतक की हत्या किया जाना – अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील – दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि को धारा 304/149 में परिवर्तित किए जाने का अभिवाक् किया जाना – जहां विधिविरुद्ध जमाव में किसी अभियुक्त की सदस्यता को सिद्ध और साबित किया गया हो और जमाव के सदस्य अग्न्यायुधों से लैस हों और मृतक को दो गोलियां लगने के पश्चात् भी उस पर आक्रमण किया गया हो और अन्य साक्षियों को भी क्षतियां कारित की गई हों, वहां यह नहीं कहा जा सकता है कि उनका सामान्य उद्देश्य मृतक की मृत्यु कारित करना नहीं अपितु घोर क्षति कारित करना था, अत: अभियुक्त-अपीलार्थी की प्रतिनिधिक दायित्व के आधार पर धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

गुरमेल सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** 90

पृष्ठ संख्या

– धारा 302 और 34 – हत्या – प्रत्यर्थी-अभियुक्तों द्वारा मृतक की हत्या किया जाना – एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – अभियुक्तों की ओर से अपराध कारित करने में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी न होने और अभियोजन पक्ष द्वारा शिकायतकर्ता की परीक्षा न कराए जाने का अभिवाक् किया जाना – अभियुक्तों द्वारा की गई अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां यदि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में प्रत्यक्ष साक्ष्य हो और वह विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया जाए तो ऐसे एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है और अपराध कारित करने में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी न होना, अभियोजन पक्ष द्वारा शिकायतकर्ता की परीक्षा न कराया जाना अभियुक्तों को दोषमुक्त करने का आधार नहीं हो सकता है, इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा की गई अभियुक्तों की दोषमुक्ति असंधार्य है और उसे अपास्त करना उचित होगा ।

राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक बनाम **लाली** उर्फ **मणिकंदन और एक अन्य, इत्यादि** 76

– धारा 306, 498क और 107 – आत्महत्या का दुष्प्रेरण और स्त्री के साथ पति या पति के नातेदारों द्वारा क्रूरता – अपीलार्थियों द्वारा अभिकथित रूप से मृतका के साथ अधिक दहेज की मांग करके और एक बालक के जन्म के पश्चात् एक अन्य बालक के लिए गर्भ धारण करने को लेकर क्रूरता किया जाना और आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया जाना – विचारण

पृष्ठ संख्या

न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया जाना और उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – संधार्यता – किसी व्यक्ति को धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए उसकी स्पष्ट आपराधिक मन:स्थिति का होना आवश्यक है और उसके द्वारा मृतक व्यक्ति की मृत्यु से ठीक पूर्व ऐसा प्रत्यक्ष या स्पष्ट कृत्य किया गया होना चाहिए जिसके कारण उसे कोई अन्य विकल्प दिखाई न देते हुए आत्महत्या करनी पड़ी हो और जहां अभियुक्तों और मृतका के परिवार के बीच संबंध विवाह के नौ वर्षों के दौरान सौहार्दपूर्ण रहे हों और मृतका को यातना देने या तंग करने या दहेज की कोई मांग करने का कोई साक्ष्य न हो और मृतका या उसके परिवार वालों द्वारा कभी कोई शिकायत तक न की गई हो, मृतका बाइपोलर डिसआर्डर और अवसाद से ग्रस्त हो और अभियुक्त-पति द्वारा मनोचिकित्सक के पास उसका उपचार कराया गया हो, वहां अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध मृतका को आत्महत्या के लिए उकसाने और दहेज की मांग के लिए क्रूरता या तंग करने का कोई सटीक और विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत न करने और उनके विरुद्ध मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित न करने के कारण उन्हें दोषमुक्त करना उचित होगा ।

मरिनो एंटो ब्रुनो और एक अन्य बनाम **पुलिस निरीक्षक** 44

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 32(1) [सपठित दंड संहिता, 1860 की धारा 302, 341, 376 और 448] – मृत्युकालिक कथन – अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा मृतका के साथ बलात्संग किया

जाना और उस पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगाया जाना – दाह क्षतियों के कारण कुछ समय के पश्चात् विपदग्रस्त की मृत्यु हो जाना – विपदग्रस्त द्वारा पुलिस के समक्ष किए गए कथन को मृत्युकालिक कथन मानकर विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा विपदग्रस्त के कथन को मृत्युकालिक कथन के रूप में ग्राह्य न होने के आधार पर अभियुक्त-प्रत्यर्थी को दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां मृतका की मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में यह निष्कर्ष निकाला गया हो कि उसकी मृत्यु उसे पहुंची दाह क्षतियों के परिणामस्वरूप रक्तविषायन (सेप्टिसेमिया) से हुई थी और मृतका द्वारा अपने कथन में स्पष्ट रूप से यह कहा गया हो कि अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा उसके साथ बलात्संग किया गया था और फिर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा दी गई थी, उसके इस कथन से धारा 32(1) की शर्तों का समाधान हो जाता है क्योंकि यह कथन मृतका की मृत्यु तथा उस संव्यवहार की परिस्थितियों से संबंधित होने के कारण जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, स्वयमेव एक सुसंगत तथ्य है और एक मृत्युकालिक कथन है, इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने के कारण उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हुए अभियुक्त-प्रत्यर्थी को दोषसिद्ध करना न्यायोचित होगा ।

झारखंड राज्य बनाम **शैलेन्द्र कुमार राय** उर्फ **पांडव राय** 114

– धारा 32(1) – मृत्युकालिक कथन – ग्राह्यता और

पृष्ठ संख्या

साक्ष्यिक महत्व – संपुष्टि की आवश्यकता – किसी मृत्युकालिक कथन को यदि संभव हो तो आदर्शत: किसी मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जाना चाहिए, तो भी किसी मृत्युकालिक कथन को केवल इस आधार पर अग्राह्य नहीं कहा जा सकता कि ऐसा कथन किसी पुलिस कार्मिक द्वारा अभिलिखित किया गया था अपितु पुलिस द्वारा अभिलिखित किया गया ऐसा कथन ग्राह्य है या नहीं, इसका विनिश्चय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् किया जाना चाहिए और यदि मृत्युकालिक कथन अन्यथा संदेहास्पद न हो तो ऐसा कोई नियम नहीं है कि इसकी संपुष्टि चिकित्सा या अन्य साक्ष्य द्वारा किया जाना आज्ञापक हो ।

झारखंड राज्य बनाम **शैलेन्द्र कुमार राय** उर्फ **पांडव राय** 114

[2022] 4 उम. नि. प. 1

कंचन कुमार

बनाम

बिहार राज्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 1562]

14 सितंबर, 2022

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति पी. एस. नरसिम्हा

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 227 [सपठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(घ) और 13(2)] – उन्मोचन के लिए आवेदन – अपीलार्थी लोक सेवक के विरुद्ध आय के ज्ञात स्रोतों के अननुपात में संपत्ति इकट्ठा करने का अभिकथन करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – अपीलार्थी द्वारा जांच में उसकी आय और व्यय की संगणना करने में स्पष्ट गलतियां होने का अभिकथन करते हुए विशेष न्यायाधीश के समक्ष उन्मोचन के लिए आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन को सरसरी तौर पर खारिज किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण आवेदन को खारिज किया जाना – अपील – उन्मोचन के लिए आवेदन का न्यायनिर्णयन करने के लिए अपेक्षित आरंभिक संवीक्षा की अवसीमा यह विचार करने तक है कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं और जहां अभिलेख पर सामग्री की साधारण और आवश्यक जांच से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता हो कि अभियोजन पक्ष द्वारा कोई प्रथमदृष्ट्या मामला नहीं बनाया गया है, वहां अभियुक्त उन्मोचन का हकदार होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी ने तारीख 19 जुलाई, 1974 को बिहार राज्य वित्त निगम में सहायक महाप्रबंधक की हैसियत में पद ग्रहण किया था । तेरह वर्ष की अवधि के पश्चात् वर्ष

1987 में अपीलार्थी के विरुद्ध बिहार में अभिकथित रूप से तीन मकान और दो भूखंड खरीदने के लिए एक शिकायत फाइल की गई थी, जो शिकायतकर्ता के अनुसार अपीलार्थी की आय के ज्ञात स्रोतों के अननुपात में थे । इस शिकायत की जांच की गई और विस्तृत अन्वेषण के पश्चात् अभिकथन मिथ्या पाए गए । तथापि, अभिकथन में कोई गुणागुण न पाने के बावजूद अन्वेषण लंबित रखा गया । अपीलार्थी ने वर्ष 1996 में तेल और प्राकृतिक गैस आयोग में प्रतिनियुक्ति आधार पर, बिहार राज्य वित्त निगम में अपना धारणाधिकार रखते हुए, उप महाप्रबंधक के रूप में पद ग्रहण किया । तेल और प्राकृतिक गैस आयोग में पद ग्रहण करने के चार वर्ष पश्चात् उसके विरुद्ध तारीख 21 फरवरी, 2000 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन उसी अभिकथन के आधार पर एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । अपीलार्थी ने तारीख 18 अप्रैल, 2002 को पुलिस महानिदेशक (सतर्कता), पटना को एक पत्र यह शिकायत करते हुए लिखा कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में की गई संगणनाओं में उसकी आय का अवमूल्यांकन और उसकी आस्तियों का अधिक मूल्यांकन किया गया है और इस प्रकार उसके व्यय का एक मिथ्या और बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया गया है । अंततः, तारीख 11 सितंबर, 2007 को अर्थात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण के लगभग सात वर्ष पश्चात्, और वास्तव में इसी अभिकथन के आधार पर की गई शिकायत को प्राधिकारियों द्वारा मिथ्या पाए जाने के बीस वर्षों के पश्चात् एक आरोप पत्र फाइल किया गया । सुसंगत प्रक्रम पर, अपीलार्थी द्वारा विशेष न्यायाधीश (सतर्कता), पटना के न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन उन्मोचन के लिए यह अभिकथन करते हुए आवेदन किया कि आय और व्यय की संगणना करने में स्पष्ट गलतियां की गई हैं । तथापि, न्यायालय ने प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों और दिए गए तर्कों का विश्लेषण और परीक्षा किए बिना इस आवेदन को सरसरी तौर पर खारिज कर दिया । उन्मोचन के लिए आवेदन की खारिजी से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में समावेदन किया । उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण आवेदन को मात्र यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि यदि आवेदक की दलीलों पर विचार किया जाए तो एक निरुद्देश्य जांच को लागू करते हुए उचित

सत्यापन कराने की आवश्यकता है और ऐसा केवल विचारण के दौरान अनुज्ञेय हो सकता है । उच्च न्यायालय के पूर्वोक्त आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227 के अधीन आवेदन का न्यायनिर्णयन करने के लिए अपेक्षित आरंभिक संवीक्षा की अवसीमा मामले की व्यापक अधिसंभाव्यताओं और अभिलेख पर की सामग्री के संपूर्ण प्रभाव, जिसमें मामले में प्रतीत होने वाली अन्य त्रुटियों की परीक्षा भी सम्मिलित है, पर विचार करने तक है । पहला आक्षेप जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी के बैंक खाते में अतिशेष रकम के रूप में अभिलिखित 55,000/- रुपए की रकम को सम्मिलित करने के संबंध में है और तद्नुसार इसकी संगणना आरोप पत्र में व्यय के रूप में की गई है । तथापि, अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई बैंक पास-बुक, जो अन्वेषण अधिकारी और विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के पास उपलब्ध थी, में जांच अवधि के दौरान स्पष्ट रूप से केवल 11,998/- रुपए अतिशेष अभिलिखित थे । अभियोजन पक्ष द्वारा आंकड़ों में इस अंतर को स्पष्ट नहीं किया गया था । तद्नुसार, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) और उच्च न्यायालय अभियोजन पक्ष के साक्ष्य में ऐसी सरल और स्पष्ट असंगति का समाधान करने में असफल रहे थे । इस न्यायालय की यह राय है कि जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी की बैंक पास-बुक में अतिशेष रकम के रूप में अभिलिखित केवल 11,998/- रुपए की रकम इस शीर्ष के अधीन व्यय के रूप में विधिमान्य रूप से ग्राह्य है । दूसरा आक्षेप बिहार राज्य वित्त निगम से लिए गए ऋण के प्रतिसंदाय के निमित्त व्यय के रूप में 53,467/- रुपए की रकम को सम्मिलित करने से संबंधित है । तथापि, ऋण की किस्तों के निमित्त प्रतिसंदाय की गई रकम की पहले ही अपीलार्थी के कुल वेतन से कटौती की गई थी और जांच की अवधि के दौरान कटौती किया गया यह आंकड़ा अपीलार्थी के पास कुल प्रयोज्य आय के रूप में अभिलिखित किया गया था । अत: ऋण के प्रतिसंदाय की पुन: एक बार व्यय के रूप में अलग से संगणना नहीं की जा सकती है । यह एक स्पष्ट गलती है । विशेष न्यायाधीश

(सतर्कता) तथा उच्च न्यायालय ने इस आक्षेप पर विचार इस आधार पर नहीं किया था कि उन्मोचन के प्रक्रम पर निरुद्देश्य जांच अनुज्ञेय नहीं है । तीसरा आक्षेप वर्ष 1974 से 1988 की जांच अवधि के बारह वर्ष पश्चात् तारीख 21 फरवरी, 2000 को अपीलार्थी के मकान में ली गई तलाशी के दौरान पाई गई वस्तुओं के मूल्य के रूप में 1,58,562/- रुपए को सम्मिलित करने के संबंध में है । यह उपदर्शित करने के लिए, यहां तक कि प्रथमदृष्ट्या ही, कुछ भी नहीं है कि वर्ष 2000 में तलाशी के दौरान पाई गई ये वस्तुएं जांच अवधि के दौरान अर्जित की गई थीं । इन वस्तुओं को जांच अवधि के दौरान अर्जित किए जाने के रूप में जोड़ने के लिए किसी सामग्री के अभाव में इनके मूल्य को व्यय में सम्मिलित करना अनुज्ञेय नहीं है । अत: इस न्यायालय की यह राय है कि व्यय की सूची में इस रकम को सम्मिलित करने के बारे में अपीलार्थी का आक्षेप पूरी तरह न्यायोचित है । दुर्भाग्यवश, इस आक्षेप पर भी, जिसके लिए अभिलेख पर सामग्री की अधिक संवीक्षा करना आवश्यक नहीं था, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) या उच्च न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया था । इसमें ऊपर चर्चा किए गए व्यय के तीन शीर्षों को जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी के कुल अभिकथित व्यय से अवश्य अपवर्जित किया जाना चाहिए । प्रथमत:, बैंक पास-बुक में प्रतिबंधित अपीलार्थी की वास्तविक अतिशेष रकम अर्थात् 11,998/- रुपए को 55,000/- रुपए की तात्पर्यित अतिशेष रकम के विरुद्ध अवश्य हिसाब में लेना चाहिए । इसके अतिरिक्त, दूसरी ओर तीसरी रकम को, जैसा कि ऊपर उपदर्शित किया गया है, आरोप पत्र में वर्णित अपीलार्थी के कुल व्यय से अवश्य अपवर्जित किया जाना चाहिए । तद्नुसार, कुल व्यय केवल 2,69,355/- रुपए आता है, न कि 5,24,386/- रुपए, जो उन कतिपय गलतियों पर आधारित है जिनको हमने इसमें ऊपर उपदर्शित किया है । यही वह 2,69,355/- रुपए का व्यय है जिसकी तुलना जांच अवधि के दौरान 3,01,561/- रुपए की आय के साथ की जानी चाहिए । इन तथ्यों से स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा कोई प्रथमदृष्ट्या मामला सिद्ध नहीं किया गया है और इसलिए अपीलार्थी उन्मोचन का हकदार था । जो निष्कर्ष इस न्यायालय ने निकाले हैं, वे

हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री पर आधारित हैं और जो मामले के अभिलेख का भाग है । यही अभिलेख उस समय विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के पास उपलब्ध था जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन आवेदन पर विचार किया गया था । इसके बावजूद, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) ने उन्मोचन आवेदन को इस साधारण आधार पर खारिज कर दिया कि उन्मोचन के प्रक्रम पर एक निरुद्देश्य जांच करना अनुज्ञात नहीं है । इस न्यायालय ने जो किया है वह एक निरुद्देश्य जांच नहीं है, अपितु उन्मोचन के लिए आवेदन का उचित न्यायनिर्णयन करने के लिए एक साधारण और आवश्यक जांच है । विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए इसी प्रकार की जांच करने के लिए आबद्ध था कि अपीलार्थी का विचारण करने के लिए एक प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं । दुर्भाग्यवश उच्च न्यायालय ने वही गलती की जो विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) ने की थी । उपरोक्त विश्लेषण के अतिरिक्त, यह न्यायालय अत्यधिक खेद के साथ यह उल्लेख करना चाहेगा कि वर्ष 1974 और 1988 के बीच की अवधि में अपीलार्थी की अननुपातिक आय से संबंधित अभिकथन उक्त अवधि के बारह वर्ष समाप्त होने के पश्चात् फाइल की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किया गया था । आरोप पत्र प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण के सात वर्ष पश्चात् फाइल किया गया था । उन्मोचन के लिए आवेदन तारीख 28 मार्च, 2016 को, आरोप पत्र फाइल करने के लगभग एक दशक पश्चात् खारिज किया गया था । उच्च न्यायालय द्वारा इस खारिजी की अभिपुष्टि उसके सात माह पश्चात् अर्थात् तारीख 5 अक्तूबर, 2016 को की गई थी । अंततः, और अधिक दुर्भाग्य की बात यह है कि वर्तमान विशेष इजाजत याचिका इस न्यायालय के समक्ष पिछले छह वर्ष से लंबित रही है । इसी बीच, अपीलार्थी ने वर्ष 2010 में सेवा से अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर ली किंतु उसके पास मामले का प्रतिवाद करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था । वह अब 72 वर्ष का है । इसमें ऊपर यथा उपदर्शित अवैधता के अतिरिक्त, अभियोजन को जारी रखना भी अन्यायपूर्ण होगा । (पैरा 13, 16.2, 16.3, 16.4, 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2022] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 913 :
गुलाम हसन बेग बनाम **मोहम्मद मकबूल माग्रे** ; 9

[2019] (2019) 16 एस. सी. सी. 547 :
दीपकभाई जगदीशचंद्र पटेल बनाम **गुजरात राज्य** ; 15

[2010] (2010) 9 एस. सी. सी. 368 :
सज्जन कुमार बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ; 14

[1979] [1979] 4 उम. नि. प. 649 =
(1979) 3 एस. सी. सी. 4 :
भारत संघ बनाम **प्रफुल्ल कुमार सामल और एक अन्य** । 9

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 1562.

2016 के दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 23031 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 5 अक्तूबर, 2016 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री सुनील कुमार, ज्येष्ठ अधिवक्ता, हिमांशु शेखर, पार्थ शेखर और अवनीश सिन्हा

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री अभिनव मुकर्जी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पी. एस. नरसिम्हा ने दिया ।

न्या. नरसिम्हा – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "दंड प्रक्रिया संहिता" कहा गया है) की धारा 227 के अधीन फाइल किए गए उन्मोचन के लिए आवेदन को विचारण न्यायालय [2016 के विशेष मामला सं. 9 में विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) द्वारा तारीख 28 मार्च, 2016 और उच्च न्यायालय 2016 के

दांडिक प्रकीर्ण सं. 23031 में पटना उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 5 अक्तूबर, 2016] द्वारा समवर्ती रूप से खारिज करने के विरुद्ध फाइल की गई है ।

3. **इस अपील को फाइल करने से संबंधित तथ्य** – अपीलार्थी ने तारीख 19 जुलाई, 1974 को बिहार राज्य वित्त निगम में सहायक महाप्रबंधक की हैसियत में पद ग्रहण किया था । तेरह वर्ष की अवधि के पश्चात् वर्ष 1987 में अपीलार्थी के विरुद्ध बिहार में अभिकथित रूप से तीन मकान और दो भूखंड खरीदने के लिए एक शिकायत फाइल की गई थी, जो शिकायतकर्ता के अनुसार अपीलार्थी की आय के ज्ञात स्रोतों के अननुपात में थे । इस शिकायत की जांच की गई थी और विस्तृत अन्वेषण के पश्चात् अभिकथन मिथ्या पाए गए थे । पटना में एक आवासीय मकान के सिवाय, जिसे अपीलार्थी ने तारीख 29 अगस्त, 1988 को बिहार राज्य वित्त निगम से ऋण की सहायता से 2,26,500/- रुपए में खरीदा था और अपीलार्थी के स्वामित्व में किसी अन्य आस्ति का पता नहीं चल सका था । तथापि, अभिकथन में कोई गुणागुण न पाने के बावजूद अन्वेषण लंबित रखा गया था ।

4. इसी बीच, समय गुजरता गया और वर्ष 1996 में अपीलार्थी ने तेल और प्राकृतिक गैस आयोग में प्रतिनियुक्ति आधार पर, बिहार राज्य वित्त निगम में अपना धारणाधिकार रखते हुए, उप महाप्रबंधक के रूप में पद ग्रहण किया । तेल और प्राकृतिक गैस आयोग में पद ग्रहण करने के चार वर्ष पश्चात् उसके विरुद्ध तारीख 21 फरवरी, 2000 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम" कहा गया है) की धारा 13(1)(घ) और 13(2) के अधीन उसी अभिकथन के आधार पर एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई कि उसके पास उसकी आय के ज्ञात स्रोतों के अननुपात में आस्तियां हैं । ये अभिकथित आस्तियां तात्पर्यित रूप से उसके बिहार राज्य वित्त निगम में कार्यकाल के दौरान अर्जित की गई थीं और परिणामत: प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में जांच की अवधि को उसके द्वारा बिहार राज्य वित्त निगम में पद ग्रहण करने की तारीख अर्थात् 19 जुलाई, 1974 से उसके द्वारा खरीदे गए आवासीय मकान के

रजिस्ट्रीकरण की तारीख अर्थात् 29 अगस्त, 1988 को विचार में लिया गया था । अपीलार्थी ने तारीख 18 अप्रैल, 2002 को पुलिस महानिदेशक (सतर्कता), पटना को एक पत्र यह शिकायत करते हुए लिखा कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में की गई संगणनाओं में उसकी आय का अवमूल्यांकन और उसकी आस्तियों का अधिक मूल्यांकन किया गया है और इस प्रकार उसके व्यय का एक मिथ्या और बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया गया है ।

5. अंततः, तारीख 11 सितंबर, 2007 को अर्थात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण के लगभग सात वर्ष पश्चात्, और वास्तव में इसी अभिकथन के आधार पर की गई शिकायत को प्राधिकारियों द्वारा मिथ्या पाए जाने के बीस वर्षों के पश्चात्, एक आरोप पत्र फाइल किया गया । चाहे जो भी स्थिति हो, अपीलार्थी के विरुद्ध फाइल किए गए आरोप पत्र से यह उपदर्शित होता है कि उसने जांच की अवधि के दौरान 3,01,561/- रुपए की कुल आय अर्जित की थी और 5,24,386/- रुपए का व्यय उपगत किया था । इसे दृष्टिगत करते हुए, अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप उसकी ज्ञात आय के स्रोत से 2,22,825/- रुपए अधिक होने के बारे में था । आरोप पत्र में उसकी आय के दो घटक उपदर्शित होते हैं – (i) 1,13,081/- रुपए की बचत (उसके वेतन का एक तिहाई), और (ii) बिहार राज्य वित्त निगम से लिया गया 1,88,480/- रुपए का गृह और कार ऋण । दूसरी ओर, आरोप पत्र में उसके व्यय के छह घटक सम्मिलित हैं – (i) उसके मकान के निर्माण के निमित्त 2,26,500/- रुपए का संदाय, (ii) जांच की अवधि के दौरान 24,800/- रुपए का साधारण व्यय, (iii) बैंक में जमा 55,000/- रुपए की रकम, (iv) 53,467/- रुपए के ऋण का प्रतिसंदाय, (v) 6,057/- रुपए एलआईसी में जमा, और (vi) तारीख 21 फरवरी, 2000 को ली गई तलाशी के दौरान पाई गई 1,58,562/- रुपए के प्राक्कलित मूल्य की वस्तुएं ।

6. सुसंगत प्रक्रम पर, अपीलार्थी ने विशेष न्यायाधीश (सतर्कता), पटना के न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की “धारा 239” (जो धारा 227 के अधीन होना चाहिए[1]) के अधीन उन्मोचन के लिए यह

[1] यद्यपि अपीलार्थी ने यह कहा है कि आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन है, क्योंकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन नियुक्त विशेष न्यायाधीश

अभिकथन करते हुए आवेदन किया कि संगणना में स्पष्ट गलतियां हैं । तथापि, न्यायालय ने प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों और दिए गए तर्कों का विश्लेषण और परीक्षा किए बिना इस आवेदन को अपने तारीख 28 मार्च, 2016 के आदेश द्वारा सरसरी तौर पर खारिज कर दिया । न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि :–

> "अभिलेख का परिशीलन किया और मैंने पाया कि इस मामले में अभियुक्त के विरुद्ध पर्याप्त सामग्री है, कम से कम अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए इस प्रक्रम पर प्रथमदृष्ट्या पर्याप्त सामग्री है, जिसके विरुद्ध यह अभिकथन किया गया है कि उसने जांच अवधि के दौरान धन इकट्ठा किया था । यद्यपि आवेदक की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा कतिपय स्पष्टीकरण दिए गए हैं किंतु इन पर विचारण के दौरान उस समय विचार और मूल्यांकन किया जाना प्रतीत होता है जब अभियुक्त-आवेदक की पत्नी के पास उसके मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों को प्रस्तुत करके उसकी निर्दोषिता को रोकने का अवसर होगा । फिलहाल मैं अभियुक्त द्वारा अपने उन्मोचन के आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण से संतुष्ट नहीं हूं ।
>
> पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए अभियुक्त-आवेदक अर्थात् कंचन कुमार का आरोप संबंधी आवेदन तद्द्वारा नामंजूर किया जाता है । इसे आरोप विरचित करने के लिए तारीख 16 अप्रैल, 2022 को पेश किया जाए । अभियुक्त को निदेश दिया जाता है कि वह इस न्यायालय द्वारा आरोप विरचित करने के लिए निश्चित की गई तारीख को व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहे ।"

7. उन्मोचन के लिए आवेदन की खारिजी से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में समावेदन किया । उच्च न्यायालय

सेशन न्यायालय समझे जाते हैं, इसलिए उन्मोचन आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन फाइल किया जाना चाहिए न कि इसकी धारा 239 के अधीन । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री सुनील कुमार, ज्येष्ठ अधिवक्ता ने अपनी दलीलें देते हुए विधि की इस स्थिति को स्पष्ट किया ।

घटनाओं के कालक्रम को दोहराने के पश्चात् कई निर्णयों को उद्धृत करने के लिए अग्रसर हुआ और अंततः पुनरीक्षण आवेदन को मात्र यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि :–

> "15. पूर्वोक्त परिस्थितियों में, यदि आवेदक की ओर से दी गई दलीलों पर, तर्क के लिए विचार किया जाए तो निरुद्देश्य जांच को लागू करते हुए उचित सत्यापन कराने की आवश्यकता है जो केवल विचारण के दौरान अनुज्ञेय हो सकती है ।
>
> 16. आवेदक की ओर से मूल्यांकन के संबंध में अत्यधिक बल दिया गया है । पुनरावृत्ति करते हुए, आवेदक की दलील यह है कि चूंकि छापा तारीख 21 फरवरी, 2000 को मारा गया था, इसलिए उसके कारण सतर्कता विभाग द्वारा इस प्रकार अभिगृहीत की गई वस्तु के सामने जो मूल्यांकन दर्शाया गया है उस पर बरामदगी की तारीख के अनुकूल विचार किया जाना चाहिए । यह तर्क इस तथ्य की पृष्ठभूमि में भ्रामक हो जाता है कि मामला डायरी से यह स्पष्ट है कि मूल्यांकन का केवल प्राक्कलन किया गया है । ऐसी प्रथमदृष्ट्या सामग्री का पूर्ण अभाव है जिसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि उस क्षण इस प्रकार किया गया मूल्यांकन अभिग्रहण की अभिकथित तारीख को प्रचलित दर पर था । इसके अतिरिक्त, इस मुद्दे पर असलियत को अभिनिश्चित करने के लिए पुनः निरुद्देश्य जांच लागू करनी होगी जिसे वर्तमान प्रक्रम पर निषेधात्मक पाया गया है ।
>
> 17. परिणामतः, प्रस्तुत आवेदन गुणागुण रहित पाया गया है और तद्नुसार नामंजूर किया जाता है ।"

8. पूर्वोक्त आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी ने इस न्यायालय में समावेदन किया है ।

9. **पक्षकारों की दलीलें** – विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री सुनील कुमार ने यह दलील दी कि संगणना करने में गलती और कतिपय मदों को गलत रूप से सम्मिलित करने से संबंधित मूलभूत आक्षेप अपीलार्थी के उन्मोचन हेतु विचारण न्यायालय के लिए पर्याप्त था । उन्होंने सीधी-

सीधी दलील देते हुए हमारा ध्यान कतिपय स्पष्ट गलतियों की ओर दिलाया जो विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के समक्ष मामले के अभिलेख से स्पष्ट थीं । उन्होंने अपनी दलीलों के समर्थन में **भारत संघ** बनाम **प्रफुल्ल कुमार सामल और एक अन्य**[1] और **गुलाम हसन बेग** बनाम **मोहम्मद मकबूल माग्रे**[2] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों को भी निर्दिष्ट किया ।

10. प्रत्यर्थी की ओर से काउंसेल श्री अभिनव मुकर्जी, अभिलेख अधिवक्ता ने यह दलील दी कि विचारण न्यायालय ने उन्मोचन आवेदन को खारिज करके ठीक किया था । उन्होंने दलील दी कि न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन आवेदन का न्यायनिर्णयन करते समय कोई निरुद्देश्य जांच नहीं कर सकते हैं ।

11. **विवाद्यक** – विचार के लिए उद्भूत संक्षिप्त प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी उसके विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन आरंभ की गई कार्यवाहियों से उन्मोचित किए जाने का हकदार है ।

12. **विधिक उपबंध और पूर्व-निर्णय** – उन्मोचन से संबंधित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 निम्न प्रकार से है :–

> "227. **उन्मोचन –** यदि मामले के अभिलेख और उसके साथ दिए गए दस्तावेजों पर विचार कर लेने पर, और इस निमित्त अभियुक्त और अभियोजन के निवेदन की सुनवाई कर लेने के पश्चात् न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है तो वह अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा और ऐसा करने के अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा ।"

13. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन आवेदन का न्यायनिर्णयन करने के लिए अपेक्षित आरंभिक संवीक्षा की अवसीमा मामले की व्यापक अधिसंभाव्यताओं और अभिलेख पर की सामग्री के संपूर्ण प्रभाव, जिसमें मामले में प्रतीत होने वाली अन्य त्रुटियों की परीक्षा

---

[1] [1979] 4 उम. नि. प. 649 = (1979) 3 एस. सी. सी. 4.

[2] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 913.

भी सम्मिलित है, पर विचार करने तक है । **प्रफुल्ल कुमार सामल** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह उल्लेख किया गया था कि :–

"10. इस प्रकार, उपरोक्त नजीरों पर विचार करने पर निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित होते हैं –

(1) संहिता की धारा 227 के अधीन आरोप विरचित करने विषयक प्रश्न पर विचार करते समय न्यायाधीश को इस परिसीमित प्रयोजन के लिए कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं, साक्ष्य की छानबीन करने और उसका मूल्यांकन करने की असंदिग्ध शक्ति प्राप्त है ।

(2) जहां न्यायालय के समक्ष पेश की गई सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध ऐसा कोई घोर संदेह प्रकट करती है जिसे उचित रूप से स्पष्ट न किया गया हो, वहां न्यायालय के लिए आरोप विरचित करना और विचारण के लिए अग्रसर होना पूर्णतया न्यायोचित होगा ।

(3) प्रथमदृष्ट्या मामले का अवधारण करने की कसौटी स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगी । कोई ऐसा सिद्धांत अधिकथित करना कठिन है जो कि सामान्य रूप से लागू होता हो । तथापि, मोटे तौर पर यदि दो मत समान रूप से संभव हों और न्यायाधीश का यह समाधान हो जाए कि उसके समक्ष पेश किया गया साक्ष्य यद्यपि अभियुक्त के विरुद्ध कुछ संदेह उत्पन्न करता है किंतु घोर संदेह उत्पन्न नहीं करता है तो उसके लिए अभियुक्त को उन्मोचित करना पूर्णतया उचित होगा ।

(4) संहिता की धारा 227 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते समय न्यायाधीश, जो कि वर्तमान संहिता के अधीन वरिष्ठ और अनुभवी न्यायालय है, अभियोजन पक्ष के मात्र संदेशवाहक के रूप में कार्य नहीं कर सकता है अपितु उसे मामले की व्यापक अधिसंभाव्यताओं, न्यायालय के समक्ष

पेश किए गए साक्ष्य और दस्तावेजों के संपूर्ण प्रभाव तथा मामले में प्रकट होने वाली किन्हीं आधारभूत त्रुटियों पर विचार करना होता है । तथापि, इससे यह अभिप्रेत नहीं है कि न्यायाधीश को मामले के पक्ष-विपक्ष के बारे में कोई निरुद्देश्य जांच करनी चाहिए और साक्ष्य का इस प्रकार मूल्यांकन करना चाहिए मानो वह विचारण कर रहा हो ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

14. **सज्जन कुमार** बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रत्येक दस्तावेज को उसके प्रत्यक्ष महत्व के आधार पर स्वीकार करने के विरुद्ध चेतावनी दी थी और यह उल्लेख किया था कि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की छानबीन करना महत्वपूर्ण है । यह मत व्यक्त किया गया कि :–

"21. संहिता की धारा 227 और 228 की व्याप्ति के बारे में नजीरों पर विचार करने पर निम्नलिखित सिद्धांत प्रकट होते हैं –

.....

(v) आरोप विरचित करने के समय पर अभिलेख पर सामग्री के साक्ष्यिक महत्व पर विचार नहीं किया जा सकता किंतु कोई आरोप विरचित करने से पूर्व न्यायालय को अभिलेख पर की सामग्री पर अवश्य अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करना चाहिए और अपना अवश्य यह समाधान करना चाहिए कि अभियुक्त द्वारा अपराध का कारित करना संभव था ।

(vi) धारा 227 और 228 के प्रक्रम पर न्यायालय से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अभिलेख पर की सामग्री और दस्तावेजों का यह पता लगाने की दृष्टि से मूल्यांकन करे कि क्या उससे प्रकट होने वाले तथ्यों से उनके प्रत्यक्ष महत्व पर

[1] (2010) 9 एस. सी. सी. 368.

विचार करने पर अभिकथित अपराध का गठन करने वाले सभी संघटकों का विद्यमान होना प्रकट होता है । इस सीमित प्रयोजन के लिए, साक्ष्य की छानबीन की जाए क्योंकि उस आरंभिक प्रक्रम पर ही उन सभी बातों को वेदवाक्य के रूप में स्वीकार करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है जो अभियोजन पक्ष कहता है । भले ही, यह बात सामान्य बोध या मामले की व्यापक अधिसंभाव्यताओं के विपरीत हो .....।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

15. **दीपकभाई जगदीशचंद्र पटेल** बनाम **गुजरात राज्य**[1] वाले मामले में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन उन्मोचन करने के सिद्धांतों का सार प्रस्तुत करते हुए इस न्यायालय ने यह दोहराया :–

"23. इस न्यायालय द्वारा जो सिद्धांत अधिकथित किए गए हैं उनके अनुसार आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर न्यायालय से जो कार्य करने की प्रत्याशा की जाती है वह यह है कि वह एक संदेशवाहक के रूप में कार्य नहीं कर सकता । न्यायालय को अवश्य उसके समक्ष सामग्री की वास्तव में छानबीन करनी चाहिए । छानबीन की जाने वाली सामग्री वह सामग्री होगी जो अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत की गई है और अवलंब लिया गया है । यह छानबीन अतिसावधान होकर नहीं की जाती है और इसका अर्थ यह है कि न्यायालय संपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करने के पश्चात् बहस की सुनवाई करते हुए एक परिपूर्ण विचारण के पश्चात् विचारण न्यायाधीश का लबादा पहनता है और प्रश्न यह नहीं है कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए मामला बनाया है या नहीं । आवश्यकता यह है कि न्यायालय का यह समाधान हो जाना चाहिए कि उपलब्ध सामग्री के साथ अभियुक्त द्वारा विचारण का सामना करने के लिए मामला बनाया गया है । एक प्रबल संदेह पर्याप्त है । तथापि, यह प्रबल संदेह अवश्य किसी सामग्री पर आधारित होना चाहिए । यह सामग्री अवश्य ऐसी होनी

[1] (2019) 16 एस. सी. सी. 547.

चाहिए जिसे विचारण के प्रक्रम पर साक्ष्य के रूप में स्थानांतरित किया जा सके । प्रबल संदेह न्यायाधीश की इन नैतिक धारणाओं पर आधारित विशुद्ध रूप से वस्तुपरक समाधान नहीं हो सकता है कि यह ऐसा मामला है जहां यह संभव है कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है । प्रबल संदेह अवश्य ऐसा संदेह होना चाहिए जो कुछ ऐसी सामग्री पर आधारित हो जिससे स्वयं न्यायालय को यह लगता हो कि यह प्रथमदृष्ट्या यह मत अपनाने के लिए पर्याप्त है कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

16.1 **विश्लेषण** – बहुत सारे ब्योरों पर विचार न करते हुए, हम यह उचित और वास्तव में पर्याप्त समझते हैं कि अपनी जांच को स्वयं आरोप पत्र में उपदर्शित व्यय के तीन शीर्षों तक सीमित करें । इस सीमित जांच से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 की अपेक्षाओं का भी समाधान हो जाएगा ।

16.2 पहला आक्षेप जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी के बैंक खाते में अतिशेष रकम के रूप में अभिलिखित 55,000/- रुपए की रकम को सम्मिलित करने के संबंध में है और तद्नुसार इसकी संगणना आरोप पत्र में व्यय के रूप में की गई है । तथापि, अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई बैंक पास-बुक, जो अन्वेषण अधिकारी और विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के पास उपलब्ध थी, में जांच अवधि के दौरान स्पष्ट रूप से केवल 11,998/- रुपए अतिशेष अभिलिखित थे । अभियोजन पक्ष द्वारा आंकड़ों में इस अंतर को स्पष्ट नहीं किया गया था । तद्नुसार, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) और उच्च न्यायालय अभियोजन पक्ष के साक्ष्य में ऐसी सरल और स्पष्ट असंगति का समाधान करने में असफल रहे थे । हमारी यह राय है कि जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी की बैंक पास-बुक में अतिशेष रकम के रूप में अभिलिखित केवल 11,998/- रुपए की रकम इस शीर्ष के अधीन व्यय के रूप में विधिमान्य रूप से ग्राह्य है ।

16.3 दूसरा आक्षेप बिहार राज्य वित्त निगम से लिए गए ऋण के प्रतिसंदाय के निमित्त व्यय के रूप में 53,467/- रुपए की रकम को

सम्मिलित करने से संबंधित है । तथापि, ऋण की किस्तों के निमित्त प्रतिसंदाय की गई रकम की पहले ही अपीलार्थी के कुल वेतन से कटौती की गई थी और जांच की अवधि के दौरान कटौती किया गया यह आंकड़ा अपीलार्थी के पास कुल प्रयोज्य आय के रूप में अभिलिखित किया गया था । अत: ऋण के प्रतिसंदाय की पुन: एक बार व्यय के रूप में अलग से संगणना नहीं की जा सकती है । यह एक स्पष्ट गलती है । विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) तथा उच्च न्यायालय ने इस आक्षेप पर विचार इस आधार पर नहीं किया था कि उन्मोचन के प्रक्रम पर निरुद्देश्य जांच अनुज्ञेय नहीं है ।

16.4 तीसरा आक्षेप वर्ष 1974 से 1988 की जांच अवधि के बारह वर्ष पश्चात् तारीख 21 फरवरी, 2000 को अपीलार्थी के मकान में ली गई तलाशी के दौरान पाई गई वस्तुओं के मूल्य के रूप में 1,58,562/- रुपए को सम्मिलित करने के संबंध में है । यह उपदर्शित करने के लिए, यहां तक कि प्रथमदृष्ट्या ही, कुछ भी नहीं है कि वर्ष 2000 में तलाशी के दौरान पाई गई ये वस्तुएं जांच अवधि के दौरान अर्जित की गई थीं । इन वस्तुओं को जांच अवधि के दौरान अर्जित किए जाने के रूप में जोड़ने के लिए किसी सामग्री के अभाव में इनके मूल्य को व्यय में सम्मिलित करना अनुज्ञेय नहीं है । अत: हमारी यह राय है कि व्यय की सूची में इस रकम को सम्मिलित करने के बारे में अपीलार्थी का आक्षेप पूरी तरह न्यायोचित है । दुर्भाग्यवश, इस आक्षेप पर भी, जिसके लिए अभिलेख पर सामग्री की अधिक संवीक्षा करना आवश्यक नहीं था, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) या उच्च न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया था ।

17. इसमें ऊपर चर्चा किए गए व्यय के तीन शीर्षों को जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी के कुल अभिकथित व्यय से अवश्य अपवर्जित किया जाना चाहिए । प्रथमत:, बैंक पास-बुक में प्रतिबंधित अपीलार्थी की वास्तविक अतिशेष रकम अर्थात् 11,998/- रुपए को 55,000/- रुपए की तात्पर्यित अतिशेष रकम के विरुद्ध अवश्य हिसाब में लेना चाहिए । इसके अतिरिक्त, दूसरी ओर तीसरी रकम को, जैसा कि ऊपर उपदर्शित किया

गया है, आरोप पत्र में वर्णित अपीलार्थी के कुल व्यय से अवश्य अपवर्जित किया जाना चाहिए । तद्नुसार, कुल व्यय केवल 2,69,355/- रुपए आता है, न कि 5,24,386/- रुपए, जो उन कतिपय गलतियों पर आधारित है जिनको हमने इसमें ऊपर उपदर्शित किया है । यही वह 2,69,355/- रुपए का व्यय है जिसकी तुलना जांच अवधि के दौरान 3,01,561/- रुपए की आय के साथ की जानी चाहिए । इन तथ्यों से स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा कोई प्रथमदृष्ट्या मामला सिद्ध नहीं किया गया है और इसलिए अपीलार्थी उन्मोचन का हकदार था ।

18. जो निष्कर्ष हमने निकाले हैं, वे हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री पर आधारित हैं और जो मामले के अभिलेख का भाग है । यही अभिलेख उस समय विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के पास उपलब्ध था जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन आवेदन पर विचार किया गया था । इसके बावजूद, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) ने उन्मोचन आवेदन को इस साधारण आधार पर खारिज कर दिया कि उन्मोचन के प्रक्रम पर एक निरुद्देश्य जांच करना अनुज्ञात नहीं है । हमने जो किया है वह एक निरुद्देश्य जांच नहीं है, अपितु उन्मोचन के लिए आवेदन का उचित न्यायनिर्णयन करने के लिए एक साधारण और आवश्यक जांच है । विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए इसी प्रकार की जांच करने के लिए आबद्ध था कि अपीलार्थी का विचारण करने के लिए एक प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है । दुर्भाग्यवश उच्च न्यायालय ने वही गलती की जो विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) ने की थी ।

19. उपरोक्त विश्लेषण के अतिरिक्त, हम अत्यधिक खेद के साथ यह उल्लेख करना चाहेंगे कि वर्ष 1974 और 1988 के बीच की अवधि में अपीलार्थी की अननुपातिक आय से संबंधित अभिकथन उक्त अवधि के बारह वर्ष समाप्त होने के पश्चात् फाइल की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किया गया था । आरोप पत्र प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण के सात वर्ष पश्चात् फाइल किया गया था । उन्मोचन के

लिए आवेदन तारीख 28 मार्च, 2016 को, आरोप पत्र फाइल करने के लगभग एक दशक पश्चात् खारिज किया गया था । उच्च न्यायालय द्वारा इस खारिजी की अभिपुष्टि उसके सात माह पश्चात् अर्थात् तारीख 5 अक्तूबर, 2016 को की गई थी । अंततः, और अधिक दुर्भाग्य की बात यह है कि वर्तमान विशेष इजाजत याचिका इस न्यायालय के समक्ष पिछले छह वर्ष से लंबित रही है । इसी बीच, अपीलार्थी ने वर्ष 2010 में सेवा से अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर ली किंतु उसके पास मामले का प्रतिवाद करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था । वह अब 72 वर्ष का है । इसमें ऊपर यथा उपदर्शित अवैधता के अतिरिक्त, अभियोजन को जारी रखना भी अन्यायपूर्ण होगा ।

20. ऊपर उल्लिखित कारणों से हम 2016 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 9601 से उद्भूत दांडिक अपील को मंजूर करते हैं और 2016 के दांडिक प्रकीर्ण सं. 23031 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 5 अक्तूबर, 2016 के निर्णय और आदेश तथा 2000 के विशेष मामला सं. 9 में विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के तारीख 28 मार्च, 2016 के निर्णय और आदेश को अपास्त करते हैं और अपीलार्थी को उन्मोचित करते हैं ।

21. खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 19

ललनकुमार सिंह और अन्य

बनाम

महाराष्ट्र राज्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 1757]

11 अक्तूबर, 2022

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति सी. पी. रविकुमार

ओषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 (1940 का 23) – धारा 34, 16 और 18 [सपठित ओषधि और प्रसाधन सामग्री नियम, 1945 का नियम 76 और अनुसूची ग और ग(1)] – कंपनियों द्वारा अपराध – प्रतिनिधिक दायित्व – कंपनी द्वारा विनिर्मित ओषधि का ओषधि निरीक्षक द्वारा लिया गया नमूना परीक्षण रिपोर्ट में मानक गुणवत्ता न पाया जाना – कंपनी के विरुद्ध मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत फाइल किया जाना – मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा कंपनी के निदेशकों-अपीलार्थियों सहित सभी अभियुक्तों को समन जारी किया जाना – सेशन न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया पुनरीक्षण आवेदन खारिज हो जाना – उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई रिट याचिका भी खारिज हो जाना – अपील – किसी व्यक्ति को अधिनियम की धारा 34 के अधीन प्रतिनिधिक रूप में तब तक दायी नहीं बनाया जा सकता जब तक सुसंगत समय पर वह कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उसका भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी न हो और केवल इस कारण कि कोई व्यक्ति कंपनी का निदेशक है यह आवश्यक नहीं है कि उसे कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्यकलापों की जानकारी हो और कंपनी द्वारा किए गए अपराध के लिए निदेशक को उत्तरदायी ठहराने के लिए यह आवश्यक है कि उसके विरुद्ध शिकायत में इस बारे में स्पष्ट प्रकथन किए गए हों कि निदेशक कैसे और किस रीति में कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और चूंकि अभियुक्त-अपीलार्थी न तो कंपनी के प्रबंध निदेशक और न ही पूर्णकालिक निदेशक हैं, वहां धारा 34

की अपेक्षाओं की पूर्णतया कमी होने के कारण उनके विरुद्ध आदेशिका जारी करने के आदेश को अभिखंडित करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी मैसर्स कैचेट फार्मासियुटिकल्स प्रा. लि. (जिसे इसमें इसके पश्चात् "सीपीपीएल" कहा गया है) के निदेशक हैं । सीपीपीएल को 'हेम्फर सिरप' का विनिर्माण करने के लिए अनुज्ञा प्रदान की गई थी । तत्कालीन ओषधि निरीक्षक, खाद्य और ओषधि प्रशासन, बीड, महाराष्ट्र ने बीड स्थित मैसर्स प्रिया एजेंसिज का दौरा किया और 'हेम्पर सिरप' खरीदा, जिससे उसने ओषधि के नमूने लिए । उसने एक ऐसा नमूना राजकीय विश्लेषक, महाराष्ट्र राज्य ओषधि नियंत्रण प्रयोगशाला, मुंबई को भेजा जिससे ओषधि का परीक्षण किया जा सके । उसे राजकीय विश्लेषक से एक परीक्षण रिपोर्ट प्राप्त हुई जिसमें यह उल्लेख किया गया कि नमूना मानक गुणवत्ता का नहीं था क्योंकि सायनोकोबालामिन की मात्रा अनुज्ञेय सीमा अर्थात् लेबल पर की 39 प्रतिशत की मात्रा से कम थी और उसी दिन ओषधि के विनिर्माता अर्थात् सीपीपीएल को पंजीकृत डाक द्वारा परीक्षण रिपोर्ट के बारे में सूचित किया गया । सीपीपीएल के वितरक, मैसर्स एलकेम लैबोरेट्रीज द्वारा फाइल किए गए एक आवेदन के अनुसरण में विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड ने 'हेम्फर सिरप' के नमूनों को पुन: विश्लेषण के लिए भेजा । विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड को केंद्रीय ओषधि प्रयोगशाला, कलकत्ता से परीक्षण रिपोर्ट प्राप्त हुई जिसमें उल्लेख किया गया था कि नमूना मानक गुणवत्ता का नहीं था क्योंकि यह सायनोकोबालामिन की मात्रा की स्वीकृत सीमा के अनुरूप नहीं था । संयुक्त आयुक्त (मुख्यालय) और नियंत्रण प्राधिकारी, खाद्य और ओषधि प्रशासन, मुंबई द्वारा ओषधि के निर्माता के विरुद्ध विधिक कार्रवाई करने के लिए आदेशों के अनुसरण में विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड के समक्ष उक्त अधिनियम की धारा 16 और 34 के साथ पठित धारा 18(क)(i) और उक्त अधिनियम की धारा 27(घ) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए शिकायत फाइल की गई । उक्त शिकायत में, वर्तमान अपीलार्थियों को कंपनी के निदेशक होने के नाते अभियुक्त सं. 5 से 8 के रूप में क्रमबद्ध किया गया था । विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड ने इस अपील में अपीलार्थियों सहित सभी अभियुक्तों को समन

जारी किए । अपीलार्थियों ने समन आदेश के विरुद्ध विद्वान् सेशन न्यायाधीश, बीड के समक्ष एक दांडिक पुनरीक्षण आवेदन इस आधार पर फाइल किया कि निदेशकों द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में उक्त अधिनियम की धारा 34 के निबंधनों के अनुसार कोई विनिर्दिष्ट प्रकथन नहीं किए गए हैं और इस प्रकार समन आदेश को अभिखंडित किए जाने की ईप्सा की । तथापि, विद्वान् सेशन न्यायाधीश, बीड ने उक्त दांडिक पुनरीक्षण आवेदन को यह उल्लेख करते हुए नामंजूर कर दिया कि शिकायत में यह विनिर्दिष्ट प्रकथन है कि 'हेम्फर ओषधि' के विनिर्माण, वितरण और विक्रय से अपीलार्थियों का सरोकार है । अपीलार्थियों ने विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश को चुनौती देते हुए बंबई उच्च न्यायालय के समक्ष एक दांडिक रिट याचिका फाइल की । उच्च न्यायालय ने उक्त दांडिक रिट याचिका को इस आधार पर खारिज कर दिया कि सभी निदेशक सीपीपीएल के कारबार का संचालन कर रहे थे और इस प्रकार वे विनिर्माण प्रक्रिया में अंतर्वलित थे । अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – जहां तक वर्तमान अपीलार्थियों का संबंध है, यह देखा जा सकता है कि कोई विनिर्दिष्ट प्रकथन नहीं हैं । यह भी उल्लेखनीय है कि वर्तमान अपीलार्थी न तो अभियुक्त कंपनी के प्रबंध निदेशक हैं और न ही पूर्णकालिक निदेशक हैं । यह भी उल्लेखनीय है कि प्ररूप 28 के साथ पठित उक्त नियमों के नियम 76 के उपबंधों के अनुसार, अभियुक्त सं. 9 और 10 को अनुज्ञप्ति प्राधिकारी द्वारा प्ररूप 28 में विनिर्दिष्ट रूप से अनुमोदित किया गया है । अभियुक्त सं. 9 ऐसे व्यक्ति के रूप में अनुमोदित था जिसके सक्रिय निदेशन और व्यक्तिगत पर्यवेक्षणाधीन उक्त नियमों के नियम 76 के उप नियम (1) के अधीन की गई अपेक्षानुसार विनिर्माण किया जाएगा । इसी प्रकार, अभियुक्त सं. 10, जो परीक्षण इकाई के मुखिया के रूप में अनुमोदित था, उसे उक्त नियमों के भाग भ के उपबंधों के अधीन अपेक्षित अनुसार पदार्थों की सांद्रता, गुणवत्ता और शुद्धता का परीक्षण करने के लिए भारसाधक होना चाहिए था । अत: इस न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि शिकायत में उक्त अधिनियम की धारा 34 में की गई अपेक्षा की पूर्ण रूप से कमी है । आक्षेपित आदेश

एक अन्य आधार पर भी अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य हैं । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश के परिशीलन से स्वत: यह प्रकट होता है कि विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने आदेशिका जारी करने का एक औपचारिक आदेश पारित करने तक की परवाह नहीं की थी । इस प्रकार, स्पष्ट रूप से यह देखा जा सकता है कि उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया था कि यद्यपि आदेशिका जारी करने का कोई औपचारिक आदेश नहीं था, तो भी यह निष्कर्ष निकालने के लिए अभिलेख पर्याप्त है कि आदेशिका जारी करने का आदेश किया गया था । आदेशिका जारी करने का आदेश एक खोखली औपचारिकता नहीं है । मजिस्ट्रेट से यह अपेक्षा की जाती है कि वह इस बारे में अपने मस्तिष्क का प्रयोग करें कि क्या मामले में कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार विद्यमान है या नहीं । ऐसी राय बनाने का उल्लेख स्वत: आदेश में किया जाना चाहिए । आदेश अपास्त किए जाने योग्य होगा यदि इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामला है, उसमें कोई कारण नहीं दिए गए हैं । निस्संदेह, आदेश में विस्तृत कारणों को अंतर्विष्ट किए जाने की आवश्यकता नहीं है । वर्तमान मामले में, आदेशिका जारी किए जाने के आदेश के समर्थन में कोई न कारण न होने की बात तो एक तरफ, वस्तुत: उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश से यह स्पष्ट है कि ऐसा कोई आदेश पारित ही नहीं किया गया था । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अभिलेख के आधार पर यह उपधारणा की थी कि आदेशिका जारी किए जाने का आदेश किया गया था । इस न्यायालय का निष्कर्ष है कि ऐसा दृष्टिकोण विधि में असंधार्य है । इसलिए यह अपील मंजूर किए जाने योग्य है । (पैरा 23, 24, 25, 26, 27, 28 और 30)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	(2018) 14 एस. सी. सी. 202 : **अशोक मल बाफ्ना** बनाम **अप्पर इंडिया स्टील मैनुफेक्चरिंग एंड इंजीनियरिंग कंपनी लिमिटेड** ;	21, 29

[2015] (2015) 4 एस. सी. सी. 609 :
सुनील भारती मित्तल बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ; 28

[2014] (2014) 16 एस. सी. सी. 1 :
पूजा रविन्द्र देवीदासनी बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** ; 17

[2010] (2010) 11 एस. सी. सी. 125 :
दिनेश बी. पटेल और अन्य बनाम **गुजरात राज्य और एक अन्य** ; 12

[2010] (2010) 11 एस. सी. सी. 469 :
राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र दिल्ली राज्य मार्फत **अभियोजन अधिकारी, कीटनाशी, राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र दिल्ली सरकार** बनाम **राजीव खुराना** ; 20

[2009] (2009) 10 एस. सी. सी. 48 :
के. के. आहूजा बनाम **वी. के. वोहरा और एक अन्य** ; 19

[2005] (2005) 8 एस. सी. सी. 89 :
एस. एम. एस. फार्मासियुटिकल्स लि. बनाम **नीता भल्ला और एक अन्य** ; 15

[2000] (2000) 3 एस. सी. सी. 745 :
उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड बनाम **मोहन मिकिंस लि. और अन्य** ; 12

[1998] (1998) 5 एस. सी. सी. 343 :
हरियाणा राज्य बनाम **बृज लाल मित्तल और अन्य** । 13

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 1757.

2015 की दांडिक रिट याचिका सं. 288 में बंबई उच्च न्यायालय,

औरंगाबाद द्वारा तारीख 5 जून, 2015 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से — सर्वश्री सी. यू. सिंह, अनुपम लाल दास, ज्येष्ठ अधिवक्तागण, अरुण सिवाच, कुणाल चीमा, (सुश्री) अदिति देशपांडे पारखी, अनिरुद्ध सिंह, कृष्णु बरुवा और अमजीद मकबूल

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री सिद्धार्थ धर्माधिकारी, आदित्य अनिरुद्ध पांडेय और भरत बाग्ला

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. आर. गवई ने दिया ।

न्या. गवई – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील 2015 की दांडिक रिट याचिका सं. 288 में बंबई उच्च न्यायालय, औरंगाबाद के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा इस अपील में अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई उक्त दांडिक रिट याचिका को खारिज करते हुए और विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड (जिसे इसमें इसके पश्चात् "विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट" कहा गया है) द्वारा तारीख 30 मार्च, 2009 को पारित आदेशिका जारी करने के आदेश को और अपीलार्थियों द्वारा उस आदेश के विरुद्ध फाइल किए गए 2013 के दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 115 को खारिज करते हुए विद्वान् सेशन न्यायाधीश, बीड द्वारा तारीख 25 नवंबर, 2014 को पारित आदेश को कायम रखते हुए तारीख 25 जून, 2015 को पारित किए गए निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है ।

3. इस अपील के तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित हैं :–

3.1 अपीलार्थी मैसर्स कैचेट फार्मासियुटिकल्स प्रा. लि. (जिसे इसमें इसके पश्चात् "सीपीपीएल" कहा गया है) के निदेशक हैं । सीपीपीएल को 'हेम्फर सिरप', जो ओषधि और प्रसाधन सामग्री नियम, 1945 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त नियम" कहा गया है) की अनुसूची ग और ग(1) के अंतर्गत आता है, का विनिर्माण करने के लिए अनुज्ञा प्रदान की गई थी ।

3.2 तारीख 30 अगस्त, 2006 को श्री एन. ए. यादव, तत्कालीन ओषधि निरीक्षक, खाद्य और ओषधि प्रशासन, बीड, महाराष्ट्र ने बीड स्थित मैसर्स प्रिया एजेंसिज का दौरा किया और 'हेम्पर सिरप' खरीदा, जिससे उसने ओषधि के नमूने लिए । तारीख 31 अगस्त, 2006 को उसने एक ऐसा नमूना राजकीय विश्लेषक, महाराष्ट्र राज्य ओषधि नियंत्रण प्रयोगशाला, मुंबई को भेजा जिससे ओषधि का परीक्षण किया जा सके । तारीख 26 फरवरी, 2007 को उसे राजकीय विश्लेषक से तारीख 13 फरवरी, 2007 की एक परीक्षण रिपोर्ट प्राप्त हुई जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि नमूना मानक गुणवत्ता का नहीं था क्योंकि सायनोकोबालामिन की मात्रा अनुज्ञेय सीमा अर्थात् लेबल पर की 39 प्रतिशत की मात्रा से कम थी, उसी दिन ओषधि के विनिर्माता अर्थात् सीपीपीएल को पंजीकृत डाक द्वारा परीक्षण रिपोर्ट के बारे में सूचित किया गया ।

3.3 तारीख 29 मार्च, 2007 को सीपीपीएल के उप प्रबंधक, गुणवत्ता आश्वासन (क्यूए) श्री विजय जैन ने ओषधि निरीक्षक को अनुरोध किया कि नमूनों को पुन: विश्लेषण के लिए भेजा जाए । मैसर्स एलकेम लैबोरेट्रीज, सीपीपीएल के वितरक द्वारा फाइल किए गए एक आवेदन के अनुसरण में विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड ने तारीख 24 अप्रैल, 2007 को 'हेम्फर सिरप' के नमूनों को पुन: विश्लेषण के लिए भेजा । तारीख 10 जुलाई, 2007 को विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड को केंद्रीय ओषधि प्रयोगशाला, कलकत्ता से परीक्षण रिपोर्ट प्राप्त हुई जिसमें उल्लेख किया गया था कि नमूना मानक गुणवत्ता का नहीं था क्योंकि यह सायनोकोबालामिन की मात्रा की स्वीकृत सीमा के अनुरूप नहीं था ।

3.4 ओषधि निरीक्षक ने तारीख 21 अगस्त, 2008 के पत्र द्वारा सीपीपीएल को निदेशकों के विवरण, संगम-अनुच्छेद, संगम-ज्ञापन, ओषधियों के विनिर्माण और विक्रय की अनुज्ञप्ति की प्रतियां, तकनीकी व्यक्तियों का विवरण और सभी ऐसी जानकारी प्रस्तुत करने के लिए कहा जो ओषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त अधिनियम" कहा गया है) के अधीन उपलब्ध किया जाना आवश्यक था । इस पत्र के उत्तर में सीपीपीएल ने ओषधि निरीक्षक को सूचित किया कि तारीख 10 जुलाई, 2007 की रिपोर्ट

"भारसाधक निदेशक" द्वारा हस्ताक्षरित थी न कि केंद्रीय ओषधि प्रयोगशाला के निदेशक द्वारा और इस प्रकार उसे अनुरोध किया कि केंद्रीय ओषधि प्रयोगशाला के निदेशक द्वारा हस्ताक्षरित एक उचित रिपोर्ट भेजी जाए ।

3.5 ओषधि निरीक्षक ने तारीख 12 जनवरी, 2009 के पत्र द्वारा पुन: सीपीपीएल को वे विवरण प्रस्तुत करने के लिए कहा, जो पहले मांगे गए थे । सीपीपीएल ने तारीख 12 फरवरी, 2009 के पत्र द्वारा ओषधि निरीक्षक द्वारा अनुरोध की गई जानकारी और दस्तावेज उपलब्ध कराए और उस पत्र में स्पष्ट रूप से यह कहा गया कि 'हेम्फर सिरप' का विनिर्माण द्रव्य पेय के लिए खाद्य और ओषधि प्रशासन (एफडीए) द्वारा अनुमोदित विनिर्माण रसायनज्ञ श्री अशोक कुमार के पर्यवेक्षण और तकनीकी मार्गदर्शन में किया गया था ।

3.6 श्री अशोक कुमार (अभियुक्त सं. 9) ने तारीख 13 फरवरी, 2009 को ओषधि निरीक्षक को यह उल्लेख करते हुए एक व्यक्तिगत पत्र लिखा कि 'हेम्फर सिरप' के उक्त बैच को उसके पर्यवेक्षणाधीन विनिर्मित किया गया था और इस ओषधि के विनिर्माण में अपेक्षित मानकों का अनुपालन किया गया था । इसी प्रकार, श्री नरेश राय (अभियुक्त सं. 10 ने भी तारीख 13 फरवरी, 2009 को ओषधि निरीक्षक को एक पत्र यह उल्लेख करते हुए लिखा कि 'हेम्फर सिरप' के उक्त बैच का परीक्षण उसके पर्यवेक्षण में किया गया था और परीक्षण के परिणाम से यह प्रतीत हुआ था कि ओषधि के विनिर्माण में अपेक्षित मानकों का अनुपालन किया गया था ।

3.7 संयुक्त आयुक्त (मुख्यालय) और नियंत्रण प्राधिकारी, खाद्य और ओषधि प्रशासन, मुंबई द्वारा ओषधि के निर्माता के विरुद्ध विधिक कार्रवाई करने के लिए आदेशों के अनुसरण में विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड के समक्ष उक्त अधिनियम की धारा 16 और 34 के साथ पठित धारा 18(क)(i) और उक्त अधिनियम की धारा 27(घ) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए शिकायत फाइल की गई जो 2009 की आरसीसी सं. 233 थी । उक्त शिकायत में, वर्तमान अपीलार्थियों को कंपनी के निदेशक होने के नाते अभियुक्त सं. 5 से 8 के रूप में क्रमबद्ध किया

गया था ।

3.8 विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड ने तारीख 30 मार्च, 2009 के आदेश द्वारा इस अपील में अपीलार्थियों सहित सभी अभियुक्तों को समन जारी किए । अपीलार्थियों ने समन आदेश के विरुद्ध विद्वान् सेशन न्यायाधीश, बीड के समक्ष एक दांडिक पुनरीक्षण आवेदन इस आधार पर फाइल किया कि निदेशकों द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में उक्त अधिनियम की धारा 34 के निबंधनों के अनुसार कोई विनिर्दिष्ट प्रकथन नहीं किए गए हैं और इस प्रकार समन आदेश को अभिखंडित किए जाने की ईप्सा की । तथापि, विद्वान् सेशन न्यायाधीश, बीड ने उक्त दांडिक पुनरीक्षण आवेदन को यह उल्लेख करते हुए नामंजूर कर दिया कि शिकायत में यह विनिर्दिष्ट प्रकथन है कि 'हेम्फर ओषधि' के विनिर्माण, वितरण और विक्रय से अपीलार्थियों का सरोकार है ।

3.9 अपीलार्थियों ने विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश को चुनौती देते हुए बंबई उच्च न्यायालय के समक्ष एक दांडिक रिट याचिका फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा उक्त दांडिक रिट याचिका को इस आधार पर खारिज कर दिया कि सभी निदेशक सीपीपीएल के कारबार का संचालन कर रहे थे और इस प्रकार वे विनिर्माण प्रक्रिया में अंतर्वलित थे ।

3.10 इसलिए यह अपील की गई है ।

4. हमने अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेलों श्री सी. यू. सिंह और श्री अनुपम लाल दास और प्रत्यर्थी-महाराष्ट्र राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सिद्धार्थ धर्माधिकारी को सुना ।

5. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री सी. यू. सिंह और श्री अनुपम लाल दास ने यह दलील दी कि उक्त अधिनियम की धारा 34 में विनिर्दिष्ट रूप से उपबंधित है कि केवल ऐसा व्यक्ति जो अपराध कारित करने के समय पर भारसाधक था और कंपनी के कारबार का संचालन करने के लिए कंपनी के प्रति उत्तरदायी था तथा कंपनी अपराध के दोषी समझे जाएंगे और कार्यवाही करने के लिए दायी होंगे और तद्नुसार दंडित किए जाएंगे ।

6. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री सी. यू. सिंह ने यह भी दलील दी कि उक्त नियमों के नियम 76 में अनुसूची ग और ग(1) में विनिर्दिष्ट ओषधियों, भाग भख और अनुसूची भ में या अनुसूची ग, ग(1) और भ में विनिर्दिष्ट ओषधियों को छोड़कर, का विनिर्माण करने के लिए अनुज्ञप्ति का एक प्ररूप और ऐसी अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए शर्तें विहित की गई हैं । उन्होंने यह भी दलील दी कि प्ररूप 28 या प्ररूप 28ख में अनुज्ञप्ति प्रदान करने से पूर्व आवेदक द्वारा कतिपय शर्तों का अनुपालन किया जाना अपेक्षित है । उन्होंने दलील दी कि उक्त नियमों के नियम 76 के उप नियम (1) के अधीन विनिर्माण सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद के सक्रिय निदेशन और व्यक्तिगत पर्यवेक्षणाधीन किया जाना चाहिए जिसमें कम से कम एक ऐसा व्यक्ति हो जो पूर्णकालिक कर्मचारी है और जिसके पास उक्त नियमों के अधीन विहित अनुसार अपेक्षित अर्हता है । उन्होंने आगे यह दलील दी कि उक्त नियमों के नियम 76 के उप नियम (4) के अधीन आवेदक के लिए यह अपेक्षित है कि वह पदार्थों की सांद्रता, गुणवत्ता और शुद्धता के ऐसे परीक्षण करने के लिए, जो उक्त नियमों के भाग भ के उपबंधों के अधीन उसके द्वारा किए जाने अपेक्षित हों, पर्याप्त कर्मचारिवृंद, परिसर और प्रयोगशाला उपस्कर उपलब्ध कराए जाएं और बनाए रखे जाएं । उन्होंने यह भी कहा कि उक्त नियमों के नियम 76 के उप नियम (4क) के अधीन परीक्षण इकाई के मुखिया के लिए यह अपेक्षित है कि उसके पास आयुर्विज्ञान या विज्ञान या फार्मेसी या फार्मासियुटिकल रसायनशास्त्र में किसी मान्यताप्राप्त विश्वविद्यालय से उक्त प्रयोजनों के लिए उपाधि हो । उसके पास ओषधियों के परीक्षण का ऐसा अनुभव भी होना चाहिए, जो अनुज्ञप्ति प्राधिकारी की राय में पर्याप्त समझा जाए । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि प्ररूप 28 उक्त नियमों के नियम 76 के अनुसार ओषधियों के विक्रय या वितरण के लिए विनिर्माण के लिए अनुज्ञप्ति है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी कि प्ररूप 28 में अनुमोदित सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद के नामों को दिया जाना आवश्यक है । उन्होंने यह भी दलील दी कि अनुज्ञप्ति की शर्तों की शर्त सं. 3 में यह अपेक्षित है कि यदि सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद में कोई परिवर्तन किया जाता है, तो इसकी सूचना तुरंत अनुज्ञप्ति प्राधिकारी को दी जाएगी ।

7. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने दलील दी कि उक्त नियमों की अनुसूची ड में उचित विनिर्माण परिपाटी के लिए और फार्मासियुटिकल उत्पादों के लिए परिसरों, संयंत्र और उपस्कर की आवश्यकताओं के लिए उपबंध किया गया है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी कि अनुसूची ड के भाग 1 के खंड 6.1 में विनिर्दिष्ट रूप से यह उपबंधित है कि विनिर्माण विहित की गई अर्हताओं और सुसंगत मिश्रण और/या सक्रिय फार्मासियुटिकल उत्पादों में व्यावहारिक अनुभव वाले सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद के प्रत्यक्ष पर्यवेक्षणाधीन किया जाएगा । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने अगली यह दलील दी कि इसके खंड 6.2 के अनुसार गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशाला का मुखिया विनिर्माण इकाई से स्वतंत्र होना चाहिए । इसमें यह भी अपेक्षित है कि परीक्षण सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद के पर्यवेक्षणाधीन किया जाएगा, जो अनुज्ञप्तिधारी के पूर्णकालिक कर्मचारी होंगे ।

8. श्री सिंह ने आगे यह दलील दी कि अनुज्ञप्ति में, जिस पर पदाभिहित अनुज्ञप्ति प्राधिकारी द्वारा सम्यक् रूप से हस्ताक्षर किए गए हैं, पहले ही अनुमोदित सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद के नाम दिए गए हैं । यह भी दलील दी गई कि ओषधि निरीक्षक, खाद्य और ओषधि प्रशासन, एम. एस. बीड को तारीख 13 फरवरी, 2019 को दिए गए उत्तर में श्री नरेश राय, सहायक प्रबंधक, गुणवत्ता आश्वासन (अभियुक्त सं. 10) ने यह कहा था कि कच्ची सामग्री का विश्लेषण उसके पर्यवेक्षणाधीन गुणवत्ता नियंत्रण विभाग में श्री आफताब, रसायनज्ञ द्वारा किया गया था । यह भी सूचित किया गया था कि ओषधि के उक्त बैच के तैयार उत्पाद का विश्लेषण उसके पर्यवेक्षणाधीन श्री एम. के. शर्मा द्वारा किया गया था । श्री नरेश राय (अभियुक्त सं. 10) ने यह भी सूचित किया था कि उसे राजस्थान खाद्य और ओषधि प्रशासन द्वारा एक सक्षम व्यक्ति के रूप में अनुमोदित किया गया था ।

9. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने दलील दी कि इसी प्रकार श्री अशोक कुमार, सहायक प्रबंधक, उत्पादन (अभियुक्त सं. 9) ने भी तारीख 13 फरवरी, 2009 के पत्र द्वारा ओषधि निरीक्षक को सूचित किया था कि उसे राजस्थान खाद्य और ओषधि प्रशासन द्वारा अनुमोदित किया गया

था । माल को गुणवत्ता नियंत्रण से अंतिम अनुमोदन के पश्चात् उन्मोचित किया गया था । उसने आगे यह कहा कि उक्त बैच का विनिर्माण संबंधी अभिलेख उसके द्वारा तैयार किया गया था और इस पर उसके हस्ताक्षर हैं ।

10. श्री सिंह ने यह भी दलील दी कि मात्र यह उल्लेख करना कि वर्तमान अपीलार्थी अभियुक्त कंपनी के निदेशक होने के कारण कंपनी के कारबार के संचालन के लिए कंपनी के प्रति उत्तरदायी थे, उनके विरुद्ध कार्यवाहियां आरंभ करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा । यह दलील दी गई कि जब तक इस बारे में पर्याप्त प्रकथन न हो कि कंपनी के कारबार के संचालन में उसकी क्या भूमिका थी, किसी व्यक्ति के विरुद्ध केवल इस आधार पर कार्यवाही नहीं की जा सकती कि वह कंपनी का निदेशक था । उन्होंने इस प्रतिपादना के समर्थन में इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का अवलंब लिया ।

11. श्री सी. यू. सिंह ने आगे यह दलील दी कि विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा आदेशिका जारी करने के लिए पारित कोई औपचारिक आदेश नहीं हैं । यह दलील दी गई कि आदेशिका जारी करते समय मजिस्ट्रेट पर इस व्यक्तिपरक समाधान पर पहुंचने का कर्तव्य अधिरोपित है कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है । उन्होंने यह दलील दी कि ऐसा कोई आदेश नहीं है जिससे विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा मस्तिष्क का प्रयोग करने की बात प्रतिबिंबित होती हो और इस आधार पर भी आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है ।

12. इसके विपरीत, विद्वान् काउंसेल श्री सिद्धार्थ धर्माधिकारी ने यह दलील दी कि शिकायत का और विनिर्दिष्ट रूप से इसके पैरा 3 और 25 का परिशीलन करने पर यह प्रकट होता है कि उक्त अधिनियम की धारा 34 की अपेक्षा का पर्याप्त अनुपालन किया गया है । उन्होंने यह दलील दी कि शिकायत को समग्र रूप में पढ़ा जाना चाहिए और इसे टुकड़ों में नहीं पढ़ा जा सकता । विद्वान् काउंसेल ने **उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड** बनाम **मोहन मिकिंस लि. और अन्य**[1] वाले मामले में इस

[1] (2000) 3 एस. सी. सी. 745.

न्यायालय के निर्णय का इस प्रतिपादना के समर्थन में अवलंब लिया कि आदेशिका जारी करते समय विचारण न्यायालय के लिए विस्तृत आदेश पारित करने की कोई विधिक अपेक्षा नहीं है । उन्होंने **दिनेश बी. पटेल और अन्य** बनाम **गुजरात राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का भी अपनी इस दलील पर बल देने के लिए अवलंब लिया कि शिकायत में किए गए प्रकथन वर्तमान अपीलार्थियों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त हैं ।

13. **हरियाणा राज्य** बनाम **बृज लाल मित्तल और अन्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था :–

> "8. बहरहाल, हमारा निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को एक भिन्न कारण से कायम रखा जाना होगा । स्वीकृत रूप से, तीन प्रत्यर्थियों को अधिनियम की धारा 34(1) की सहायता से विनिर्माता के निदेशकों के रूप में अभियोजित किया जा रहा था । धारा 34 निम्नलिखित है :
>
> > '34. कंपनियों द्वारा अपराध – (1) यदि इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्वारा किया गया हो तो प्रत्येक व्यक्ति जो उस अपराध के किए जाने के समय उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कंपनी भी उस अपराध के दोषी समझे जाएंगे और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने के भी भागी होंगे :
> >
> > परंतु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को दंड का भागी नहीं बनाएगी यदि वह साबित कर दे कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसा अपराध किया जाना निवारित करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।'

---

[1] (2010) 11 एस. सी. सी. 125.

[2] (1998) 5 एस. सी. सी. 343.

इस प्रकार यह दिखाई पड़ता है कि किसी कंपनी द्वारा अधिनियम के अधीन किए गए अपराध के लिए अभियोजित किए जा रहे किसी व्यक्ति का प्रतिनिधिक दायित्व तब उद्भूत होता है यदि तात्विक समय पर वह उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी का भारसाधक था और उसके प्रति उत्तरदायी था । मात्र इस कारण से कि कोई व्यक्ति कंपनी का निदेशक है, इसका आवश्यक रूप से यह अर्थ नहीं है कि वह दोनों उपरोक्त अपेक्षाओं को पूरा करता हो जिससे उसे दायी बनाया जा सके । इसके विपरीत, कोई व्यक्ति निदेशक हुए बिना उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए कंपनी का भारसाधक और उत्तरदायी हो सकता है । तथापि, प्रश्नगत शिकायत से हम यह पाते हैं कि इस अस्पष्ट कथन के सिवाय कि प्रत्यर्थी विनिर्माता के निदेशक थे, यह इंगित करने के लिए कोई अन्य अभिकथन, यहां तक कि प्रथमदृष्ट्या ही, नहीं है कि वे कंपनी के भारसाधक थे और कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उसके प्रति उत्तरदायी भी थे ।"

14. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि मात्र इस कारण कि कोई व्यक्ति कंपनी का निदेशक है, इसका आवश्यक रूप से यह अर्थ नहीं है कि वह उक्त अधिनियम की धारा 34(1) की दोनों अपेक्षाओं को पूरा करता हो जिससे उसे दायी ठहराया जा सके । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी व्यक्ति को तब तक दायी नहीं ठहराया जा सकता जब तक कि वह तात्विक समय पर कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी भी न हो ।

15. **एस. एम. एस. फार्मासियुटिकल्स लि.** बनाम **नीता भल्ला और एक अन्य**[1] वाले मामले में यह न्यायालय इस प्रश्न पर विचार कर रहा था कि क्या किसी कंपनी का निदेशक होने के कारण किसी व्यक्ति को परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 141 के अधीन दायी ठहराने के लिए पर्याप्त था । इस न्यायालय ने कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 2(13) में यथा परिभाषित "निदेशक" शब्द की परिभाषा पर

[1] (2005) 8 एस. सी. सी. 89.

विचार किया । इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :–

> "8. ..... ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह सुझाव मिलता हो कि किसी कंपनी में मात्र निदेशक होने के कारण वह उस कंपनी की ओर से विशिष्ट कार्यों का निर्वहन करता हो । ऐसा हो सकता है कि कोई व्यक्ति किसी कंपनी में निदेशक हो किंतु उसे कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्य के बारे में कोई जानकारी न हो । निदेशक होने के नाते वह कंपनी के निदेशक बोर्ड की बैठकों में सम्मिलित हो सकता है जहां प्रायिक रूप से वे नीतिगत मामलों का विनिश्चय करते हैं और कंपनी के कारबार का मार्गदर्शन करते हैं । यह हो सकता है कि निदेशक बोर्ड उप-समितियां नियुक्त कर सकता है जिसमें कंपनी के बोर्ड में से एक या दो निदेशक हो सकते हैं, जिन्हें कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए उत्तरदायी बनाया जा सकता है । ये ऐसी बातें हैं जो कंपनी के निदेशक बोर्ड के प्रस्तावों का भाग हो सकती हैं । मौखिक कुछ नहीं होता है । इससे जो प्रकट होता है वह यह है कि कंपनी में किसी निदेशक की भूमिका प्रत्येक मामले के विशिष्ट तथ्यों पर निर्भर करते हुए एक तथ्य संबंधी प्रश्न है । ऐसा कोई सार्वभौमिक नियम नहीं है कि किसी कंपनी का निदेशक उसके रोजमर्रा के कार्यों का भारसाधक हो । हमने कंपनी में किसी निदेशक की स्थिति के बारे में इस बिंदु को उदाहरण देकर स्पष्ट करने के लिए चर्चा की है कि इस विशिष्ट शब्द में ऐसा कोई जादू नहीं है, चाहे यह निदेशक हो, प्रबंधक या सचिव हो । .....।"

16. यह अभिनिर्धारित किया गया था कि केवल इस कारण कि कोई व्यक्ति किसी कंपनी का निदेशक है, यह आवश्यक नहीं है कि उसे कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्य के बारे में जानकारी हो । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसा कोई सार्वभौमिक नियम नहीं है कि किसी कंपनी का कोई निदेशक उसके रोजमर्रा के कार्यकलापों का भारसाधक हो । इसलिए यह प्रकथन करना आवश्यक है कि कंपनी का निदेशक कैसे कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्यकलापों का भारसाधक या कंपनी के कार्यकलापों के प्रति उत्तरदायी था । तथापि, इस न्यायालय ने

यह स्पष्ट किया था कि किसी कंपनी में प्रबंध निदेशक या संयुक्त प्रबंध निदेशक की स्थिति भिन्न हो सकती है । इस न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि ये व्यक्ति, जैसा कि उनके पद के पदनाम से सुझाव मिलता है, कंपनी के भारसाधक होते हैं और कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उत्तरदायी होते हैं । दायित्व से बचने के लिए, उन्हें यह साबित करना होगा कि जब अपराध कारित किया गया था, उन्हें अपराध की कोई जानकारी नहीं थी या उन्होंने अपराध के किए जाने को निवारित करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

17. **पूजा रविन्द्र देवीदासनी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था :–

> "17. ..... कंपनी से संबद्ध प्रत्येक व्यक्ति इस उपबंध के दायरे में नहीं आएगा । बारंबार, इस न्यायालय द्वारा इस बात पर बल दिया गया है कि केवल वे व्यक्ति दांडिक कार्रवाई के भागी होंगे, जो अपराध के किए जाने के समय उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी के भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी थे । कोई निदेशक, जो सुसंगत समय पर कंपनी के कारबार के संचालन के लिए भारसाधक और उत्तरदायी नहीं था, परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 141 के अधीन अपराध के लिए दायी नहीं होगा । राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम **बनाम** हरमीत सिंह पेंटल [(2010) 3 एस. सी. सी. 330 = (2010) 1 एस. सी. सी. (सिविल) 677 = (2010) 2 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 1113] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था (एस. सी. सी. पृ. 336, पैरा 13-14) :–
>
> > '13. धारा 141 प्रतिनिधिक दायित्व सृजित करने वाला एक शास्तिक उपबंध है, और जिसका स्थिर विधि के अनुसार कड़ाईपूर्वक अर्थान्वयन किया जाना चाहिए । इसलिए किसी शिकायत में निदेशक की भूमिका के बारे में कुछ और कहे बिना ऐसा अस्पष्ट सरसरी कथन किया जाना पर्याप्त नहीं है कि निदेशक (अभियुक्त के रूप में क्रमबद्ध) कंपनी के कारबार

[1] (2014) 16 एस. सी. सी. 1.

के संचालन के लिए कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी है । किंतु शिकायत में वर्णित होना चाहिए कि प्रत्यर्थी सं. 1 कैसे और किसी रीति में अभियुक्त कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उसका भारसाधक था या उसके प्रति उत्तरदायी था । यह बात शास्तिक कानूनों का कड़ाईपूर्वक निर्वचन करने के अनुकूल है, विशेष रूप से जहां ऐसे कानून प्रतिनिधिक दायित्व सृजित करते हैं ।

14. किसी कंपनी में कई सारे निदेशक हो सकते हैं और किसी शिकायत में किसी या सभी निदेशकों को मात्र इस कथन के आधार पर अभियुक्त बनाना कि वे कंपनी के कारबार के संचालन के लिए भारसाधक और उत्तरदायी हैं, कुछ और कहे बिना इतना पर्याप्त नहीं है और इससे 141 के अधीन अपेक्षाएं पूर्ण नहीं होती हैं ।'

(मूल निर्णय में बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

18. गिरधारी लाल गुप्ता **बनाम** डी. एच. मेहता [(1971) 3 एस. सी. सी. 189 = 1971 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 279 = ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 2162] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि 'किसी कारबार के भारसाधक' व्यक्ति से अभिप्रेत है कि ऐसे व्यक्ति का कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कारबार पर संपूर्ण नियंत्रण होना चाहिए ।

19. किसी कंपनी का निदेशक कंपनी द्वारा किए गए अपराध के लिए दोषसिद्ध किए जाने का तब दायी है यदि वह कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उसका भारसाधक या उसके प्रति उत्तरदायी था/थी या यदि यह साबित हो जाता है कि अपराध संबंधित निदेशक की सम्मति या उसकी मौनानुकूलता में किया गया था, या उसके भागरूप कोई उपेक्षा समझी जा सकती थी । [कर्नाटक राज्य **बनाम** प्रताप चंद (1981) 2 एस. सी. सी. 355 = 1981 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 453 वाला मामला देखें] ।

20. दूसरे शब्दों में, इस न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई

विधि यह है कि किसी कंपनी के निदेशक को कंपनी द्वारा किए गए अपराध के लिए परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 141 के अधीन दायी बनाने के लिए निदेशक के विरुद्ध यह दर्शित करते हुए विनिर्दिष्ट प्रकथन होने चाहिएं कि कैसे और किसी रीति में निदेशक कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उत्तरदायी था ।

21. सबिता राममूर्ति **बनाम** आर. बी. एस. चन्नाबासवराधया [(2006) 10 एस. सी. सी. 581 = (2007) 1 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 621] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया गया था कि [एस. सी. सी. पृ. 584-585, पैरा 7] –

> '7. ..... शिकायकतकर्ता के लिए धारा के शब्दों को विनिर्दिष्ट रूप से उद्धृत करना आवश्यक नहीं है किंतु तथ्य संबंधी स्पष्ट कथन करना आवश्यक है जिससे न्यायालय यह प्रथमदृष्ट्या राय बनाने में समर्थ हो सके कि अभियुक्त प्रतिनिधिक रूप से दायी है । धारा 141 एक विधिक कल्पना उद्भूत करती है । उक्त उपबंध के कारण कोई व्यक्ति यद्यपि ऐसा अपराध करने के लिए व्यक्तिगत रूप से दायी नहीं है, तो भी वह इसके लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी होगा । जहां तक कंपनी अधिनियम, 1956 के अधीन रजिस्ट्रीकृत या निगमित किसी कंपनी का संबंध है, ऐसे प्रतिनिधिक दायित्व का निष्कर्ष केवल तब निकाला जा सकता है यदि ऐसे अपेक्षित कथन, जिनका शिकायत में किया जाना अपेक्षित है, किए गए हैं जिससे इस शिकायत में अभियुक्त को कंपनी द्वारा किए गए अपराध के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी बनाया जा सके ।'

साक्ष्य द्वारा समर्थित तथ्य के किसी स्पष्ट कथन के बिना, जिससे अभियुक्त को प्रतिनिधिक रूप से दायी बनाया जा सके, धारा के शब्दों को शब्दश: उद्धृत करना ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 141 के अधीन आरंभ की गई कार्यवाहियों को अभिखंडित करने का एक आधार है ।"

18. इस प्रकार, स्पष्ट रूप से यह देखा जा सकता है कि इस

न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि धारा के शब्दों को मात्र उद्धृत करके तथ्य संबंधी इस स्पष्ट कथन के बिना कि कैसे और किस रीति में कंपनी का कोई निदेशक कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उत्तरदायी था, निदेशक को स्वत: प्रतिनिधिक रूप से दायी नहीं बनाएगा ।

19. **के. के. आहूजा** बनाम **वी. के. वोहरा और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा पूर्व में इसी प्रकार का मत अपनाया गया था ।

20. **राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र दिल्ली राज्य** मार्फत **अभियोजन अधिकारी, कीटनाशी, राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र दिल्ली सरकार** बनाम **राजीव खुराना**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने इस स्थिति को इस प्रकार दोहराया था :–

> "17. इन सभी मामलों का विनिश्चयाधार यह है कि शिकायतकर्ता के लिए शिकायत में यह उल्लेख करना अपेक्षित है कि कैसे कोई निदेशक, जिसे अभियुक्त बनाए जाने की ईप्सा की गई है, कंपनी के कारबार का भारसाधक था या कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उत्तरदायी था । यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक निदेशक कंपनी के कारबार का भारसाधक हो और भारसाधक नहीं होता है । यदि किसी निदेशक के विषय में यह स्थिति है, तो इस बात पर बल देने की आवश्यकता नहीं है कि गैर-निदेशक अधिकारियों की दशा में यह उल्लेख करना और भी आवश्यक हो कि कंपनी के कारबार के संचालन में उसके कर्तव्य और उसका दायित्व क्या थे तथा कैसे और किस रीति में वह उत्तरदायी या दायी है ।"

21. हाल ही में, **अशोक मल बाफ्ना** बनाम **अप्पर इंडिया स्टील मैनुफेक्चरिंग एंड इंजीनियरिंग कंपनी लिमिटेड**[3] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था :–

> "9. अधिनियम की धारा 141 के अधीन किसी व्यक्ति पर

---

[1] (2009) 10 एस. सी. सी. 48.

[2] (2010) 11 एस. सी. सी. 469.

[3] (2018) 14 एस. सी. सी. 202.

प्रतिनिधिक दायित्व डालने के लिए इस न्यायालय द्वारा अनेक मामलों में यह विधि स्थिर की गई है कि शिकायतकर्ता को विनिर्दिष्ट रूप से दर्शित करना चाहिए कि अभियुक्त कैसे और किस रीति में उत्तरदायी था । मात्र इस कारण कि कोई व्यक्ति किसी व्यतिक्रमी कंपनी का निदेशक है, यह बात उसे अधिनियम के अधीन दायी नहीं बनाती है । बारंबार, इस न्यायालय द्वारा इस बात पर बल दिया गया है कि केवल वह व्यक्ति जो कंपनी के कार्यकलापों के शीर्ष पर था और अपराध के किए जाने के समय कारबार के संचालन के लिए भारसाधक और उत्तरदायी था, दांडिक कार्रवाई के लिए दायी होगा । [पूजा रविन्द्र देवीदासनी **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (2014) 16 एस. सी. सी. 1 = (2015) 3 एस. सी. सी. 384 = (2015) 3 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 378 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 675 वाला मामला देखें] ।

10. दूसरे शब्दों में, इस न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई विधि यह है कि किसी कंपनी के निदेशक को कंपनी द्वारा किए गए अपराधों के लिए अधिनियम की धारा 141 के अधीन दायी बनाने के लिए निदेशक के विरुद्ध यह दर्शित करते हुए विनिर्दिष्ट प्रकथनों का होना आवश्यक है कि कैसे और किस रीति में निदेशक कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उत्तरदायी था ।"

22. इन मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए, जहां तक वर्तमान अपीलार्थियों का संबंध है, अब हम शिकायत में किए गए प्रकथनों की परीक्षा करते हैं :

"3. यह कि अभियुक्त सं. 5 से 8 मैसर्स कैचेट फार्मासियुटिकल्स प्रा. लि., गांव थाना बड्डी, तहसील नालागढ़, जिला सोलन (हिमाचल प्रदेश) पिन कोड 173205, मुख्यालय 415, शाहानाहर, वर्ली, मुंबई - 400018 के निदेशक हैं और कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्यकलापों की देखभाल कर रहे हैं ।

यह कि अभियुक्त सं. 4 प्राइवेट लिमिटेड कंपनी है और फार्मासियुटिकल्स, कॉस्मेटिक्स, सौंदर्यवर्धक पदार्थ, तेल, रसायन,

खाद्य उत्पाद और समभार, पशु चिकित्सा और शल्यक्रिया संबंधी उपकरण, स्प्रिट सहित औषधीय निर्मितियों के विनिर्माण, क्रय, विक्रय आयात और निर्यात और/या व्यौहारी का कारबार कर रही है ।

यह कि अभियुक्त सं. 4 की सं. (1) पर की विनिर्माण इकाई गांव थाना बड्डी, तहसील नालागढ़ जिला सोलन (हिमाचल प्रदेश) पिन कोड 173205 में और सं. (2) पर की विनिर्माण इकाई सी-582, रिक्को औद्योगिक क्षेत्र भिवाड़ी, जिला अलवर, राजस्थान में है ।

यह कि अभियुक्त सं. 4 प्ररूप 25 में औषधि विनिर्माण अनुज्ञप्ति सं. एमएनबी/05/267 और प्ररूप 28 में अनुज्ञप्ति सं. एमबी/05/268 धारण कर रही है जो 17 मार्च, 2006 को प्रदान की गई थी और तारीख 16 मार्च, 2011 तक विधिमान्य हैं ।

* * * *

25. यह कि तारीख 12 फरवरी, 2009 को शिकायतकर्ता ने मैसर्स कैचेट फार्मासियुटिकल्स प्राइवेट लिमिटेड, गांव थाना बड्डी, तहसील नालागढ़, जिला सोलन (हिमाचल प्रदेश) पिन कोड 173205 जो अभियुक्त सं. 4 है, के परिसरों का निरीक्षण किया था । निरीक्षण के समय, श्री अजय प्रकाश गुप्ता, उपाध्यक्ष तकनीकी, अभियुक्त सं. 9 और 10 मौजूद थे । जांच के दौरान यह प्रकट हुआ था कि अभियुक्त सं. 4 से 10 ने अनुज्ञप्ति सं. एमबी/05/268 के अधीन "हेम्फर सिरप" का विनिर्माण किया था जिसकी विनिर्माण तारीख मई-2006 है, जिसे मैसर्स कैचेट फार्मासियुटिकल्स प्राइवेट लिमिटेड, गांव थाना बड्डी, तहसील नालागढ़, जिला सोलन (हिमाचल प्रदेश) पिन कोड 173205, जो अभियुक्त सं. 4 है, के परिसरों में मानक गुणवत्ता का न होना घोषित किया गया था और उपरोक्त औषधियों को मैसर्स प्रिया एजेंसिज, डा. वैद्य अस्पताल के पीछे स्थित, जालना रोड, बीड, जिला बीड को रियलिटी वेयरहाउसिंग प्राइवेट लिमिटेड, गाटा सं. 2323/1 संपत्ति सं. 115, पुणे नगर रोड, डाक वाघोली, तहसील हवेली, जिला पुणे – 412207 के माध्यम से बेचा गया था ।"

23. इस प्रकार, जहां तक वर्तमान अपीलार्थियों का संबंध है, यह देखा जा सकता है कि कोई विनिर्दिष्ट प्रकथन नहीं हैं । यह भी उल्लेखनीय है कि वर्तमान अपीलार्थी न तो अभियुक्त कंपनी के प्रबंध निदेशक हैं और न ही पूर्णकालिक निदेशक हैं ।

24. यह भी उल्लेखनीय है कि प्ररूप 28 के साथ पठित उक्त नियमों के नियम 76 के उपबंधों के अनुसार, अभियुक्त सं. 9 और 10 को अनुज्ञप्ति प्राधिकारी द्वारा प्ररूप 28 में विनिर्दिष्ट रूप से अनुमोदित किया गया है । अभियुक्त सं. 9 ऐसे व्यक्ति के रूप में अनुमोदित था जिसके सक्रिय निदेशन और व्यक्तिगत पर्यवेक्षणाधीन उक्त नियमों के नियम 76 के उप नियम (1) के अधीन की गई अपेक्षानुसार विनिर्माण किया जाएगा । इसी प्रकार, अभियुक्त सं. 10, जो परीक्षण इकाई के मुखिया के रूप में अनुमोदित था, उसे उक्त नियमों के भाग भ के उपबंधों के अधीन अपेक्षित अनुसार पदार्थों की सांद्रता, गुणवत्ता और शुद्धता का परीक्षण करने के लिए भारसाधक होना चाहिए था । अत: हमारी यह सुविचारित राय है कि शिकायत में उक्त अधिनियम की धारा 34 में की गई अपेक्षा की पूर्ण रूप से कमी है ।

25. आक्षेपित आदेश एक अन्य आधार पर भी अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य हैं ।

26. उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश के परिशीलन से स्वत: यह प्रकट होता है कि विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने आदेशिका जारी करने का एक औपचारिक आदेश पारित करने तक की परवाह नहीं की थी । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के निर्णय और आदेश के निम्नलिखित भाग को निर्दिष्ट करना सुसंगत होगा :–

> "..... यद्यपि यह सही है कि याचियों द्वारा प्रस्तुत की गई प्रमाणित प्रति में कोई ऐसा औपचारिक आदेश नहीं है किंतु रोजनामचा (कार्यवाही के रोजमर्रा के टिप्पण) की प्रति से यह दर्शित होता है कि ऐसा आदेश तारीख 30 मार्च, 2009 को किया गया था । तारीख 30 मार्च, 2009 का रोजनामचा निम्न प्रकार से

है –

(i) विलास विश्वनाथ दुसाने द्वारा फाइल की गई शिकायत ।

(ii) दस्तावेजों की सूची की प्रति जिसमें 44 दस्तावेज हैं ।

आदेश प्रदर्श-1 (आदेशिका जारी करने के) के आधार पर किया गया था । आपराधिक मामलों के रजिस्टर में प्रविष्टि की जाए और अभियुक्तों के विरुद्ध समन जारी किए जाएं । अभियुक्तों की हाजिरी के लिए मामले को तारीख 18 जून, 2009 के लिए सूचीबद्ध किया जाए ।

यह अभिलेख यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त है कि आदेशिका जारी करने का आदेश किया गया था और उसके पश्चात् अभियुक्तों के विरुद्ध उन्हें न्यायालय में हाजिर होने के लिए कहते हुए समन जारी किए गए थे ।"

27. इस प्रकार, स्पष्ट रूप से यह देखा जा सकता है कि उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया था कि यद्यपि आदेशिका जारी करने का कोई औपचारिक आदेश नहीं था, तो भी यह निष्कर्ष निकालने के लिए अभिलेख पर्याप्त है कि आदेशिका जारी करने का आदेश किया गया था ।

28. आदेशिका जारी करने का आदेश एक खोखली औपचारिकता नहीं है । मजिस्ट्रेट से यह अपेक्षा की जाती है कि वह इस बारे में अपने मस्तिष्क का प्रयोग करें कि क्या मामले में कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार विद्यमान है या नहीं । ऐसी राय बनाने का उल्लेख स्वत: आदेश में किया जाना चाहिए । आदेश अपास्त किए जाने योग्य होगा यदि इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामला है, उसमें कोई कारण नहीं दिए गए हैं । निस्संदेह, आदेश में विस्तृत कारणों को अंतर्विष्ट किए जाने की आवश्यकता नहीं है । इस संबंध में **सुनील भारती मित्तल** बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय के प्रतिनिर्देश किया जा सकता है :–

[1] (2015) 4 एस. सी. सी. 609.

"51. दूसरी ओर, संहिता की धारा 204 आदेशिका जारी करने के संबंध में है, यदि किसी अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट की राय में कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार हैं । यह धारा दांडिक कार्यवाही के प्रारंभ होने के संबंध में है । यदि किसी मामले का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट का (यह शिकायत प्राप्त करने वाला मजिस्ट्रेट हो सकता है या जिसे धारा 192 के अधीन शिकायत को अंतरित किया गया है) अपने समक्ष सामग्री (अर्थात् शिकायत, शिकायतकर्ता और उसके साक्षियों, यदि मौजूद हैं, की परीक्षा या जांच की रिपोर्ट, यदि कोई है) पर विचार करने के उपरांत यह विचार है कि किसी अपराध के संबंध में कार्यवाही करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला है, तो वह अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका जारी करेगा ।

52. आदेशिका जारी करने या इनकार करने के बारे में व्यापक विवेकाधिकार दिया गया है और इसका प्रयोग न्यायसम्मत रूप से किया जाना चाहिए । किसी व्यक्ति को मात्र इस कारण से न्यायालय में नहीं घसीटा जाना चाहिए कि उसके विरुद्ध कोई शिकायत फाइल की गई है । यदि प्रथमदृष्ट्या मामला बनाया गया है, तो मजिस्ट्रेट को आदेशिका जारी करनी चाहिए और इससे मात्र इस कारण इनकार नहीं किया जा सकता कि उसका विचार है कि दोषसिद्धि होने की संभावना नहीं है ।

53. तथापि, धारा 204 में प्रकट होने वाले 'कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार' शब्द का अत्यधिक महत्व है । यही वे शब्द हैं जिनसे स्पष्ट रूप से यह सुझाव मिलता है कि राय केवल मस्तिष्क का इस बारे में सम्यक् रूप से प्रयोग करने के पश्चात् बनाई जानी चाहिए कि उक्त अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है और ऐसी राय बनाने का उल्लेख स्वत: आदेश में किया जाना चाहिए । आदेश अपास्त किए जाने योग्य होगा यदि इस निष्कर्ष पहुंचते हुए कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामला है, कोई कारण नहीं दिए गए हैं, यद्यपि आदेश में कारणों

को विस्तारपूर्वक दिए जाने की आवश्यकता नहीं है । प्रबलतर युक्ति से, ऐसा आदेश विधि की दृष्टि से दूषित होगा यदि दिए गए कारण देखते ही गलत दिखाई पड़ते हैं ।"

29. **अशोक मल बाफ्ना** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया गया है ।

30. वर्तमान मामले में, आदेशिका जारी किए जाने के आदेश के समर्थन में कोई कारण न होने की बात तो एक तरफ, वस्तुत: उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश से यह स्पष्ट है कि ऐसा कोई आदेश पारित ही नहीं किया गया था । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अभिलेख के आधार पर यह उपधारणा की थी कि आदेशिका जारी किए जाने का आदेश किया गया था । हमारा निष्कर्ष है कि ऐसा दृष्टिकोण विधि में असंधार्य है । इसलिए यह अपील मंजूर किए जाने योग्य है ।

31. परिणामत: यह अपील मंजूर की जाती है । विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बीड द्वारा पारित तारीख 30 मार्च, 2009 का आदेशिका जारी किए जाने का आदेश और विद्वान् सेशन न्यायाधीश, बीड द्वारा 2013 के दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 115 को खारिज करते हुए तारीख 25 नवंबर, 2014 को पारित किया गया आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाते हैं । वर्तमान अपीलार्थियों के विरुद्ध शिकायत को खारिज किया जाता है । यह उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है कि शेष अभियुक्तों के विरुद्ध शिकायत पर विधि के अनुसार कार्यवाही की जाएगी ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 44

मरिनो एंटो ब्रुनो और एक अन्य

बनाम

पुलिस निरीक्षक

[2022 की दांडिक अपील सं. 1628]

12 अक्तूबर, 2022

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति कृष्ण मुरारी

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 306, 498क और 107 – आत्महत्या का दुष्प्रेरण और स्त्री के साथ पति या पति के नातेदारों द्वारा क्रूरता – अपीलार्थियों द्वारा अभिकथित रूप से मृतका के साथ अधिक दहेज की मांग करके और एक बालक के जन्म के पश्चात् एक अन्य बालक के लिए गर्भ धारण करने को लेकर क्रूरता किया जाना और आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया जाना और उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – संधार्यता – किसी व्यक्ति को धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए उसकी स्पष्ट आपराधिक मन:स्थिति का होना आवश्यक है और उसके द्वारा मृतक व्यक्ति की मृत्यु से ठीक पूर्व ऐसा प्रत्यक्ष या स्पष्ट कृत्य किया गया होना चाहिए जिसके कारण उसे कोई अन्य विकल्प दिखाई न देते हुए आत्महत्या करनी पड़ी हो और जहां अभियुक्तों और मृतका के परिवार के बीच संबंध विवाह के नौ वर्षों के दौरान सौहार्दपूर्ण रहे हों और मृतका को यातना देने या तंग करने या दहेज की कोई मांग करने का कोई साक्ष्य न हो और मृतका या उसके परिवार वालों द्वारा कभी कोई शिकायत तक न की गई हो, मृतका बाइपोलर डिसआर्डर और अवसाद से ग्रस्त हो और अभियुक्त-पति द्वारा मनोचिकित्सक के पास उसका उपचार कराया गया हो, वहां अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध मृतका को आत्महत्या के लिए उकसाने और दहेज की मांग के लिए क्रूरता या तंग करने का कोई सटीक और विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत न करने और उनके विरुद्ध मामले को

युक्तियुक्त संदेह के परे साबित न करने के कारण उन्हें दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी सं. 1 और डा. एम. अमाली विक्टोरिया (जिसे इसमें इसके पश्चात् "मृतका" कहा गया है) के बीच विवाह तारीख 8 सितंबर, 2005 को अनुष्ठापित हुआ था और इस विवाह बंधन से वर्ष 2007 में एक पुत्र का जन्म हुआ । पेशे से दोनों पक्षकार डाक्टर हैं । अपीलार्थी सं. 1 को तारीख 5 नवंबर, 2014 को सूचित किया गया कि मृतका अपने घर के स्नानघर में ढेर हो गई है और कोई उत्तर नहीं दे रही है । अपीलार्थी सं. 1 के पिता द्वारा तुरंत एंबुलेंस बुलाई गई । घटनास्थल पर पहुंचने पर अपीलार्थी सं. 1 ने पाया कि मृतका की कोई नब्ज नहीं चल रही थी । अपीलार्थी सं. 1 के पड़ोसियों, जो डाक्टर थे, के बीच-बचाव के बावजूद मृतका को पुनर्जीवित नहीं किया जा सका और तारीख 5 नवंबर, 2014 को उसकी मृत्यु हो गई । तारीख 6 नवंबर, 2014 को प्रत्यर्थी-पुलिस ने मृतका की अस्वाभाविक मृत्यु को लेकर अपीलार्थी सं. 1 के कथन के आधार पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की । मृतका की मृत्यु के तीन सप्ताह के पश्चात्, मृतका की माता (अभि. सा. 1) ने अपीलार्थी सं. 1, अपीलार्थी सं. 2 (सास) और मृतका के ससुर के विरुद्ध यह अभिकथन करते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक शिकायत दर्ज की कि चूंकि मृतका को डेढ़ वर्ष तक कोई बालक नहीं हुआ था, इसलिए अभियुक्त उसके साथ गाली-गलौज करते थे और उसे पूजा में भाग लेने के लिए बाध्य करते थे और इससे इनकार करने पर उनके द्वारा उसे धमकी दी गई थी कि वह मर जाएगी । बाद में, मृतका ने वर्ष 2007 में शल्य प्रसव द्वारा एक पुत्र को जन्म दिया । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी सं. 1 ने मृतका को एक अन्य बालक पैदा करने के लिए बाध्य करते हुए इस तथ्य के बावजूद घोर मानसिक यातना दी कि मृतका का उसके दूसरे गर्भाधान से गर्भपात हो गया था । मृतका से सारा घरेलू कार्य कराया जाता था और अपीलार्थियों के हाथों लगातार क्रूरता की गई थी । इसी कारण से मृतका को तारीख 5 नवंबर, 2014 को आत्महत्या करनी पड़ी । उसके पश्चात्, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को दंड

प्रक्रिया संहिता की धारा 174 से भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 में परिवर्तित किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन अपराधों के लिए आरोप विरचित किए । विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्षियों द्वारा किए गए कथन और प्रतिरक्षा पक्ष के साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् अपीलार्थियों अर्थात् मृतका के पति और सास को भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । विचारण न्यायालय ने मृतका के ससुर को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील फाइल की गई जिसे यह मत व्यक्त करते हुए खारिज कर दिया गया कि अपीलार्थियों ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन अपराध कारित किया है और विचारण न्यायालय ने ठीक ही साक्ष्य का मूल्यांकन किया है और इस अपील में अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है । अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित– उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष अभिलिखित करने में गलती की है कि अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है और इस तथ्य की अनदेखी की है कि अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य विद्यमान नहीं है जिससे यह उपदर्शित होता हो कि अपीलार्थियों द्वारा मृतका को उसकी मृत्यु से ठीक पूर्व तंग किया गया था । यह सुस्थिर है कि न केवल लगातार तंग करने का साक्ष्य होना चाहिए अपितु अभियुक्त द्वारा किए गए सकारात्मक कार्य को सिद्ध करने के लिए ऐसा सटीक साक्ष्य होना चाहिए जो कमोवेश घटना के समय के निकट का हो और यह कहा जा सके कि व्यक्ति उस कार्य के कारण आत्महत्या करने के लिए प्रेरित या बाध्य हुआ था । प्रस्तुत मामले में, आत्महत्या करने के समय के ठीक निकट न केवल उक्त सकारात्मक कार्य का अभाव है अपितु अपीलार्थियों

द्वारा मृतका को लगातार शारीरिक या मानसिक यातना देने का कोई साक्ष्य नहीं है । इसके विपरीत, अपीलार्थी सं. 1 स्वयं इस घटना से ठीक एक दिन पूर्व मृतका को एक मनोचिकित्सक के पास परामर्श के लिए लेकर गया था और इसका स्पष्ट आशय यह था कि वह बेहतर महसूस कर सके । उक्त कार्य को तनिक संदेह के बिना कोई ऐसा कार्य नहीं कहा जा सकता जिसके कारण मृतका ने आत्महत्या की हो । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 द्वारा अपने कथन में अपीलार्थियों द्वारा विवाह के तुरंत पश्चात् मृतका को लगातार तंग करने या यातना देने के विषय में किए गए अभिकथन विश्वसनीय नहीं हैं और इस पर इस तथ्य के कारण थोड़ा ही विश्वास किया जाना चाहिए कि उनके विवाह के नौ वर्षों के आद्योपांत न तो मृतका द्वारा और न ही उसके परिवार के सदस्यों द्वारा, जो अभियोजन साक्षियों के रूप में उपसंजात हुए थे, इस संबंध में कभी कोई शिकायत की गई थी या कानाफूंसी तक की गई थी । यहां तक कि मृतका, जो एक अर्हित डाक्टर थी, ने इस संबंध में कभी कोई शिकायत नहीं की थी । इस बात पर विश्वास करना सचमुच मुश्किल है कि एक सुशिक्षित और आत्मनिर्भर महिला नौ वर्ष की पर्याप्त लंबी अवधि तक ऐसी बातें सहन करती रहेगी । किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए अपराध कारित करने की स्पष्ट आपराधिक मन:स्थिति होनी चाहिए । इसके लिए ऐसा सक्रिय कार्य या प्रत्यक्ष कार्य भी होना चाहिए जिसके कारण मृतका ने कोई अन्य विकल्प न पाकर आत्महत्या करनी पड़ी और यह कृत्य अवश्य ऐसा होना चाहिए जिससे अभियुक्त का आशय मृतका को ऐसी स्थिति में धकेलने का प्रतिबिंबित होता हो कि वह आत्महत्या कर लेगा । अभियोजन पक्ष को युक्तियुक्त संदेह के परे यह सिद्ध करना चाहिए कि मृतका ने आत्महत्या की थी और अपीलार्थी सं. 1 ने मृतका को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था । प्रस्तुत मामले में दोनों अवयव नहीं हैं । इस न्यायालय ने बारंबार यह दोहराया है कि किसी अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने से पूर्व न्यायालय को अवश्य सावधानीपूर्वक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की परीक्षा करनी चाहिए और उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का भी यह पता लगाने के लिए निर्धारण

करना चाहिए कि क्या विपदग्रस्त के साथ किए गए उत्पीड़न और क्रूरता के कारण उसके पास अपने जीवन का अंत करने के सिवाय कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था । यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि आत्महत्या के लिए अभिकथित दुष्प्रेरण के मामलों में आत्महत्या करने के लिए उकसाने के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कार्यों का सबूत होना चाहिए । अभियुक्तों की ओर से घटना के समय के निकट उनके किसी सकारात्मक कार्य के बिना, जिसके कारण व्यक्ति आत्महत्या करने के लिए प्रेरित या बाध्य हुआ, मात्र उत्पीड़न के अभिकथन के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के निबंधनों के अनुसार की गई दोषसिद्धि संधार्य नहीं है । (पैरा 34, 35, 36 और 38)

अब, जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि का संबंध है, अभियोजन साक्षियों अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के घटना के पश्चात् अभिलिखित किए गए कथन के सिवाय दहेज की कोई मांग करने या मृतका के विवाह के दौरान उसके साथ दुर्व्यवहार करने के अभिकथन को सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है । इस तथ्य को विवादग्रस्त नहीं किया गया है कि अपीलार्थी सं. 1 और मृतका के परिवारों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध थे । मृतका ने तारीख 5 नवंबर, 2014 को आत्महत्या की थी और अपीलार्थियों के विरुद्ध शिकायत तारीख 24 नवंबर, 2014 को अर्थात् मृतका की मृत्यु के तीन सप्ताह पश्चात् फाइल की गई थी । अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 हितबद्ध साक्षी हैं, फिर भी अभि. सा. 3 ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि "मेरी बहिन डा. अमाली विक्टोरिया और डा. ब्रुनो के बीच विवाह एक प्रसन्नतापूर्वक विवाह था" । इस प्रकार न केवल उसके अपने कथन में तात्विक विरोधाभास है अपितु अन्य दो साक्षियों के कथन में भी विरोधाभास है । अभि. सा. 9 डा. शालिनी वह मनोचिकित्सक है, जिसने तारीख 4 नवंबर, 2014 को मृतका का उपचार किया था । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृतका ने अपनी ड्यूटी करने में अरुचि जाहिर की थी, कम नींद आने और भूख न लगने और किसी बात में भी कोई रुचि न होने की शिकायत की थी । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 9 ने कथन किया था कि ये अवसाद के लक्षण थे । अभि. सा. 9 ने तारीख 4

नवंबर, 2014 की अपनी उपचार रिपोर्ट के सारांश में यह उल्लेख किया था कि मृतका ने पिछले एक माह से अपनी उदासी का कारण आईएमएच के महिला वार्ड में उसकी तैनाती होना बताया था और वह थकावट महसूस कर रही थी, कार्य में रुचि नहीं थी, ये अल्प निद्रा होने के कुछ कारण कहे जा सकते हैं । इसके अतिरिक्त, यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि अभि. सा. 9 द्वारा उपचार के सारांश में यह भी उल्लेख किया था कि मृतका को पूर्व में भी अर्थात् कालेज के दिनों में एमबीबीएस करने के दौरान प्रथम घटनाक्रम में इसी प्रकार की अवसादात्मक रुग्णता थी, आत्महत्या करने का प्रयत्न किया था, दूसरा घटनाक्रम प्रसव-पश्चात् का था और वर्तमान तीसरा घटनाक्रम है । मृतका को तारीख 4 नवंबर, 2014 को मनोचिकित्सक के पास परामर्श के लिए ले जाने से पूर्व आत्महत्या संबंधी विचार आ रहे थे और यह बात उपचार के सारांश से स्पष्ट है । तथापि, अभि. सा. 9 अर्थात् मनोचिकित्सक के साक्ष्य पर निचले न्यायालयों द्वारा विचार नहीं किया गया था और अपीलार्थियों की दोषसिद्धि एकमात्र रूप से अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के मौखिक साक्ष्य पर आधारित थी । तद्नुसार, प्रस्तुत मामले में के तथ्यों और साक्ष्यों, जिनका विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय, दोनों द्वारा पूरी तरह विश्लेषण नहीं किया गया था, का सारांश निम्नलिखित रूप में दिया जा सकता है – 1. अपीलार्थियों के विरुद्ध शिकायत मृतका की मृत्यु के तीन सप्ताह पश्चात् फाइल की गई थी । 2. अपीलार्थियों द्वारा मृतका के साथ की गई क्रूरता के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अभिकथित अपराध के विषय में तनिक भी साक्ष्य नहीं है । 3. अपीलार्थी सं. 1 और मृतका के बीच उनके वैवाहिक जीवन के नौ वर्षों के दौरान कोई वैवाहिक अनबन नहीं थी । 4. अपीलार्थी सं. 1 और मृतका की बहिनों के बीच कई सारी ई-मेल का आदान-प्रदान हुआ था जिनके द्वारा अपीलार्थी सं. 1 की मृतका की सर्वोत्तम संभव रीति में देखरेख करने के लिए सराहना की गई थी और उसके माता-पिता को भी मृतका के कैरियर में सहायता करने के लिए श्रेय दिया गया था । इसके अतिरिक्त, मृतका की बहिन ही थी, जिसने स्वयं यह कहते हुए अपीलार्थी सं. 1 एक ई-मेल भेजी थी कि "अमाली एक विकार का सामना कर रही है" । 5. मृतका द्विध्रुवीय

विकार (बाइपोलर डिसआर्डर) से ग्रस्त थी और आत्महत्या करने के कुछ दिनों पूर्व से आत्महत्या करने संबंधी विचार भी थे । इसके अतिरिक्त, मृतका का अवसाद के लिए भी उपचार चल रहा था क्योंकि वह थकावट, अल्प निद्रा, निराशाजनक विचार जैसे अवसाद के बड़े लक्षण दिखा रही थी । इस तथ्य को कि मृतका द्विध्रुवीय विकार (बाइपोलर डिसआर्डर) से ग्रस्त थी, अपीलार्थी के परिवार से उनके विवाह के दौरान छिपाया गया था । 6. विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और 498क के अधीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि करते समय अभि. सा. 9, मनोचिकित्सक के साक्ष्य पर विचार नहीं किया था । 7. अपीलार्थियों की दोषसिद्धि एकमात्र रूप से मृतका की माता और बहिन के मौखिक साक्ष्य पर आधारित है, जो हितबद्ध साक्षी हैं । 8. मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में मृत्यु का कारण नहीं दिया गया है किंतु तारीख 15 दिसंबर, 2014 को मृत्यु का कारण बाह्य रूप से दबाने के कारण हुआ श्वसावरोध दिखाया गया है । मामले के पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य तथा अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत की गई अन्य सामग्री का मूल्यांकन करने के उपरांत इस न्यायालय का यह मत है कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को गलत रूप से दोषसिद्ध किया था और उच्च न्यायालय ने भी अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखकर न्यायोचित नहीं किया था । (पैरा 40, 41, 43 और 44)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2021]	2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 873 : **जियो वर्गिस** बनाम **राजस्थान राज्य और एक अन्य** ;	24
[2020]	(2020) 15 एस. सी. सी. 359 : **राजेश** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	15
[2020]	(2020) 10 एस. सी. सी. 200 : **गुरचरण सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	15

[2019] (2019) 17 एस. सी. सी. 301 :
उदय सिंह और अन्य बनाम **हरियाणा राज्य** ; 15, 26

[2019] (2019) 3 एस. सी. सी. 315 :
एम. अर्जुनन बनाम **राज्य, इसके पुलिस निरीक्षक की मार्फत** ; 25

[2010] (2010) 1 एस. सी. सी. 707 :
अमलेंदु पाल बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** ; 15

[2001] (2001) 9 एस. सी. सी. 618 :
रमेश कुमार बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** । 42

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 1628.

2021 की दांडिक अपील सं. 166 में मद्रास उच्च न्यायालय के तारीख 31 जनवरी, 2022 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री कपिल सिब्बल, ज्येष्ठ अधिवक्ता, अर्जुन गर्ग, अपराजिता जामवाल, अजिलेश कुमार एस., आकाश नंदोलिया, (सुश्री) सुगन श्रीवास्तव और (सुश्री) अपराजिता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री पी. वी. योगेश्वरन, आशीष उपाध्याय, वाई. लोकेश, वी. सिबी कर्जिल, वी. कांधा प्रभु, अर्जुन सिंह, अनुभव चतुर्वेदी, पंकज कुमार अग्रवाल, सूर्यनारायण पत्रो, एल. आर. वेंकटेसन, के. कुमारवाडिवेल, (सुश्री) शिवानी तुषीर और (सुश्री) मैत्री गोयल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति कृष्ण मुरारी ने दिया ।

न्या. मुरारी – वर्तमान अपील अपीलार्थियों द्वारा 2016 के सेशन मामला सं. 2009 में सेशन न्यायाधीश, महिला न्यायालय, चेन्नै (जिसे इसमें इसके पश्चात् "विचारण न्यायालय" कहा गया है) द्वारा भारतीय

दंड संहिता की धारा 498क और 306 के अधीन पारित की गई दोषसिद्धि के आदेश को अपास्त करने की ईप्सा करते हुए फाइल की गई 2021 की दांडिक अपील सं. 166 में मद्रास उच्च न्यायालय (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उच्च न्यायालय" कहा गया है) द्वारा तारीख 31 जनवरी, 2022 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । अपीलार्थियों में से प्रत्येक को भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन तीन वर्ष का कारावास भुगतने और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक माह का साधारण कारावास भुगतने और भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन सात वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 25,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का साधारण कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि को कायम रखा ।

2. इस अपील के प्रयोजन के लिए सुसंगत तथ्य, संक्षेप में, निम्नलिखित हैं –

2.1 अपीलार्थी सं. 1 और डा. एम. अमाली विक्टोरिया (जिसे इसमें इसके पश्चात् "मृतका" कहा गया है) के बीच विवाह तारीख 8 सितंबर, 2005 को अनुष्ठापित हुआ और इस विवाह बंधन से वर्ष 2007 में एक पुत्र का जन्म हुआ । पेशे से दोनों पक्षकार डाक्टर हैं । अपीलार्थी सं. 1 को तारीख 5 नवंबर, 2014 को सूचित किया गया कि मृतका अपने घर के स्नानघर में ढेर हो गई है और कोई उत्तर नहीं दे रही है । अपीलार्थी सं. 1 के पिता द्वारा एक तुरंत एंबुलेंस बुलाई गई । घटनास्थल पर पहुंचने पर अपीलार्थी सं. 1 ने पाया कि मृतका की कोई नब्ज नहीं चल रही थी । अपीलार्थी सं. 1 के पड़ोसियों, जो डाक्टर थे, के बीच-बचाव के बावजूद मृतका को पुनर्जीवित नहीं किया जा सका और तारीख 5 नवंबर, 2014 को उसकी मृत्यु हो गई । तारीख 6 नवंबर, 2014 को शव की मरणोत्तर परीक्षा की गई और मृत्यु का कारण गर्दन को बाहर से दबाने की वजह से श्वासोवरुद्ध हो जाना था ।

2.2 तारीख 6 नवंबर, 2014 को प्रत्यर्थी-पुलिस ने मृतका की अस्वाभाविक मृत्यु को लेकर अपीलार्थी सं. 1 के कथन के आधार पर पुलिस थाना के-2, अयानावरम, जिला किलपौक, चेन्नै में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "दंड प्रक्रिया संहिता" कहा गया है) की धारा 174 के अधीन 2015 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 1865 रजिस्ट्रीकृत की ।

2.3 मृतका की मृत्यु के तीन सप्ताह के पश्चात्, अभि. सा. 1 (मृतका की माता) ने अपीलार्थी सं. 1, अपीलार्थी सं. 2 (सास) और मृतका के ससुर के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक शिकायत दर्ज की । उसके पश्चात्, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 से भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 में परिवर्तित किया गया ।

2.4 अभियोजन का पक्षकथन यह था कि अपीलार्थी सं. 1 के साथ मृतका का विवाह वर्ष 2005 में अनुष्ठापित हुआ था और चूंकि मृतका को 1.5 वर्ष तक कोई बालक नहीं हुआ था, इसलिए अपीलार्थी उसके साथ गाली-गलौज करते थे और उसे पूजा में भाग लेने के लिए बाध्य करते थे और इससे इनकार करने पर अपीलार्थियों द्वारा उसे धमकी दी गई थी कि वह मर जाएगी । बाद में, मृतका ने वर्ष 2007 में शल्य-प्रसव द्वारा रोसांडो नामक एक पुत्र को जन्म दिया । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी सं. 1 ने मृतका को एक अन्य बालक पैदा करने के लिए बाध्य करते हुए इस तथ्य के बावजूद घोर मानसिक यातना दी कि मृतका का उसके दूसरे गर्भाधान से गर्भपात हो गया था । मृतका से सारा घरेलू कार्य कराया जाता था और अपीलार्थियों के हाथों लगातार क्रूरता की गई थी । इसी कारण से मृतका को तारीख 5 नवंबर, 2014 को आत्महत्या करनी पड़ी ।

3. उसके पश्चात्, अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोप पत्र फाइल किया गया और संज्ञान लिया गया । चूंकि ये अपराध सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है इसलिए उक्त मामले को, जो 2016 का सेशन मामला सं. 2009 है, विचारण के लिए महिला न्यायालय, चेन्नै के सुपुर्द किया

गया ।

4. विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन अपराधों के लिए आरोप विरचित किए । अपीलार्थियों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और इसलिए उनका पूर्वोक्त अपराध के लिए विचारण किया गया ।

5. अभियोजन पक्ष ने मामले को सिद्ध करने के लिए 15 साक्षियों की परीक्षा की । प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से किसी साक्षी की परीक्षा नहीं की गई थी । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपीलार्थियों के कथन भी अभिलिखित किए गए थे ।

6. विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्षियों द्वारा किए गए कथन और प्रतिरक्षा पक्ष के साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् तारीख 26 मार्च, 2021 के निर्णय और आदेश द्वारा अपीलार्थियों अर्थात् मृतका के पति और सास को भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और इसमें ऊपर उल्लिखित अनुसार दंडादिष्ट किया । विचारण न्यायालय ने मृतका के ससुर को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया ।

7. अपीलार्थियों ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष 2021 की दांडिक अपील सं. 166 फाइल की । इसे यह मत व्यक्त करते हुए खारिज कर दिया गया कि अपीलार्थियों ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और धारा 306 के अधीन अपराध कारित किया है और विचारण न्यायालय ने ठीक ही साक्ष्य का मूल्यांकन किया है और इस अपील में अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है । प्रत्यर्थी-पुलिस को अपीलार्थियों को दंडादेश की शेष अवधि भुगतने के लिए भेजने का निदेश दिया गया ।

8. हमने अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री कपिल सिब्बल और प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री पी. वी. योगेश्वरन को सुना ।

अपीलार्थियों की ओर से दलीलें :

9. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री कपिल सिब्बल ने दलील दी कि

क्रूरता करने का अभिकथन मृतका की माता द्वारा की गई शिकायत में पहली बार किया गया था और मृतका या उसके परिवार द्वारा विवाह के 9 वर्षों में इन अभिकथनों की फुसफुसाहट तक भी नहीं की गई है । इसके विपरीत, अपीलार्थियों और उसके परिवार तथा मृतका और उसके परिवार के बीच संबंध अत्यधिक सौहार्दपूर्ण थे ।

10. जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि मृतका द्विध्रुवीय विकार (बाइपोलर डिसआर्डर) से ग्रस्त थी और विवाह के समय अपीलार्थी को इस तथ्य को प्रकट नहीं किया गया था । इस तथ्य के अप्रकटीकरण के बावजूद अपीलार्थी सं. 1 ने मृतका की अच्छी तरह से देखभाल की और यह अभिकथन नहीं किया जा सकता है कि मृतका ने अपीलार्थियों द्वारा किए गए दुष्प्रेरण की वजह से आत्महत्या की थी ।

11. यह भी दलील दी गई कि शिकायत विलंब से अंतरस्थ हेतु के साथ की गई थी, जो कि मृतका के परिवार के सदस्यों द्वारा उसकी मृत्यु के कुछ पश्चात् किए गए आरंभिक कथनों में/से भी प्रतिबिंबित होता है ।

12. आगे यह दलील दी गई कि परिवारों के बीच उस समय वैमनस्य होने के कोई चिह्न नहीं थे जब मृतका की मृत्यु के ठीक पश्चात् उनके कथन अभिलिखित किए जा रहे थे । तथापि, मृतका की एक बहिन ने अपीलार्थी सं. 1 के पुत्र की अभिरक्षा (संपत्ति पर अधिकारों) की मांग की थी और इनकार करने पर शिकायतों की शुरुआत हुई ।

13. यह दलील दी गई कि निचले न्यायालयों ने अभि. सा. 9, जो चिकित्सा पेशेवर था और जिसने तारीख 1 नवंबर, 2014 को अर्थात् मृतका की मृत्यु से एक दिन पूर्व उसका उपचार किया था, के परिसाक्ष्य की पूर्णतया अनदेखी की है । अभि. सा. 9 द्वारा अभिलिखित संक्षिप्त विवरण में पूर्व में मृतका की अवसाद संबंधी रुग्णता, आत्महत्या का प्रयत्न करने और आत्महत्या संबंधी विचार रखने का इतिवृत्त अभिलिखित है ।

14. यह भी दलील दी गई कि निचले न्यायालय केवल अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के परिसाक्ष्य के आधार पर अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने के लिए अग्रसर हुए थे, जिन्होंने अभिकथित रूप से अपीलार्थियों

द्वारा सतत रूप से मृतका को तंग करने और मानसिक क्रूरता करने का अभिकथन किया था ।

15. **अमलेंदु पाल** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[1], **राजेश** बनाम **हरियाणा राज्य**[2], **गुरचरण सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[3], **उदय सिंह और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[4] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया गया ।

प्रत्यर्थियों की ओर से दलीलें :

16. प्रत्यर्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री पी. वी. योगेश्वरन ने यह दलील दी कि अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह सिद्ध किया गया है कि विवाह के पश्चात् सभी अभियुक्त व्यक्तियों ने और अधिक दहेज की मांग की थी और यह भी बताया कि गर्भधारण न करने के कारण कैसे मृतका के साथ गाली-गलौज की गई थी और अपमानित किया गया था तथा 'पूजा' के नाम पर उसे गाय का मूत्र पीने के लिए बाध्य किया गया था ।

17. यह भी दलील दी गई कि विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और 498क के अधीन दोषसिद्ध करते समय आरोप की प्रकृति, अपराध की गंभीरता और शास्ति तथा साक्ष्य की प्रकृति सहित सभी सुसंगत कारकों का अवलोकन किया था ।

18. यह भी दलील दी गई कि अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 ने सतत रूप से मृतका को तंग करने की प्रकृति और घटना के बारे में उल्लेख किया है जिसने मृतका को अपने एकमात्र बालक को छोड़कर आत्महत्या करने के लिए उकसाया था ।

19. आगे जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि यह दर्शित करने के लिए स्पष्ट साक्ष्य है कि वर्ष 2014 में दूसरे गर्भाधान के गर्भपात के

---

[1] (2010) 1 एस. सी. सी. 707.

[2] (2020) 15 एस. सी. सी. 359.

[3] (2020) 10 एस. सी. सी. 200.

[4] (2019) 17 एस. सी. सी. 301.

पश्चात् अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा गाली-गलौज करने, तंग करने और उकसाने की घटनाएं कई गुणा बढ़ गई थीं ।

20. हमने पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों की परस्पर-विरोधी दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है और संपूर्ण अभिलेख का परिशीलन किया है ।

21. वर्तमान अपील की उत्पत्ति उच्च न्यायालय द्वारा सुनाए गए उस आक्षेपित आदेश से उद्भूत होती है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा था । इस पर विचार करने के लिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के आवश्यक संघटकों का उल्लेख करना आवश्यक है ।

22. भारतीय दंड संहिता की धारा 306 निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "**306. आत्महत्या का दुष्प्रेरण** – यदि कोई व्यक्ति आत्महत्या करे, तो जो कोई आत्महत्या का दुष्प्रेरण करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।"

23. दुष्प्रेरण को भारतीय दंड संहिता की धारा 107 में परिभाषित किया गया है, जो निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "**107. किसी बात का दुष्प्रेरण** – वह व्यक्ति किसी बात के किए जाने का दुष्प्रेरण करता है, जो–
>
> पहला – उस बात को करने के लिए किसी व्यक्ति को उकसाता है ; अथवा
>
> दूसरा – उस बात को करने के लिए किसी षड्यंत्र में एक या अधिक अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के साथ सम्मिलित होता है, यदि उस षड्यंत्र के अनुसरण में, और उस बात को करने के उद्देश्य से, कोई कार्य या अवैध लोप गठित हो जाए ; अथवा
>
> तीसरा – उस बात के लिए किए जाने में किसी कार्य या

अवैध लोप द्वारा साशय सहायता करता है ।

स्पष्टीकरण 1 – जो कोई व्यक्ति जानबूझकर दुर्व्यपदेशन द्वारा, या तात्विक तथ्य, जिसे प्रकट करने के लिए वह आबद्ध है, जानबूझकर छिपाने द्वारा, स्वेच्छया किसी बात का किया जाना कारित या उपाप्त किया जाता है अथवा कारित या उपाप्त करने का प्रयत्न करता है, वह उस बात का किया जाना उकसाता है, यह कहा जाता है ।

स्पष्टीकरण 2 – जो कोई या तो किसी कार्य के किए जाने से पूर्व या किए जाने के समय उस कार्य के किए जाने को सुकर बनाने के लिए कोई बात करता है और तद्द्वारा उसके किए जाने को सुकर बनाता है, वह उस कार्य के करने में सहायता करता है, यह कहा जाता है ।"

24. भारतीय दंड संहिता की धारा 107 के अधीन दुष्प्रेरण की परिभाषा के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के उपबंधों का विश्लेषण करते हुए इस न्यायालय की एक दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने **जियो वर्गिस** बनाम **राजस्थान राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

"13. हमारे देश में, आत्महत्या स्वयमेव एक अपराध नहीं है क्योंकि आत्महत्या कारित करने वाला व्यक्ति विधि की पहुंच से परे चला जाता है किंतु आत्महत्या का प्रयत्न भारतीय दंड संहिता की धारा 309 के अधीन एक अपराध समझा जाता है । किसी व्यक्ति द्वारा आत्महत्या का दुष्प्रेरण भी भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन एक अपराध है । भारतीय दंड संहिता की धारा 306 को उपवर्णित करना सुसंगत होगा, जो निम्नलिखित प्रकार से है –

'**306. आत्महत्या का दुष्प्रेरण** – यदि कोई व्यक्ति आत्महत्या करे, तो जो कोई आत्महत्या का दुष्प्रेरण करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने

[1] 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 873.

से भी दंडनीय होगा ।'

14. यद्यपि भारतीय दंड संहिता 'आत्महत्या' शब्द को परिभाषित नहीं करती है किंतु आत्महत्या का सामान्य शब्दकोशीय अर्थ 'स्वयं को मार देना' है । यह शब्द आधुनिक लैटिन शब्द 'सुइसिडियम', 'सुइ' से अभिप्रेत है 'स्वयं को' और 'सिडियम' से अभिप्रेत है 'मारना' । इस प्रकार, आत्महत्या शब्द से 'स्वयं को मारने' का कृत्य विवक्षित है । दूसरे शब्दों में, मृत्यु का कृत्य, स्वयं को मारने के उद्देश्य की पूर्ति करने के लिए उसके द्वारा अपनाए गए साधनों को विचार में लाए बिना, अवश्य स्वयं मृतक द्वारा किया जाना चाहिए ।

15. भारतीय दंड संहिता की धारा 306 में आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण को दांडिक अपराध बनाया गया है और इसके लिए दंड विहित किया गया है ।

16. 'उकसाना' शब्द का साधारण शब्दकोशीय अर्थ किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने के लिए उद्दीप्त करना या पहल करना, भड़काना है । रमेश कुमार **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य [(2001) 9 एस. सी. सी. 618] वाले मामले में इस न्यायालय ने 'उकसाना' शब्द को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है –

> 'किसी कार्य को करने के लिए प्रेरित करना, बढ़ावा देना, उत्तेजित करना, भड़काना या प्रोत्साहित करना 'उकसाना' है ।'

17. भारतीय दंड संहिता की धारा 107 की व्याप्ति और परिधि और भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के साथ इसकी सहबद्धता पर इस न्यायालय द्वारा बारंबार चर्चा की गई है । एस. एस. चीना **बनाम** विजय कुमार महाजन और एक अन्य [(2010) 12 एस. एस. सी. 190] वाले मामले में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया था –

> 'दुष्प्रेरण में किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने के लिए उकसाने या साशय सहायता करने की एक मानसिक प्रक्रिया अंतर्वलित होती है । आत्महत्या कारित करने के लिए अभियुक्त

की ओर से उकसाने या सहायता करने के किसी सकारात्मक कार्य के बिना दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है । विधान-मंडल के आशय और उच्चतम न्यायालय द्वारा विनिश्चित मामलों के विनिश्चयाधार से स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने हेतु अपराध कारित करने के लिए एक स्पष्ट आपराधिक मन:स्थिति होनी चाहिए । इसके लिए एक ऐसा सक्रिय कार्य या प्रत्यक्ष कार्य भी होना चाहिए जिसके कारण मृतक व्यक्ति को कोई विकल्प दिखाई न देते हुए आत्महत्या करनी पड़ी और ऐसा कार्य मृतक व्यक्ति को ऐसी स्थिति में धकेलने के आशय से किया गया हो कि उसे आत्महत्या करनी पड़ी ।'"

25. **एम. अर्जुनन** बनाम **राज्य**, **इसके पुलिस निरीक्षक की मार्फत**[1] वाले मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के संघटकों को विस्तारपूर्वक उपवर्णित किया गया है, जो निम्नलिखित प्रकार से हैं :–

"भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध के आवश्यक संघटक हैं – (i) दुष्प्रेरण ; (ii) आत्महत्या करने के लिए मृतक की सहायता करने या उकसाने या दुष्प्रेरित करने के लिए अभियुक्त का आशय । तथापि, अपमानजनक भाषा का प्रयोग करके मृतक व्यक्ति का अपमान करने के अभियुक्त के कार्य से, स्वयमेव, आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण का गठन नहीं होगा । ऐसा साक्ष्य होना चाहिए जिससे यह सुझाव मिलता हो कि ऐसे कार्य से अभियुक्त का आशय मृतक व्यक्ति को आत्महत्या करने के लिए उकसाना था । जब तक आत्महत्या करने के लिए उकसाने/दुष्प्रेरित करने के संघटकों का समाधान नहीं किया जाता है, अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता है ।"

26. किसी अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए, एक विशिष्ट अपराध कारित करने के लिए मानसिक अवस्था आपराधिकता का अवधारण करने के विषय में

---

[1] (2019) 3 एस. सी. सी. 315.

अवश्य दृश्यमान होनी चाहिए । इस विषय में, **उदय सिंह और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

> "16. आत्महत्या के लिए अभिकथित दुष्प्रेरण के मामलों में, आत्महत्या कारित करने के लिए उकसाने के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कार्य/कार्यों का अवश्य सबूत होना चाहिए । इसे मुश्किल से विवादग्रस्त किया जा सकता है कि आत्महत्या कारित करने का प्रश्न, विशिष्ट रूप से आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण के अपराध के संदर्भ में, एक विवादित प्रश्न रहा है, जिसमें मानवीय व्यवहार और क्रियाओं/प्रतिक्रियाओं के बहुआयामी और जटिल लक्षण अंतर्वलित हैं । आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरण के अभ्यारोपण के मामले में, न्यायालय आत्महत्या करने के लिए उकसाने के कार्य/कार्यों के तर्कपूर्ण और विश्वसनीय सबूत की खोज करेगा । आत्महत्या के मामले में, किसी अन्य व्यक्ति द्वारा मृतक व्यक्ति को तंग करने का मात्र अभिकथन तब तक पर्याप्त नहीं होगा जब तक अभियुक्त की ओर से ऐसा कार्य न किया गया हो जिसने मृतक व्यक्ति को आत्महत्या करने के लिए बाध्य न किया हो ; और ऐसा आपराधिक कार्य घटना घटने के समय के निकटवर्ती होना चाहिए । क्या आत्महत्या कारित करने के लिए किसी व्यक्ति को एक अन्य व्यक्ति द्वारा दुष्प्रेरित किया गया है या नहीं, इसका पता केवल प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से लगाया जा सकता है ।
>
> 16.1 इस बात का पता लगाने के प्रयोजन के लिए कि क्या किसी व्यक्ति को आत्महत्या कारित करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दुष्प्रेरित किया गया है, इस बात पर विचार करना होगा कि क्या अभियुक्त आत्महत्या करने के कार्य को उकसाने का दोषी है । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा ऊपर निर्दिष्ट विनिश्चयों में स्पष्ट किया गया है और दोहराया गया है, उकसाने से अभिप्रेत है कोई कार्य करने के लिए प्रेरित करना, बढ़ावा देना, उत्तेजित करना, भड़काना या प्रोत्साहित करना है । यदि वह व्यक्ति जिसने

[1] (2019) 17 एस. सी. सी. 301.

आत्महत्या की है, अत्यधिक संवेदनशील रहा हो और अभियुक्त के कार्य से अन्यथा इसी प्रकार की परिस्थितियों में व्यक्ति को आत्महत्या करने के लिए उत्प्रेरित होने की सामान्य तौर पर प्रत्याशा नहीं की जाती है, तो अभियुक्त को आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने का दोषी ठहराना सुरक्षित नहीं होगा । किंतु दूसरी ओर, यदि अभियुक्त अपने कार्यों और अपने सतत् आचरण से ऐसी स्थिति पैदा करता है जिसके कारण मृतक व्यक्ति को आत्महत्या करने के सिवाय कोई अन्य विकल्प दिखाई न दिया हो, तो ऐसा मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अंतर्गत आ सकेगा । यदि अभियुक्त विपदग्रस्त के आत्म-गौरव और आत्म-सम्मान को समाप्त करने में ऐसी सक्रिय भूमिका निभाता है, जिसके परिणामस्वरूप विपदग्रस्त आत्महत्या करने के लिए प्रेरित होता है, तो अभियुक्त को आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण का दोषी ठहराया जा सकता है । ऐसे मामलों में अभियुक्त की आपराधिक मन:स्थिति के प्रश्न की परीक्षा अभियुक्त के वास्तविक कृत्यों और कार्यों के प्रति निर्देश करके करनी होगी और यदि यह कृत्य और कार्य केवल ऐसी प्रकृति के हैं जहां अभियुक्त का आशय तंग करने या क्रोध दिखाने से अधिक कुछ न हो, वहां एक विशिष्ट मामला आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण के अपराध के लिए कम पड़ सकता है । तथापि, यदि अभियुक्त शब्दों या कार्यों द्वारा मृतक व्यक्ति को तब तक उत्तेजित या नाराज करता रहा हो जब तक कि मृतक व्यक्ति प्रतिक्रिया नहीं करता है या प्रकोपित नहीं होता है तो, ऐसा विशिष्ट मामला आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण का हो सकता है । यह विषय मानवीय व्यवहार के सूक्ष्म विश्लेषण का होने के कारण प्रत्येक मामले की परीक्षा अभियुक्त और मृतक व्यक्ति के कार्यों और मन:स्थिति का सरोकार रखने वाले सभी परिवर्ती कारकों को ध्यान में रखते हुए इसके स्वयं के तथ्यों के आधार पर की जानी चाहिए ।"

27. उपरोक्त चर्चा की पृष्ठभूमि में, हम अब यह जांच करने के लिए वर्तमान मामले के तथ्यों का उल्लेख कर सकते हैं कि क्या अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और धारा 498क के

अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि संधार्य है या नहीं ।

28. अपीलार्थी सं. 1 और मृतका का विवाह वर्ष 2005 में अनुष्ठापित हुआ था और इस विवाह बंधन से वर्ष 2007 में "रोसांडो" नामक पुत्र का जन्म हुआ था । यह उल्लेख करना आवश्यक है कि अपीलार्थी सं. 1 और मृतका, दोनों तमिलनाडु राज्य में कार्यरत पेशे से प्रख्यात डाक्टर हैं । उनके विवाह के आरंभ से लेकर अंत तक अपीलार्थी सं. 1 और मृतका के परिवारों के बीच कोई वैमनस्य नहीं था । वास्तव में, विवाह के पश्चात् अपीलार्थी सं. 1 को पता चला कि मृतका द्विध्रुवीय विकार (बायोपोलर डिसआर्डर) से ग्रस्त है । बाद में उसे यह भी पता चला कि उसके विद्यार्थी जीवन से भी उसकी आत्महत्या करने की प्रवृत्ति रही है और थिरूनेलवेली, तमिलनाडु में एक मनोचिकित्सक के पास उसका उपचार चला है ।

29. इस प्रक्रम पर, अपीलार्थी सं. 1 द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन किए गए कथन को निर्दिष्ट करना सुसंगत हो सकेगा, जो निम्नलिखित है :–

> "मेरी पत्नी को उसकी युवावस्था से ही मानसिक रुग्णता थी । यहां तक कि जब वह पढ़ रही थी, वह कई बार आंतरिक रोगी के रूप में उपचाराधीन रही थी । उसने कई बार आत्महत्या करने का भी प्रयत्न किया था । उन्होंने उपरोक्त तथ्यों को छिपाकर उसका विवाह किया था । मुझे इन तथ्यों का केवल विवाह के पश्चात् तब पता चला जब मेरा उपरोक्त के संबंध में मेरी सास और मेरी पत्नी की बहिन से इस बारे में आमना-सामना हुआ और मेरी सास अमेरिका चली गई थी । मैंने ही उसके पश्चात् नौ वर्षों तक अपनी पत्नी का उपचार कराया । मैंने यह सुनिश्चित करने की व्यवस्था की थी कि बीमारी का प्रभाव कम से कम पड़े । उसे सतत् रूप से बायोपोलर डिसआर्डर, अवसाद, भय, मतिभ्रम और आत्महत्या संबंधी प्रवृत्ति थी । वह इनके लिए लगातार कई औषधियां ले रही थी ।" इस तथ्य की संपुष्टि डा. शालिनी, परामर्शी मनोचिकित्सक, अभि. सा. 9 की तारीख 4 नवंबर, 2014 की उपचार रिपोर्ट के सारांश से होती है, जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"डा. अमाली विक्टोरिया/32/एफ एमबीबीएस, एमडी (साई.), सहायक प्रोफेसर आईएमएच, पत्नी श्री मारियानो ब्रूनो/36/एम एमसीएच (न्यूरो) सर्जन एमएक्स 7 वर्ष ए/एनसी/एन/1 पुत्र 7 माह

* दंपत्ति एकसाथ मौजूद ।
* पत्नी आईएमएच के महिला वार्ड में तैनाती के पश्चात् पिछले एक माह से उदास ।
* थकावट महसूस करती है, कार्य में रुचि नहीं हतोत्साहित, असमर्थ महसूस करती है ।
* अल्प निद्रा ।
* उसने छह सप्ताह तक अच्छा महसूस किया, अचानक निराश होती चली गई ।
* हाइपोथायरायडिज्म नहीं ।
* पूर्व में भी इसी प्रकार की अवसादक रुग्णता (+)
* एमबीबीएस के दौरान एच/ओ एपिसोड, आत्महत्या का प्रयत्न करने की घटना, थिरुनेलवेल्ली में एक मनोचिकित्सक के पास उपचार लिया गया था, आईसीयू, टीएमसी में भर्ती ।
* दूसरी घटना प्रसवोत्तर ।
* तीसरी घटना वर्तमान ।
* पिछले दो दिनों से आत्महत्या संबंधी विचार – इसलिए पति आज उसे परामर्श के लिए लाया है ।
* आश्रित का पति दूसरा बालक पैदा करना चाहता है, जबकि अमाली को डर है कि वह इसका सामना नहीं कर सकेगी । असहाय, निराश और बेकार महसूस करती है ।
* वह अपनी नौकरी छोड़ना चाहती है, किंतु डरती है कि सास-ससुर उसे छोड़ देंगे और मूल निवास स्थान चले

जाएंगे । वह महसूस करती है कि वह अपने पुत्र या दूसरे भावी बालकों की स्वयं देखरेख नहीं कर सकेगी ।

* पति का कहना है कि उसने दूसरी राय के लिए अनुरोध किया है क्योंकि वह महसूस करता है कि वह चुप होती जा रही है और घर में निष्क्रिय रहती है । उसने पूर्व में आईएमएच में भी अपने मनोचिकित्सक सहयोगी से परामर्श किया था । किंतु पति दूसरी राय लेना चाहता है क्योंकि वह पिछले दो दिनों से आत्महत्या करने की बात कर रही है ।

* अमाली को परामर्श दिया गया ।

फ्री टी-3, टीएसएच
कराने की सलाह दी गई
आरएक्स
कैपसूल प्रोडेप (20) 1-0-0
टेबलेट एलिवेल (25) 0-0-1x10 दिन

* 10 दिन के पश्चात् पुनर्विलोकन के लिए टीएफटी रिपोर्ट के साथ आएं ।

* निकम्मेपन के भाव के लिए थेरापी को जारी रखा जाए ।"

30. विवाह के कुछ ही सप्ताह के भीतर अपीलार्थी सं. 1 ने मृतका की माता और बहिन को मृतका की देखरेख करने के लिए उनकी सहायता की ईप्सा करते हुए एक ईमेल लिखा था किंतु मृतका की माता ने सहायता करने के लिए इनकार कर दिया और वह अमेरिका चली गई । बाद में, अपीलार्थी सं. 1 की सहायता से मृतका के स्वास्थ्य में सुधार हुआ और उसने वर्ष 2013 में अपनी स्नातकोत्तर परीक्षा स्वर्ण पदक के साथ पूर्ण की और तत्पश्चात् वर्ष 2014 में कार्य करना आरंभ किया । परिवारों के बीच संबंध सौहार्दपूर्ण थे और मृतका अपीलार्थी के परिवार के प्रति बहुत ही स्नेही थी और अपीलार्थियों द्वारा उसके साथ क्रूरता करने या तंग करने का कोई साक्ष्य नहीं है ।

31. वर्ष 2014 में मृतका का गर्भपात हो गया, जिसके कारण

उसमें अवसाद के लक्षण दिखाई देने लगे और फिर तारीख 4 नवंबर, 2014 को डा. शालिनी, अभि. सा. 9 से उपचार लिया, जिसने कई सारी औषधियां लिखीं । तथापि, तारीख 5 नवंबर, 2014 को उसे स्नानघर में बेहोश पाए जाने के पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई ।

32. द्विध्रुवीय विकार (बाइपोलर डिसआर्डर), जिससे मृतका ग्रसित थी, यह एक ऐसा विकार है जिसमें मिजाज का उतार-चढ़ाव होता रहता है । द्विध्रुवीय विकार (बाइपोलर डिसआर्डर) के कुछ लक्षण निम्नलिखित हैं :–

- अधिकांश समय उदास, निराश या चिड़चिड़ा महसूस करना
- ऊर्जा की कमी
- ध्यान केंद्रित करने और बातों को याद रखने में कठिनाई
- रोजमर्रा के क्रियाकलापों में रुचि की कमी
- खालीपन या निकम्मेपन की अनुभूति

वास्तव में, प्रत्येक आत्महत्या एक दुखद घटना है जो व्यक्ति का समय-पूर्व जीवन ले लेती है और इसका निरंतर असर बना रहता है, परिवार, मित्रों और समुदायों के जीवन पर प्रभावशाली असर पड़ता है । तथापि, न्यायालय को न्यायनिर्णयन करते समय भावनाओं द्वारा मार्गदर्शित नहीं होना चाहिए अपितु निर्णय अभिलेख के तथ्यों और साक्ष्यों के विश्लेषण के आधार पर किया जाना चाहिए ।

33. प्रस्तुत मामले पर आते हैं । मृतका की अस्वाभाविक मृत्यु होने के कारण अपीलार्थी सं. 1 द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी, इसके कुछ समय पश्चात् मृतका की एक बहिन ने अपीलार्थी सं. 1 के पुत्र की अभिरक्षा की मांग की और इससे इनकार करने पर मृतका की माता ने मृतका की मृत्यु के तीन सप्ताह पश्चात् यह अभिकथन करते हुए एक मौखिक कथन किया कि मृतका की मृत्यु अपीलार्थियों ने कारित की थी और उसे अपर्याप्त दहेज के कारण अपीलार्थियों द्वारा लगातार तंग किया जा रहा था और अपीलार्थी लगातार मृतका को गर्भधारण न कर सकने के लिए अपमानित करते थे । इसके पश्चात् ही प्रथम

इत्तिला रिपोर्ट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 से भारतीय दंड संहिता की धारा 306 में परिवर्तित किया गया । आरोप विरचित किए गए और विचारण पूर्ण होने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और 498क के अधीन दोषसिद्ध किया । अपील करने पर उच्च न्यायालय ने इसे कायम रखा । निर्णय का प्रवर्तनशील भाग निम्नलिखित है :–

> "अभियोजन पक्ष द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 306 के अधीन अपराधों के लिए अपीलार्थियों की दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए इन दो बातों को साबित किया जाना चाहिए कि क्या मृतका की मृत्यु अस्वाभाविक है और क्या मृतका ने आत्महत्या अपीलार्थियों द्वारा किए गए उत्पीड़न, उत्प्रेरणा और दुष्प्रेरण के कारण की थी । इस मामले में, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, चिकित्सा साक्ष्य के अनुसार यह स्पष्ट है कि विपदग्रस्त की मृत्यु अस्वाभाविक रूप से हुई थी और अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के साक्ष्य से साबित हुआ है कि अपीलार्थियों ने विपदग्रस्त का उत्पीड़न किया था और मानसिक तथा शारीरिक क्रूरता की थी । क्रूरता के कारण मृतका ने अपने जीवन का अंत करने का आखिरी कदम उठाया था ।
>
> 18. इस प्रकृति के मामलों में, कोई स्वतंत्र साक्षी होने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती क्योंकि भारत में स्त्रियां भी भली-भांति शिक्षित हैं और अपने परिवार की ख्याति पर विचार करते हुए हो सकता है वे कतिपय बातों को किसी पर व्यक्ति या अजनबी से अभिव्यक्त न कर सकें और वे केवल या तो अपनी माता या बहिन या अति घनिष्ट मित्र या शुभचिंतक से कह सकती हैं । इस मामले में, अभि. सा. 1 मृतका की माता है और अभि. सा. 2 मृतका की बड़ी बहिन है । अपीलार्थियों की ओर से यह दर्शित करने के लिए कोई चिकित्सा अभिलेख प्रस्तुत नहीं किया गया है कि मृतका मानसिक रूप से विकारयुक्त थी या उसकी आत्महत्या करने की प्रवृत्ति थी । तथापि, अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 और अभि. सा. 10 के साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि मृतका ने

आत्महत्या अपीलार्थियों द्वारा लगातार उत्पीड़न करने और मानसिक क्रूरता करने के कारण की थी । इसलिए अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के साक्ष्य विश्वसनीय और भरोसेमंद हैं जिनसे अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने के लिए इस न्यायालय का विश्वास प्रेरित होता है । हितबद्ध साक्षी के परिसाक्ष्य को स्वत: त्यक्त नहीं किया जा सकता है और न्यायालय का दृष्टिकोण सतर्कतापूर्ण होना चाहिए और सटीकता तथा विश्वसनीयता का पता लगाने के लिए साक्ष्य का विश्लेषण करना चाहिए । यह न्यायालय अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के साक्ष्य पर विश्वास न करने का कोई कारण नहीं पाता है और अभि. सा. 2 के साक्ष्य की संपुष्टि अभि. सा. 10 के साक्ष्य द्वारा हुई है ।

20. अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के साक्ष्य के साथ-साथ डाक्टर, जिसने मरणोत्तर परीक्षा की थी, के साक्ष्य का सावधानीपूर्वक अनुशीलन करने पर साबित होता है कि अपीलार्थियों द्वारा विपदग्रस्त का उत्पीड़न किया गया था और मानसिक क्रूरता की गई थी । वह सुशिक्षित थी और राजकीय मानसिक अस्पताल, किलपॉक में मनोचिकित्सक के रूप में कार्य कर रही थी । उसने फांसी लगाकर अपने जीवन का अंत कर लिया था । इसलिए इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थियों ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 306 के अधीन अपराध कारित किया है और विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने ठीक ही साक्ष्य का मूल्यांकन किया है और अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है । इसलिए इस मामले में कोई गुणागुण नहीं है और अपील को खारिज किया जाना चाहिए ।"

34. आक्षेपित निर्णय के परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष अभिलिखित करने में गलती की है कि अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है और इस तथ्य की अनदेखी की है कि अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य विद्यमान नहीं है जिससे यह उपदर्शित होता हो कि अपीलार्थियों द्वारा मृतका को उसकी मृत्यु से ठीक पूर्व तंग किया गया था । यह सुस्थिर है कि न केवल लगातार तंग करने

का साक्ष्य होना चाहिए अपितु अभियुक्त द्वारा किए गए सकारात्मक कार्य को सिद्ध करने के लिए ऐसा सटीक साक्ष्य होना चाहिए जो कमोवेश घटना के समय के निकट का हो और यह कहा जा सके कि व्यक्ति उस कार्य के कारण आत्महत्या करने के लिए प्रेरित या बाध्य हुआ था ।

35. प्रस्तुत मामले में, आत्महत्या करने के समय के ठीक निकट न केवल उक्त सकारात्मक कार्य का अभाव है अपितु अपीलार्थियों द्वारा मृतका को लगातार शारीरिक या मानसिक यातना देने का कोई साक्ष्य नहीं है । इसके विपरीत, अपीलार्थी सं. 1 स्वयं इस घटना से ठीक एक दिन पूर्व मृतका को एक मनोचिकित्सक के पास परामर्श के लिए लेकर गया था और इसका स्पष्ट आशय यह था कि वह बेहतर महसूस कर सके । उक्त कार्य को तनिक संदेह के बिना कोई ऐसा कार्य नहीं कहा जा सकता जिसके कारण मृतका ने आत्महत्या की हो । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 द्वारा अपने कथन में अपीलार्थियों द्वारा विवाह के तुरंत पश्चात् मृतका को लगातार तंग करने या यातना देने के विषय में किए गए अभिकथन विश्वसनीय नहीं हैं और इस पर इस तथ्य के कारण थोड़ा ही विश्वास किया जाना चाहिए कि उनके विवाह के नौ वर्षों के आद्योपांत न तो मृतका द्वारा और न ही उसके परिवार के सदस्यों द्वारा, जो अभियोजन साक्षियों के रूप में उपसंजात हुए थे, इस संबंध में कभी कोई शिकायत की गई थी या कानाफूंसी तक की गई थी । यहां तक कि मृतका, जो एक अर्हित डाक्टर थी, ने इस संबंध में कभी कोई शिकायत नहीं की थी । इस बात पर विश्वास करना सचमुच मुश्किल है कि एक सुशिक्षित और आत्मनिर्भर महिला नौ वर्ष की पर्याप्त लंबी अवधि तक ऐसी बातें सहन करती रहेगी ।

36. किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए अपराध कारित करने की स्पष्ट आपराधिक मन:स्थिति होनी चाहिए । इसके लिए ऐसा सक्रिय कार्य या प्रत्यक्ष कार्य भी होना चाहिए जिसके कारण मृतक ने कोई अन्य विकल्प न पाकर आत्महत्या करनी पड़ी और यह कृत्य अवश्य ऐसा होना चाहिए जिससे अभियुक्त का आशय मृतक को ऐसी स्थिति में धकेलने का प्रतिबिंबित होता हो कि वह आत्महत्या कर लेगा । अभियोजन पक्ष को युक्तियुक्त

संदेह के परे यह सिद्ध करना चाहिए कि मृतका ने आत्महत्या की थी और अपीलार्थी सं. 1 ने मृतका को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था । प्रस्तुत मामले में दोनों अवयव नहीं हैं ।

37. अब, जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि का संबंध है, अभियोजन साक्षियों अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के घटना के पश्चात् अभिलिखित किए गए कथन के सिवाय दहेज की कोई मांग करने या मृतका के विवाह के दौरान उसके साथ दुर्व्यवहार करने के अभिकथन को सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है । इस तथ्य को विवादग्रस्त नहीं किया गया है कि अपीलार्थी सं. 1 और मृतका के परिवारों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध थे । मृतका ने तारीख 5 नवंबर, 2014 को आत्महत्या की थी और अपीलार्थियों के विरुद्ध शिकायत तारीख 24 नवंबर, 2014 को अर्थात् मृतका की मृत्यु के तीन सप्ताह पश्चात् फाइल की गई थी ।

38. इस न्यायालय ने बारंबार यह दोहराया है कि किसी अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने से पूर्व न्यायालय को अवश्य सावधानीपूर्वक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की परीक्षा करनी चाहिए और उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का भी यह पता लगाने के लिए निर्धारण करना चाहिए कि क्या विपदग्रस्त के साथ किए गए उत्पीड़न और क्रूरता के कारण उसके पास अपने जीवन का अंत करने के सिवाय कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था । यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि आत्महत्या के लिए अभिकथित दुष्प्रेरण के मामलों में आत्महत्या करने के लिए उकसाने के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कार्यों का सबूत होना चाहिए । अभियुक्तों की ओर से घटना के समय के निकट उनके किसी सकारात्मक कार्य के बिना, जिसके कारण व्यक्ति आत्महत्या करने के लिए प्रेरित या बाध्य हुआ, मात्र उत्पीड़न के अभिकथन के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के निबंधनों के अनुसार की गई दोषसिद्धि संधार्य नहीं है ।

39. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों/अपीलार्थियों की दोषिता को साबित करने के लिए निम्नलिखित साक्षियों को पेश किया था :–

– मृतका की माता – अभि. सा. 1

– मृतका की बहिन – अभि. सा. 2

– मृतका का भाई – अभि. सा. 3

– बढ़ई जिसने स्नानघर को दरवाजा तोड़कर खोला था – अभि. सा. 4

– एसी मकेनिक जिसने बढ़ई का साथ दिया था - अभि. सा. 6

– मृतका का सहयोगी – अभि. सा. 7

– मृतका का सहयोगी – अभि. सा. 8

– डाक्टर, जिसने तारीख 4 नवंबर, 2014 को मृतका का उपचार किया था – अभि. सा. 9

– डाक्टर, जिसने तारीख 5 नवंबर, 2014 को मृतका को मृत लाया गया घोषित किया था – अभि. सा. 11

– डाक्टर, जिसने दूसरे बालक का गर्भपात होने पर मृतका का उपचार किया था – अभि. सा. 12

– आटो ड्राइवर – अभि. सा. 13

– पुलिस उप निरीक्षक – अभि. सा. 14

– पुलिस निरीक्षक, जिसने मामले का निरीक्षण किया था – अभि. सा. 15

40. अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 हितबद्ध साक्षी हैं, फिर भी अभि. सा. 3 ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि "मेरी बहिन डा. अमाली विक्टोरिया और डा. ब्रुनो के बीच विवाह एक प्रसन्नतापूर्वक विवाह था" । इस प्रकार न केवल उसके अपने कथन में तात्विक विरोधाभास है अपितु अन्य दो साक्षियों के कथन में भी विरोधाभास है ।

41. अभि. सा. 9 डा. शालिनी वह मनोचिकित्सक है, जिसने तारीख 4 नवंबर, 2014 को मृतका का उपचार किया था । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृतका ने अपनी ड्यूटी करने में अरुचि जाहिर की थी, कम नींद आने और भूख न लगने और किसी बात में भी कोई रुचि न होने की शिकायत की थी । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 9 ने कथन किया था कि ये अवसाद के लक्षण थे । अभि. सा. 9 ने तारीख 4 नवंबर, 2014

की अपनी उपचार रिपोर्ट के सारांश में यह उल्लेख किया था कि मृतका ने पिछले एक माह से अपनी उदासी का कारण आईएमएच के महिला वार्ड में उसकी तैनाती होना बताया था और वह थकावट महसूस कर रही थी, कार्य में रुचि नहीं थी, ये अल्प निद्रा होने के कुछ कारण कहे जा सकते हैं । इसके अतिरिक्त, यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि अभि. सा. 9 द्वारा उपचार के सारांश में यह भी उल्लेख किया था कि मृतका को पूर्व में भी अर्थात् कालेज के दिनों में एमबीबीएस करने के दौरान प्रथम घटनाक्रम में इसी प्रकार की अवसादात्मक रुग्णता थी, आत्महत्या करने का प्रयत्न किया था, दूसरा घटनाक्रम प्रसव-पश्चात् का था और वर्तमान तीसरा घटनाक्रम है । मृतका को तारीख 4 नवंबर, 2014 को मनोचिकित्सक के पास परामर्श के लिए ले जाने से पूर्व आत्महत्या संबंधी विचार आ रहे थे और यह बात उपचार के सारांश से स्पष्ट है । तथापि, अभि. सा. 9 अर्थात् मनोचिकित्सक के साक्ष्य पर निचले न्यायालयों द्वारा विचार नहीं किया गया था और अपीलार्थियों की दोषसिद्धि एकमात्र रूप से अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 के मौखिक साक्ष्य पर आधारित थी ।

42. यह सुस्थिर है कि न्यायालयों को यह पता लगाने के प्रयोजन के लिए कि क्या विपदग्रस्त के साथ की गई क्रूरता ने वास्तव में उसे आत्महत्या करके अपने जीवन का अंत करने के लिए उत्प्रेरित किया था या नहीं, प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और विचारण में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का निर्धारण करने में अत्यंत सतर्क रहना चाहिए । **रमेश कुमार** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ के निर्णय के प्रति निर्देश किया जा सकता है जिसमें इस न्यायालय ने अभियुक्त की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया था क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के संघटकों को समाधानप्रद रूप से साबित नहीं किया गया था । निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया था :–

"20. उकसाना का अर्थ 'किसी कार्य' को करने के लिए प्रेरित

---

[1] (2001) 9 एस. सी. सी. 618.

करना, बढ़ावा देना, उत्तेजित करना, भड़काना या प्रोत्साहित करना है । यद्यपि उकसाने की अपेक्षा को पूरा करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वास्तविक शब्दों का इस आशय से प्रयोग किया जाए या जिससे उकसाना घटित हो, उसका आवश्यक और विनिर्दिष्ट परिणाम भी वही हो । तथापि, परिणाम के उद्दीपन की युक्तियुक्त निश्चितता ऐसी होनी चाहिए जिसकी व्याख्या की जा सके । वर्तमान मामला ऐसा मामला नहीं है, जहां अभियुक्त ने अपने कार्यों या लोप द्वारा या आचरण के सतत् अनुक्रम द्वारा ऐसी परिस्थितियां सृजित की हों कि मृतका के पास आत्महत्या करने के सिवाय और कोई विकल्प नहीं बचा और इसके आधार पर उकसाने का निष्कर्ष निकाला जा सकता है । वास्तविक परिणामों को जाने बिना क्रोध अथवा संवेग के आवेश में बोले गए किसी शब्द को उकसाना नहीं कहा जा सकता है ।

21. पश्चिमी बंगाल राज्य **बनाम** ओरी लाल जायसवाल और एक अन्य [(1994) 1 एस. सी. सी. 73] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह चेतावनी दी कि न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने के प्रयोजनार्थ प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा विचारण में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का निर्धारण करने में अत्यंत सावधान रहना चाहिए कि क्या विपदग्रस्त व्यक्ति के साथ की गई क्रूरता ने वस्तुत: उसे आत्महत्या करने और अपने जीवन को समाप्त करने के लिए प्रेरित किया था । यदि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि आत्महत्या करने वाला कोई विपदग्रस्त व्यक्ति साधारण बदमिजाजी, अनबन और घरेलू जीवन में मतभेदों के लिए अत्यधिक संवेदनशील था जो ऐसे समाज में जिससे कि पीड़ित व्यक्ति संबंधित था, बहुत ही साधारण बात है और ऐसी बदमिजाजी, अनबन और मतभेदों से यह आशा नहीं की जा सकती कि वे वर्तमान समाज में वैसी ही किसी परिस्थिति में किसी व्यक्ति को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित करेंगे तो न्यायालय के विवेक का इस निष्कर्ष के आधार पर समाधान नहीं होना चाहिए कि चूंकि अभियुक्त को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित करने के

आरोप से आरोपित किया गया है इसलिए अभियुक्त को दोषी ठहराया जाना चाहिए ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

43. तद्नुसार, प्रस्तुत मामले में के तथ्यों और साक्ष्यों, जिनका विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय, दोनों द्वारा पूरी तरह विश्लेषण नहीं किया गया था, का सारांश निम्नलिखित रूप में दिया जा सकता है :–

1. अपीलार्थियों के विरुद्ध शिकायत मृतका की मृत्यु के तीन सप्ताह पश्चात् फाइल की गई थी ।

2. अपीलार्थियों द्वारा मृतका के साथ की गई क्रूरता के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अभिकथित अपराध के विषय में तनिक भी साक्ष्य नहीं है ।

3. अपीलार्थी सं. 1 और मृतका के बीच उनके वैवाहिक जीवन के नौ वर्षों के दौरान कोई वैवाहिक अनबन नहीं थी ।

4. अपीलार्थी सं. 1 और मृतका की बहिनों के बीच कई सारी ई-मेल का आदान-प्रदान हुआ था जिनके द्वारा अपीलार्थी सं. 1 की मृतका की सर्वोत्तम संभव रीति में देखरेख करने के लिए सराहना की गई थी और उसके माता-पिता को भी मृतका के कैरियर में सहायता करने के लिए श्रेय दिया गया था । इसके अतिरिक्त, मृतका की बहिन ही थी, जिसने स्वयं यह कहते हुए अपीलार्थी सं. 1 को एक मेल भेजी थी कि "अमाली एक विकार का सामना कर रही है" ।

5. मृतका द्विध्रुवीय विकार (बाइपोलर डिसआर्डर) से ग्रस्त थी और आत्महत्या करने के कुछ दिनों पूर्व से आत्महत्या करने संबंधी विचार भी थे । इसके अतिरिक्त, मृतका का अवसाद के लिए भी उपचार चल रहा था क्योंकि वह थकावट, अल्प निद्रा, निराशाजनक विचार जैसे अवसाद के बड़े लक्षण दिखा रही थी । इस तथ्य को कि मृतका द्विध्रुवीय विकार (बाइपोलर डिसआर्डर) से ग्रस्त थी, अपीलार्थी के परिवार से

उनके विवाह के दौरान छिपाया गया था ।

6. विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और 498क के अधीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि करते समय अभि. सा. 9, मनोचिकित्सक के साक्ष्य पर विचार नहीं किया था ।

7. अपीलार्थियों की दोषसिद्धि एकमात्र रूप से मृतका की माता और बहिन के मौखिक साक्ष्य पर आधारित है, जो हितबद्ध साक्षी हैं ।

8. मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में मृत्यु का कारण नहीं दिया गया है किंतु तारीख 15 दिसंबर, 2014 को मृत्यु का कारण बाह्य रूप से दबाने के कारण हुआ श्वसावरोध दिखाया गया है ।

44. ऊपर निर्दिष्ट निर्णयों के सानिध्य में मामले के पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य तथा अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत की गई अन्य सामग्री का मूल्यांकन करने के उपरांत हमारा यह मत है कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को गलत रूप से दोषसिद्ध किया था और उच्च न्यायालय ने भी अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखकर न्यायोचित नहीं किया था ।

45. परिणामतः, उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 31 जनवरी, 2022 को पारित किया गया आक्षेपित निर्णय तथा विचारण न्यायालय का तारीख 26 मार्च, 2021 का निर्णय और आदेश असंधार्य है तथा अपास्त किए जाने योग्य हैं और तद्द्वारा अपास्त किए जाते हैं । अपीलार्थियों को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है ।

46. तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 76

राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक

बनाम

लाली उर्फ मणिकंदन और एक अन्य, इत्यादि

[2022 की दांडिक अपील सं. 1750-1751]

14 अक्तूबर, 2022

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति कृष्ण मुरारी

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और 34 – हत्या – प्रत्यर्थी-अभियुक्तों द्वारा मृतक की हत्या किया जाना – एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – अभियुक्तों की ओर से अपराध कारित करने में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी न होने और अभियोजन पक्ष द्वारा शिकायतकर्ता की परीक्षा न कराए जाने का अभिवाक् किया जाना – अभियुक्तों द्वारा की गई अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां यदि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में प्रत्यक्ष साक्ष्य हो और वह विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया जाए तो ऐसे एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है और अपराध कारित करने में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी न होना, अभियोजन पक्ष द्वारा शिकायतकर्ता की परीक्षा न कराया जाना अभियुक्तों को दोषमुक्त करने का आधार नहीं हो सकता है, इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा की गई अभियुक्तों की दोषमुक्ति असंधार्य है और उसे अपास्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अभियुक्तों के मित्र अर्थात् सेल्वाकुमार और पेरियावन **उर्फ** मुरुगन के बीच दुश्मनी होने के कारण सेल्वाकुमार की हत्या कर दी गई थी । यह संदेह करते हुए कि मृतक सर्वणन ने सेल्वाकुमार के ठौर-ठिकाने की सूचना दी थी, अभियुक्तों ने एक दुपहिए पर आयुधों से लैस होकर उस कार को रोका जिसमें मृतक,

अभि. सा. 1 और एक अन्य व्यक्ति यात्रा कर रहे थे और कार को टक्कर मारी तथा अरुवल से कार की विंड स्क्रीन को तोड़ दिया । अभियुक्त-1 ने मृतक के दाएं कंधे पर क्षति कारित की । मृतक सर्वणन ने भागने की कोशिश की, तथापि, अभियुक्तों ने उसका पीछा किया और उसके पश्चात् सभी अभियुक्तों ने उस छप्पर में मृतक को क्षतियां कारित की जिसमें मृतक पहुंचा था और मृतक सर्वणन को पहुंचीं क्षतियों के कारण उसकी घटनास्थल पर मृत्यु हो गई । महेन्द्रन नामक व्यक्ति द्वारा दी गई शिकायत के आधार पर रजिस्ट्रीकृत की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर अन्वेषण आरंभ किया गया । सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण की समाप्ति के पश्चात् अभियुक्तों के विरुद्ध तमिलनाडु संपत्ति (नुकसान और हानि निवारण) (टीएनपीपीडीएल) अधिनियम की धारा 3(1) के साथ पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 506(2) और 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-1 को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए और अभियुक्त-2 तथा अभियुक्त-3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलें फाइल की गईं । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश को अपास्त कर दिया और परिणामत: अभियुक्तों को पूर्वोक्त अपराधों के लिए, जिनके लिए उन्हें दोषसिद्ध किया गया था, दोषमुक्त कर दिया । उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक की मार्फत उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभि. सा. 1 के संपूर्ण परिसाक्ष्य का अनुशीलन करने के पश्चात् यह देखा जा सकता है कि अभि. सा. 1 दोनों स्थानों पर घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । जब पहली बार अभियुक्तों ने जब मृतक

कार में यात्रा कर रहा था, आक्रमण किया था तब अभि. सा. 1 कार में मौजूद था । उस समय अभियुक्तों ने कार में टक्कर मारी और विंड स्क्रीन को तोड़ दिया तथा अभियुक्त-1 ने मृतक के दाएं कंधे पर क्षति कारित की । उसके पश्चात् मृतक ने भागने की कोशिश की और वह छप्पर में पहुंचा और उस समय सभी अभियुक्तों ने मृतक का पीछा किया, छप्पर में गए, मृतक को क्षतियां कारित कीं और फिर छप्पर से बाहर आए तथा भाग गए । अभि. सा. 1 ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि उसने सभी तीनों अभियुक्तों को छप्पर में प्रवेश करते हुए देखा था और उसके पश्चात् वे बाहर आए और मृतक क्षतियों के साथ पड़ा हुआ था तथा उसे मृत पाया गया था । अभियुक्तों की ओर से अभि. सा. 1 की पूरी तरह से प्रतिपरीक्षा की गई थी । तथापि, संपूर्ण प्रतिपरीक्षा के पश्चात् भी अभि. सा. 1 उस बात पर अडिग रहा जो उसने कही थी और अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह समर्थन किया । हमें अभि. सा. 1 को अविश्वसनीय मानने और/या उसकी विश्वसनीयता पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । अभियुक्तों की ओर से दी गई इस दलील को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि क्योंकि मूल इत्तिलाकर्ता-महेन्द्रन की परीक्षा नहीं कराई गई थी और अन्य स्वतंत्र साक्षियों की भी परीक्षा नहीं कराई गई थी तथा आयुध की बरामदगी को साबित नहीं किया गया है और घटना घटने के समय और स्थान के बारे में गंभीर संदेह है, इसलिए अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना चाहिए । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभि. सा. 1 दोनों स्थानों पर घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । इसी प्रकार, यह धारणा की जाए कि घटना में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी सिद्ध या साबित नहीं की गई है, इसे भी अभियुक्तों को दोषमुक्त करने का आधार नहीं कहा जा सकता है जब प्रत्यक्षदर्शी साक्षी का प्रत्यक्ष साक्ष्य है । अपराध कारित करने में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी अभियुक्तों को दोषसिद्ध करने के लिए अत्यावश्यक नहीं है । यदि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में प्रत्यक्ष साक्ष्य है, तो आयुध की बरामदगी के अभाव में भी अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जा सकता है । इसी प्रकार, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट/शिकायत दर्ज करने के समय के विषय में कुछ विरोधाभास होने की दशा में भी

यह अभियुक्तों को दोषमुक्त करने का आधार नहीं हो सकता है जब अभियोजन पक्ष का पक्षकथन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के अभिसाक्ष्य पर आधारित है । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभि. सा. 1 एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । उसने अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह समर्थन किया है । विधि की स्थिर स्थिति के अनुसार, एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के अभिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है यदि उक्त साक्षी भरोसेमंद और/या विश्वसनीय पाया जाता है । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभि. सा. 1 की विश्वसनीयता और/या अवलंब लेने पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है । अत: अभि. सा. 1 के एकमात्र अभिसाक्ष्य का अवलंब लेकर अभियुक्तों को दोषसिद्ध करना सुरक्षित होगा । (पैरा 6, 7 और 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2004]	(2004) 9 एस. सी. सी. 193 : **कुंजु मुहम्मद** बनाम **केरल राज्य** ;	4.6
[2002]	(2002) 6 एस. सी. सी. 81 : **कृष्णा मोची** बनाम **बिहार राज्य** ।	3.4

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 1750-1751.

2017 की दांडिक अपील सं. 270 और 362 में मद्रास उच्च न्यायालय, मदुरै न्यायपीठ के तारीख 12 जून, 2018 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से डा. जोसफ अरिस्टोटल एस., (सुश्री) नूपुर शर्मा, श्री शोभित द्विवेदी और श्री संजीव कुमार माहरा

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री राव रंजीत

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – ये अपीलें राज्य ने मद्रास उच्च न्यायालय, मदुरै द्वारा 2017 की दांडिक अपील सं. 270 और 2017 की दांडिक अपील सं. 362 में तारीख 12 जून, 2018 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर फाइल की हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी-अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए उक्त अपीलों को मंजूर किया था ।

2. इस अपील में प्रत्यर्थियों-मूल अभियुक्तों का मृतक सर्वणन को जान से मारने/उसकी हत्या कारित करने के लिए पूर्वोक्त अपराधों के लिए विचारण किया गया था । अभियोजन का यह पक्षकथन था कि अभियुक्तों के मित्र अर्थात् सेल्वाकुमार और पेरियावन **उर्फ** मुरुगन के बीच दुश्मनी होने के कारण तारीख 31 जुलाई, 2013 को सेल्वाकुमार की हत्या कर दी गई थी । यह संदेह करते हुए कि मृतक सर्वणन ने सेल्वाकुमार के ठौर-ठिकाने की सूचना दी थी, अभियुक्तों ने एक दुपहिए पर आयुधों से लैस होकर उस कार को रोका जिसमें मृतक, अभि. सा. 1 और एक अन्य व्यक्ति यात्रा कर रहे थे और कार को टक्कर मारी तथा अरुवल से कार की विंड स्क्रीन को तोड़ दिया । अभियुक्त-1 ने मृतक के दाएं कंधे पर क्षति कारित की । मृतक सर्वणन ने भागने की कोशिश की, तथापि, अभियुक्तों ने उसका पीछा किया और उसके पश्चात् सभी अभियुक्तों ने उस छप्पर में मृतक को क्षतियां कारित कीं जिसमें मृतक पहुंचा था और मृतक सर्वणन को पहुंचीं क्षतियों के कारण उसकी घटनास्थल पर मृत्यु हो गई । महेन्द्रन नामक व्यक्ति द्वारा दी गई शिकायत के आधार पर रजिस्ट्रीकृत की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर अन्वेषण आरंभ किया गया । तारीख 2 अगस्त, 2013/17 अगस्त, 2013 को सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण के दौरान अन्वेषण अधिकारी ने तात्विक साक्ष्य एकत्रित किया और साक्षियों के कथन भी अभिलिखित किए । अन्वेषण की समाप्ति के पश्चात् अभियुक्तों के विरुद्ध तमिलनाडु संपत्ति (नुकसान और हानि निवारण) (टीएनपीपीडीएल) अधिनियम की धारा 3(1) के साथ पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 506(2) और 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के

लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । मामले को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया जिसे 2014 के सेशन मामला सं. 254 के रूप में संख्यांकित किया गया । सभी अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और इसलिए विद्वान् सेशन न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त अपराधों के लिए उनका विचारण किया गया ।

2.1 विचारण के दौरान, अभियोजन पक्ष ने 21 साक्षियों की परीक्षा कराई और 36 प्रदर्शों और 16 तात्विक वस्तुओं को चिह्नित किया । अभियोजन पक्ष के साक्ष्य की समाप्ति के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के भी कथन अभिलिखित किए गए । विचारण के दौरान अभि. सा. 2, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया और उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया । तथापि, अभि. सा. 1, अभि. सा. 4 और अभि. सा. 6 के अभिसाक्ष्य पर विश्वास करते हुए विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-1 को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए और अभियुक्त-2 तथा अभियुक्त-3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया और उनमें से प्रत्येक को आजीवन कारावास भुगतने और 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने का संदाय करने में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का साधारण कारावास भुगतने का दंडादेश दिया ।

2.2 विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलें फाइल कीं । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश को अपास्त कर दिया और परिणामत: अभियुक्तों को पूर्वोक्त अपराधों के लिए, जिनके लिए उन्हें दोषसिद्ध किया गया था, दोषमुक्त कर दिया । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के पैरा 9 में वर्णित कारणों से अभियुक्तों को दोषमुक्त किया था, जो निम्नलिखित प्रकार से है :–

"9. ये अपीलें निम्नलिखित कारणों से सफल होती हैं –

(i) अभियोजन का पक्षकथन यह है कि घटना तारीख 31 जुलाई, 2013 को 1.30 बजे अपराह्न में घटी थी और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट महेन्द्रन नामक व्यक्ति द्वारा पुलिस थाने में दी गई शिकायत के आधार पर उसी दिन 1.45 बजे अपराह्न में रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उक्त महेन्द्रन की परीक्षा नहीं की गई थी ।

(ii) अभियोजन पक्ष ने अभि. सा. 1 से अभि. सा. 6 की प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के रूप में परीक्षा की थी । जबकि अभि. सा. 2, 3 और 5 ने अभियोजन पक्ष का समर्थन नहीं किया था और पक्षद्रोही समझे गए थे और अभि. सा. 4 और अभि. सा. 6 पर विचारण न्यायालय द्वारा विश्वास नहीं किया गया था । अभि. सा. 4 पर इसलिए विश्वास नहीं किया गया था क्योंकि उसने सूचित किया था कि घटना 2.30 बजे अपराह्न में घटी थी और यह कि मृतक अभि. सा. 2 की झोपड़ी के बाहर पड़ा था, जबकि अभियोजन पक्ष के पक्षकथन पर विश्वास नहीं किया गया है चूंकि इस साक्षी ने आठ से नौ व्यक्तियों द्वारा आक्रमण करने की बात कही थी, जबकि अभियोजन का पक्षकथन यह है कि तीन अभियुक्तों/अपीलार्थियों द्वारा आक्रमण किया गया था ।

(iii) अभियोजन पक्ष के पक्षकथन के विपरीत अभि. सा. 1 की यह स्वीकारोक्ति है कि पुलिस घटना घटने के 5 से 10 मिनट के भीतर घटनास्थल पर पहुंच गई थी । अभि. सा. 1 तथा अभि. सा. 4, दोनों ने यह कथन किया है कि सभी साक्षियों के कथन घटनास्थल पर अभिलिखित किए गए थे और उनके हस्ताक्षर कराए गए थे । अभि. सा. 1 ने विशिष्ट रूप से यह कथन किया है कि महेन्द्रन, शिकायतकर्ता का कथन अभिलिखित करने के पश्चात् उसके हस्ताक्षर कराए गए थे और अभि. सा. 1 के साथ-साथ अभि. सा. 4 द्वारा भी

उसके हस्ताक्षरों को प्रमाणित किया गया था । मामले में शिकायत को चिह्नित नहीं किया गया है, यद्यपि ऐसा अनवधानता की गलती से किया गया है क्योंकि हमने अभिलेख के अनुशीलन से पाया है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को सामने के भाग पर प्रदर्श पी-20 के रूप में चिह्नित किया गया है जबकि पिछली तरफ प्रदर्श-21 के रूप में चिह्नित किया गया है और शिकायत को इससे संलग्न पाया गया है । इस बारे में संदेह पैदा होता है कि क्या प्रदर्श पी-20 के रूप में चिह्नित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और इससे संलग्न शिकायत से मूल वृत्तांत सूचित होता है या नहीं क्योंकि शिकायतकर्ता की परीक्षा तक नहीं कराई गई है, जबकि अभियोजन साक्षियों का यह वृत्तांत है कि शिकायत घटनास्थल पर लेखबद्ध की गई थी ।

(iv) अभि. सा. 20, पुलिस उप निरीक्षक, जिसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की थी, ने पुलिस थाने और न्यायालय के बीच की दूरी 7 किलोमीटर बताई थी, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह दूरी पुलिस थाने से ढाई किलोमीटर बताई गई है । मजिस्ट्रेट के पास प्रथम इत्तिला रिपोर्ट केवल 7.00 बजे अपराह्न में पहुंची थी । ऐसी परिस्थिति से इसकी असलियत के बारे में संदेह पैदा होता है और यह प्रश्न पैदा होता है कि घटना की उत्पत्ति को छिपाया तो नहीं गया है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में मृतक के विरुद्ध अभियुक्तों के वैमनस्य के बारे में विस्तार से बताया गया है और उसकी हत्या करने की आवश्यकता से यह संदेह और अधिक हो जाता है । यह तथ्य है कि कांस्टेबल को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को सौंपने के लिए दी गई थी, उसकी परीक्षा नहीं की गई थी, इससे अभियोजन का मामला और अधिक खराब हो जाता है ।

(v) अभि. सा. 1 ने अभियुक्तों को घटना के अगले ही

दिन अर्थात् तारीख 1 अगस्त, 2013 को पुलिस थाने में देखे जाने का कथन किया है जबकि अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अभियुक्त-1 और अभियुक्त-3 को तारीख 2 अगस्त, 2013 को गिरफ्तार किया गया था और अभियुक्त-2 को तारीख 17 अगस्त, 2013 को गिरफ्तार किया गया था ।

(vi) अभियोजन पक्ष के अनुसार, सभी अभियुक्तों से अरुवलों की बरामदगी की गई थी । अभि. सा. 1 ने प्रतिपरीक्षा में कथन किया है कि अरुवल उनके द्वारा अर्थात् अभियोजन पक्षकार द्वारा पुलिस को सौंपे गए थे ।

(vii) रक्त रंजित अरुवल बरामद किए गए थे । मरणोत्तर परीक्षा की गई थी किंतु मृतक के रक्त समूह को अभिनिश्चित नहीं किया गया था । प्रदर्श पी-16 में मृतक द्वारा पहने हुए वस्त्रों और अरुवलों पर रक्त के धब्बे मौजूद होने की बात कही गई थी । रक्त समूह का सह-संबंध स्थापित करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया था, जैसा कि अभि. सा. 21, अन्वेषण अधिकारी द्वारा स्वीकार किया गया है ।

ऊपर उल्लिखित गंभीर खामी को देखते हुए हम दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161(3) के अधीन कथनों को विलंब से न्यायालय में प्रेषित करने की बात पर विचार करना आवश्यक नहीं समझते हैं ।"

2.3 उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य ने वर्तमान अपीलें फाइल की हैं ।

3. विद्वान् काउंसेल डा. जोसफ अरिस्टोटल एस. राज्य की ओर से हाजिर हुए और विद्वान् काउंसेल श्री राव रंजीत अभियुक्तों की ओर से हाजिर हुए ।

3.1 राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने

जोरदार रूप से यह कहा कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध करते हुए पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश को अभिखंडित और अपास्त करते हुए अभियुक्तों को दोषमुक्त करके गंभीर गलती कारित की है ।

3.2 जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि वर्तमान मामले में अभियोजन पक्ष ने सुसंगत साक्षियों की परीक्षा करके अभियुक्तों के विरुद्ध मामले को पूरी तरह साबित किया है । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 1 घटना घटने का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है और उसने अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से समर्थन किया है ।

3.3 यह दलील दी गई कि घटना दो भागों में घटित हुई थी । पहला भाग उस समय का था जब मृतक, अभि. सा. 1 और एक अन्य व्यक्ति कार में यात्रा कर रहे थे जहां अभियुक्त-1 ने मृतक के दाएं कंधे पर क्षति कारित की थी और उसके पश्चात् दूसरा भाग वह है जब मृतक भागने की कोशिश कर रहा था तो अभियुक्तों ने मृतक का पीछा किया था और वह छप्पर में पहुंचा था तथा सभी तीनों अभियुक्त छप्पर में घुसे थे, मृतक को क्षतियां कारित की थीं और उसके पश्चात् वे छप्पर से बाहर आए थे और भाग गए थे । यह दलील दी गई कि दोनों स्थानों पर अभि. सा. 1 मौजूद था और उसने दोनों स्थानों पर घटना घटते हुए देखी थी । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य की ओर दिलाया ।

3.4 उपरोक्त दलीलें देने और **कृष्णा मोची** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के पैरा 35 का अवलंब लेने के उपरांत वर्तमान अपीलों को मंजूर करने और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने तथा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय

[1] (2002) 6 एस. सी. सी. 81.

दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश को प्रत्यावर्तित करने का अनुरोध किया गया ।

4. मूल अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा वर्तमान अपीलों का जोरदार रूप से विरोध किया गया ।

4.1 जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को दोषमुक्त करते हुए तर्कपूर्ण कारण दिए हैं ।

4.2 यह दलील दी गई कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के रूप में परीक्षा कराए गए छह साक्षियों में से तीन साक्षी – अभि. सा. 2, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 4 को यहां तक कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा भी उसके अभिसाक्ष्य और अभियोजन के पक्षकथन में तात्विक विरोधाभासों के कारण विश्वसनीय नहीं पाया गया था ।

4.3 यह भी दलील दी गई कि वर्तमान मामले में महेन्द्रन की परीक्षा नहीं की गई थी, जिसने पुलिस थाने में शिकायत दी थी और जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । यह दलील दी गई कि यद्यपि अन्य स्वतंत्र साक्षी उपलब्ध थे, तो भी अभियोजन पक्ष द्वारा उनमें से किसी की परीक्षा नहीं कराई गई थी । यह दलील दी गई कि इसलिए अभियुक्तों को दोषसिद्ध करने के लिए एकमात्र साक्षी-अभि. सा. 1 पर विश्वास करना सुरक्षित नहीं है ।

4.4 आगे यह दलील दी गई कि कारित की गई क्षतियों के बारे में अभि. सा. 1 और अन्य साक्षियों के अभिसाक्ष्य में तात्विक विरोधाभास भी हैं । यह दलील दी गई कि जहां तक घटना के दूसरे भाग का संबंध है, यह छप्पर में घटित हुआ था और यहां तक कि अभि. सा. 1 के अनुसार भी वह छप्पर के बाहर था और उसने अभियुक्तों को मृतक पर क्षतियां कारित करते हुए नहीं देखा था । यह दलील दी गई कि इसलिए अभि. सा. 1 को विश्वसनीय और भरोसेमंद साक्षी नहीं कहा जा सकता

है और इसलिए अभियुक्तों को अभि. सा. 1 के एकमात्र अभिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध न किया जाए ।

4.5 अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह भी दलील दी गई कि यहां तक कि यह अभी नहीं कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा आयुध की बरामदगी को साबित किया गया था ।

4.6 उपरोक्त दलीलें देने और **कुंजु मुहम्मद** बनाम **केरल राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के पैरा 9 और 10 का अवलंब लेने के उपरांत घटना के समय और स्थान के आधार पर वर्तमान अपीलों को खारिज करने का अनुरोध किया गया ।

5. हमने संबंधित पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना । हमने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश तथा उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश का विस्तारपूर्वक अनुशीलन किया । हमने अभि. सा. 1, जिसे एक मुख्य साक्षी और प्रत्यक्षदर्शी साक्षी कहा जा सकता है, के अभिसाक्ष्य का विस्तारपूर्वक अनुशीलन किया ।

6. अभि. सा. 1 के संपूर्ण परिसाक्ष्य का अनुशीलन करने के पश्चात् यह देखा जा सकता है कि अभि. सा. 1 दोनों स्थानों पर घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । जब पहली बार अभियुक्तों ने जब मृतक कार में यात्रा कर रहा था, आक्रमण किया था तब अभि. सा. 1 कार में मौजूद था । उस समय अभियुक्तों ने कार में टक्कर मारी और विंड स्क्रीन को तोड़ दिया तथा अभियुक्त-1 ने मृतक के दाएं कंधे पर क्षति कारित की । उसके पश्चात् मृतक ने भागने की कोशिश की और वह छप्पर में पहुंचा और उस समय सभी अभियुक्तों ने मृतक का पीछा किया, छप्पर में गए, मृतक को क्षतियां कारित कीं और फिर छप्पर से बाहर आए तथा भाग गए । अभि. सा. 1 ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि उसने सभी तीनों अभियुक्तों को छप्पर में प्रवेश करते हुए देखा था और

[1] (2004) 9 एस. सी. सी. 193.

उसके पश्चात् वे बाहर आए और मृतक क्षतियों के साथ पड़ा हुआ था तथा उसे मृत पाया गया था । अभियुक्तों की ओर से अभि. सा. 1 की पूरी तरह से प्रतिपरीक्षा की गई थी । तथापि, संपूर्ण प्रतिपरीक्षा के पश्चात् भी अभि. सा. 1 उस बात पर अडिग रहा जो उसने कही थी और अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह समर्थन किया । हमें अभि. सा. 1 को अविश्वसनीय मानने और/या उसकी विश्वसनीयता पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है ।

7. अभियुक्तों की ओर से दी गई इस दलील को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि क्योंकि मूल इत्तिलाकर्ता-महेन्द्रन की परीक्षा नहीं कराई गई थी और अन्य स्वतंत्र साक्षियों की भी परीक्षा नहीं कराई गई थी तथा आयुध की बरामदगी को साबित नहीं किया गया है और घटना घटने के समय और स्थान के बारे में गंभीर संदेह है, इसलिए अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना चाहिए । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभि. सा. 1 दोनों स्थानों पर घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । इसी प्रकार, यह धारणा की जाए कि घटना में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी सिद्ध या साबित नहीं की गई है, इसे भी अभियुक्तों को दोषमुक्त करने का आधार नहीं कहा जा सकता है जब प्रत्यक्षदर्शी साक्षी का प्रत्यक्ष साक्ष्य है । अपराध कारित करने में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी अभियुक्तों को दोषसिद्ध करने के लिए अत्यावश्यक नहीं है । यदि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में प्रत्यक्ष साक्ष्य है, तो आयुध की बरामदगी के अभाव में भी अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जा सकता है । इसी प्रकार, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट/शिकायत दर्ज करने के समय के विषय में कुछ विरोधाभास होने की दशा में भी यह अभियुक्तों को दोषमुक्त करने का आधार नहीं हो सकता है जब अभियोजन पक्ष का पक्षकथन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के अभिसाक्ष्य पर आधारित है ।

8. जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभि. सा. 1 एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । उसने अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह समर्थन किया है । विधि की स्थिर स्थिति के अनुसार, एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के अभिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है

यदि उक्त साक्षी भरोसेमंद और/या विश्वसनीय पाया जाता है । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभि. सा. 1 की विश्वसनीयता और/या अवलंब लेने पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है । अत: अभि. सा. 1 के एकमात्र अभिसाक्ष्य का अवलंब लेकर अभियुक्तों को दोषसिद्ध करना सुरक्षित होगा ।

9. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय के पैरा 9 में वर्णित कारणों से अभियुक्तों को दोषमुक्त करते हुए पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश असंधार्य है और इसे अभिखंडित और अपास्त किया जाना चाहिए । तद्नुसार, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश को तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है तथा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए निर्णय और आदेश को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । अब अभियुक्त आज से छह सप्ताह के भीतर विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यथा अधिरोपित दंडादेश को भुगतने के लिए संबंधित कारागार प्राधिकारियों/संबंधित न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करेंगे । यदि अभियुक्त इसमें ऊपर अनुबंधित समय के भीतर अभ्यर्पण नहीं करते हैं, तो संबंधित पुलिस अधीक्षक/न्यायालय को निदेश दिया जाता है कि अभियुक्तों को दंडादेश भुगतने के लिए अभिरक्षा में लिया जाए ।

10. तद्नुसार, वर्तमान अपीलें मंजूर की जाती हैं ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 90

गुरमेल सिंह और एक अन्य

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य

[2018 की दांडिक अपील सं. 965]

17 अक्तूबर, 2022

न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार और न्यायमूर्ति सुधांशु धुलिया

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 149 और 302 – विधिविरुद्ध जमाव – हत्या – मृतक की हत्या कारित करने में विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य के रूप में अपीलार्थी-अभियुक्त पर कोई स्पष्ट कृत्य आरोपित न किया जाना – दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य के रूप में घटनास्थल पर किसी अभियुक्त की मौजूदगी को सिद्ध किया गया हो और विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों द्वारा सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करते हुए मृतक की हत्या कारित की गई हो, वहां आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत के आधार पर उसकी सहापराधिता को सिद्ध करने के लिए पृथक् रूप से उसके द्वारा किए गए स्पष्ट कृत्य को सिद्ध करना अपेक्षित नहीं है और विधिविरुद्ध जमाव में सक्रिय मानसिकता के साथ सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसकी मौजूदगी उसे दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 302/149 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 394] – विधिविरुद्ध जमाव – हत्या – दस अभियुक्तों द्वारा विधिविरुद्ध जमाव करके मृतक की हत्या किया जाना – अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील लंबित रहने के दौरान आठ सिद्धदोष व्यक्तियों की मृत्यु हो जाना – उनके विरुद्ध अपील का उपशमन हो जाना – सिद्धदोष व्यक्तियों की संख्या पांच से कम हो जाने का प्रभाव और असर – जहां अपील के लंबित रहने के दौरान कुछ अभियुक्तों की मृत्यु हो जाने से उनके संबंध

में अपील का उपशमन हो जाने पर अभियुक्तों की संख्या पांच से कम हो जाए और जहां कुछ अभियुक्तों की दोषमुक्ति के कारण यह संख्या पांच से कम हो जाए, ये दोनों स्थितियां पूरी तरह से अलग और सुभिन्न हैं और पूर्ववर्ती स्थिति में आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के लिए धारा 149 के उपबंध लागू होंगे ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 302/149 – विधिविरुद्ध जमाव – हत्या – दस अभियुक्तों द्वारा विधिविरुद्ध जमाव करके मृतक की हत्या किया जाना – अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील – दंड सहिता की धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि को धारा 304/149 में परिवर्तित किए जाने का अभिवाक् किया जाना – जहां विधिविरुद्ध जमाव में किसी अभियुक्त की सदस्यता को सिद्ध और साबित किया गया हो और जमाव के सदस्य अग्न्यायुधों से लैस हों और मृतक को दो गोलियां लगने के पश्चात् भी उस पर आक्रमण किया गया हो और अन्य साक्षियों को भी क्षतियां कारित की गई हों, वहां यह नहीं कहा जा सकता है कि उनका सामान्य उद्देश्य मृतक की मृत्यु कारित करना नहीं अपितु घोर क्षति कारित करना था, अत: अभियुक्त-अपीलार्थी की प्रतिनिधिक दायित्व के आधार पर धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अभियुक्त-अपीलार्थी सं. 1 और 2 मृतक के सगे भाई हैं । अभियुक्तों और मृतक के बीच भूमि विवाद उत्पन्न हुआ । मृतक को पता चला कि अभियुक्त, जिनकी संख्या दस थी, मृतक द्वारा बोई हुई धान की फसल काट रहे हैं । जब मृतक ने उन्हें फसल काटने से रोकना चाहा तो अपीलार्थी सहित अन्य अभियुक्तों ने उस पर आयुधों से हमला कर दिया और उसे पहुंची क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों का भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149, 307/149, 147 और 148 के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया । उन सभी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 149, 324/149 और 323/149 के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । इसके अतिरिक्त,

अपीलार्थियों सहित सात अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और तीन अन्य को भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि के लिए उन्हें आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था । अन्य धाराओं के अधीन दोषसिद्धि के लिए उन्हें विविध अवधियों का कारावास दिया गया था और सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया गया । उन्होंने विचारण न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष संयुक्त रूप से अपील फाइल की । इसके लंबित रहने के दौरान उनमें से सात की मृत्यु हो गई और परिणामत: उनके संबंध में अपील को उपशमन होने के रूप में खारिज कर दिया गया । उच्च न्यायालय द्वारा जीवित अपीलार्थियों (गुरमेल सिंह, केवल सिंह और करनैल सिंह) के संबंध में उक्त अपील को खारिज कर दिया गया और दोषसिद्धि और दंडादेशों की पुष्टि की गई । अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई, किंतु एक अभियुक्त केवल सिंह की इस अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई । इसलिए केवल सिंह के संबंध में इस अपील का उपशमन हो गया । करनैल सिंह इस अपील में सम्मिलित नहीं हुआ । उच्चतम न्यायालय द्वारा वर्तमान अपीलार्थी के संबंध में अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रथम प्रश्न यह है कि जब एक बार अभियोजन पक्ष ने किसी अभियुक्त/दोषसिद्ध व्यक्ति की विधिविरुद्ध जमाव में सदस्यता को सिद्ध कर दिया है तो क्या आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत के आधार पर उसकी सहापराधिता को सिद्ध करने के लिए अलग से उसके स्पष्ट कृत्य को भी सिद्ध किया जाना चाहिए । इस न्यायालय के अनुसार, भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन पदावली को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष पर ऐसा कोई भार नहीं डाला जा सकता है । अगला प्रश्न यह है कि क्या सह-अभियुक्तों की मृत्यु हो जाने के कारण दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या पांच से कम हो जाने से भारतीय दंड संहिता की धारा 149 को ध्यान में रखते हुए उसके/उनके प्रतिनिधिक

दायित्व के मामले पर विचार करने के लिए कोई असर या प्रभाव पड़ता है । इस स्थिति पर कोई दो मत नहीं हो सकते हैं कि अपील में अभियुक्तों/दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या सह-अभियुक्त/सह-दोषसिद्ध व्यक्तियों की दोषमुक्ति के कारण पांच से कम हो जाना और सह-दोषसिद्ध व्यक्तियों की मृत्यु हो जाने के कारण यह संख्या पांच से कम हो जाना, ये दोनों बातें भिन्न और सुभिन्न हैं । पूर्ववर्ती स्थिति के असर और प्रभाव की बात अब अनिर्णीत विषय नहीं है । अपील के लंबित रहते हुए सह-दोषसिद्ध व्यक्तियों की मृत्यु के कारण दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या में कमी का प्रभाव और असर उस प्रभाव और असर से भिन्न होना लाजिमी है जो दोषमुक्ति के कारण अभियुक्तों/दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या में कमी से होता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 394(1) पर विचार करते हुए, धारा 377 या धारा 378 के अधीन प्रत्येक अपील का अभियुक्त की मृत्यु पर अंतिम रूप से उपशमन हो जाएगा । इसकी उपधारा (2) में यह उपबंधित है कि अध्याय 29 के अधीन प्रत्येक अन्य अपील (जुर्माने के दंडादेश की अपील के सिवाय) का अपीलार्थी की मृत्यु पर अंतिम रूप से उपशमन हो जाएगा । स्थिति यह है कि जुर्माने के दंडादेश के विरुद्ध अपील के सिवाय प्रत्येक अपील का अपीलार्थी की मृत्यु पर उपशमन हो जाएगा, क्योंकि ऐसी परिस्थितियों में अपीलाधीन दंडादेश को निष्पादित नहीं किया जा सकेगा । पूर्वोक्त चर्चा का सारांश यह है कि मात्र इस तथ्य से कि या तो उच्च न्यायालय के समक्ष 1992 की दांडिक अपील सं. 1510 के लंबित रहने के दौरान या इस अपील के लंबित रहने के दौरान दस दोषसिद्ध व्यक्तियों में से सात की मृत्यु हो जाने से विधिविरुद्ध जमाव करके सामान्य उद्देश्य की पूर्ति से उद्भूत आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के लिए इस उपबंध को लागू न करने का कोई कारण नहीं हो सकता है । पूर्वोक्त बिंदुओं को उपरोक्तानुसार अभिनिर्धारित करने के पश्चात् अब यह न्यायालय अपीलार्थी की इस दलील पर विचार करेगा कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 304 के भाग 1 या भाग 2 के अधीन परिवर्तित किया जाना चाहिए । इस न्यायालय ने पहले ही इस तथ्य का उल्लेख किया है कि

अपीलार्थी को मात्र भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित नहीं किया गया था । उसे धारा 302 और धारा 149 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था । इसलिए विधिविरुद्ध जमाव में अपीलार्थी की सदस्यता के बारे में समवर्ती निष्कर्ष के साथ इस न्यायालय की सहमति को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी उस जमाव के सदस्यों में से किसी सदस्य द्वारा कारित किए गए कृत्य के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के फलस्वरूप आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व से बच नहीं सकता है यदि विधिविरुद्ध जमाव का सामान्य उद्देश्य हत्या कारित करना था न कि घोर क्षति कारित करना । न्यायालय ऐसा इसलिए कह रहा है क्योंकि धारा 149 का उद्देश्य इस बात को विनिर्दिष्ट करना है कि जिस व्यक्ति का मामला इसके दायरे में आता है उसे यह प्रतिरक्षा प्रस्तुत करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता कि विधिविरुद्ध जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में कारित किया गया अपराध उसने स्वयं अपने हाथ से कारित नहीं किया था । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य से यह प्रकट होता है कि विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य अग्न्यायुध लिए हुए थे और उन्होंने उनका प्रयोग मृतक दलीप सिंह के विरुद्ध किया था । अन्य घातक आयुधों का प्रयोग दलीप सिंह के विरुद्ध और इन साक्षियों के विरुद्ध भी किया गया था । जब तथ्य यह है कि दलीप सिंह को दो गोलियां लगी थीं और इसके पश्चात् भी विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों द्वारा उस पर आक्रमण किया गया था, तो कैसे सामान्य उद्देश्य को दलीप सिंह की हत्या कारित करने की बजाय अन्य उद्देश्य कहा जा सकता है । एक गोली अत्यधिक निकट से चलाई गई थी, यह बात इस तथ्य से स्पष्ट है कि इससे न केवल घाव के मार्ग में की रक्त धमनियां और ऊतक फट गए थे अपितु, उर्वास्थि, जो मानव शरीर की सबसे मजबूत हड्डी है, भी टुकड़े-टुकड़े हो गई थी । यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि उस स्थान पर केवल एक बंदूक की गोली से पहुंची क्षति थी क्योंकि बंदूक की गोली का अन्य घाव बाईं जांघ के आंतरिक भाग पर था । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के अभिसाक्ष्य से यह प्रकट होता है कि दलीप सिंह बंदूक की गोली से ऐसी क्षतियां पहुंचने पर नीचे गिर गया था और जब उन्होंने उसको

बचाने के लिए जाने का प्रयत्न किया तो उन पर आयुधों से आक्रमण किया गया था । इसके अतिरिक्त, दलीप सिंह, जो उस समय जमीन पर गिर गया था, पर पुन: आक्रमण किया गया था । जब किसी व्यक्ति पर, जिसे बंदूक की गोली से क्षतियां पहुंची हों और अत्यधिक रक्तस्राव हो रहा हो, पुन: आक्रमण किया जाता है और जो व्यक्ति उसके बचाव के लिए आए उन पर भी आक्रमण किया गया हो, तब ऐसी परिस्थितियों से केवल यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सामान्य उद्देश्य उस व्यक्ति को जान से मारने का था । इन तथ्यों और परिस्थितियों में, निचले न्यायालयों द्वारा मूल्यांकन किए गए साक्ष्य से प्रकटित उनके द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि विधिविरुद्ध जमाव का सामान्य उद्देश्य दलीप सिंह की हत्या कारित करना था, अनुचित नहीं कहा जा सकता है जिससे इस न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप करने की आवश्यकता हो । वास्तविकता यह है कि विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य, जिनकी संख्या दस थी, उस स्थान पर न केवल अग्न्यायुधों से लैस होकर अपितु अन्य घातक आयुधों से भी लैस होकर इकट्ठा हुए थे और जिस रीति में उन्होंने हिंसा की थी और अंततोगत्वा परिणाम से निश्चित रूप से उक्त निष्कर्ष का समर्थन होता है । इस स्थिति के संबंध में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि आपराधिक मानव वध को हत्या बनाने के लिए वह कृत्य जिसके द्वारा मृत्यु कारित की जाती है, न केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अधीन पहले से चौथे खंडों में से किसी एक या अधिक खंड के अंतर्गत आना चाहिए अपितु वे कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के पांच अपवादों में से किसी के अंतर्गत भी नहीं आने चाहिएं । यद्यपि अपीलार्थी की दलील यह है कि धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि को धारा 304/149 के अधीन परिवर्तित किया जाना चाहिए, किंतु वास्तविकता यह है कि वह इसे भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के पांच अपवादों में से किसी के भीतर लाने में असफल रहा है । ऐसी स्थिति में, इन दलीलों पर विचार करने का कतई कोई प्रश्न नहीं है कि आपराधिक मानव वध या तो धारा 304 भाग 1 या धारा 304 भाग 2 के अंतर्गत आता है ।

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2021] (2021) 7 एस. सी. सी. 188 :
राकेश और एक अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** ; 19

[2012] ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 1743 :
सुरेन्द्र और अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 11

[2011] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1379 :
अमरीक राय और अन्य बनाम **बिहार राज्य** ; 11

[2011] (2011) 5 एस. सी. सी. 324 :
कुलदीप यादव और अन्य बनाम **बिहार राज्य** ; 18

[2008] (2008) 7 एस. सी. सी. 690 :
हरि प्रसाद छपोलिया बनाम **भारत संघ** ; 14

[2003] ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 539 :
युनिस उर्फ **करिया** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ; 11, 18

[2003] (2003) 12 एस. सी. सी. 655 :
जय करण और अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 18

[1992] (1992) 1 एस. सी. सी. 49 :
नेथाला पोथुराजू और अन्य बनाम
आंध्र प्रदेश राज्य ; 13

[1987] (1987) 1 एस. सी. सी. 679 :
अमर सिंह और अन्य बनाम **पंजाब राज्य** ; 12

[1975] (1975) 3 एस. सी. सी. 343 :
हरनाम सिंह बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** । 14

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2018 की दांडिक अपील सं. 965.

1982 की दांडिक अपील सं. 1510 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 19 अगस्त, 2014 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री डा. सर्बजीत शर्मा, (सुश्री) माहिन खान और श्री एस. के. वर्मा

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री सखाराम सिंह, ज्येष्ठ अधिवक्ता, श्री अजय विक्रम सिंह और श्रीमती प्रियंका सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार ने दिया ।

न्या. रविकुमार – अपीलार्थियों का 1981 के सेशन विचारण सं. 167 में भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149, 307/149, 147 और 148 के अधीन अपराधों के लिए अपर सेशन न्यायाधीश-III, रामपुर, उत्तर प्रदेश के न्यायालय के समक्ष विचारण किया गया था । तारीख 10 जून, 1982 के निर्णय के अनुसार वे सभी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 149 के अधीन दोषसिद्ध किए गए थे । बाद में, यह पाया गया कि उनके विरुद्ध धारा 307/149 के अधीन अपराध नहीं बनाया गया अपितु धारा 324/149 और 323/149 के अधीन अपराध बनाए गए थे । परिणामत: उन्हें उन धाराओं के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया था । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थियों सहित सात अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन और तीन अन्य को भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था । भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि के लिए उन्हें आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था । अन्य धाराओं के अधीन दोषसिद्धि के लिए उन्हें विविध अवधियों का कारावास दिया गया था और सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया गया था । उन्होंने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष संयुक्त रूप से अपील अर्थात् 1982 की दांडिक अपील सं. 1510 फाइल की । इसके लंबित रहने के दौरान उनमें से सात की मृत्यु हो गई और परिणामत: उनके संबंध में अपील को उपशमन होने के रूप में खारिज कर दिया गया । तारीख 19 अगस्त, 2014 के आक्षेपित निर्णय के अनुसार, जीवित अपीलार्थियों- गुरमेल सिंह, केवल सिंह और करनैल सिंह के संबंध में उक्त अपील को खारिज कर दिया गया और दोषसिद्धि और दंडादेशों की पुष्टि की गई । यद्यपि यह अपील संयुक्त रूप से गुरमेल सिंह और केवल सिंह द्वारा

फाइल की गई थी, किंतु केवल सिंह की इस अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई । इसलिए केवल सिंह के संबंध में इस अपील का उपशमन हो गया । करनैल सिंह इस अपील में सम्मिलित नहीं हुआ था । संक्षेप में, यह अपील केवल प्रथम अपीलार्थी-गुरमेल सिंह के मामले में विद्यमान है और इसलिए इस अपील में इसके पश्चात् उसे 'अपीलार्थी' के रूप में निर्दिष्ट किया गया है ।

2. अपीलार्थी विचारण न्यायालय के समक्ष अभियुक्त सं. 3 था । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने इस अपील की वास्तविक गुंजाइश को महसूस करते हुए अपनी दलीलों को केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि के स्थान पर भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के अधीन दोषसिद्धि में परिवर्तित करने तक सीमित रखी ।

3. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल के साथ-साथ राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल को भी सुना ।

4. संक्षेप में, अभियोजन का पक्षकथन इस प्रकार है । अभि. सा. 1 श्री दर्शन सिंह ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई थी । अभियुक्त सं. 1 और 2 मैसर्स ठाकुर सिंह और चंदन सिंह उसके पिता दलीप सिंह (जिसे इसमें इसके पश्चात् "मृतक" कहा गया है) के सगे भाई हैं । भाइयों ने दो भिन्न-भिन्न विक्रय-विलेखों के अधीन गांव धुरयाई, जिला रामपुर में सोलह एकड़ भूमि खरीदी थी । दस एकड़ भूमि के लिए विक्रय-विलेख मैसर्स ठाकुर सिंह और चंदन सिंह के पक्ष में निष्पादित किया गया था और शेष छह एकड़ एक पृथक् विक्रय-विलेख के अधीन मृतक के पक्ष में रजिस्ट्रीकृत की गई थी । पारस्परिक सहमति के आधार पर उक्त विक्रय-विलेखों के अंतर्गत आने वाली भूमि का विभाजन किया गया था । चंदन सिंह आरंभ से कुंवारा था और वह ठाकुर सिंह के साथ रह रहा था तथा वे खेतों को अलग-अलग करने के लिए लगाई गई हेज, जिसे पक्षकारों द्वारा हिंदी में 'मेंड' कहा गया है, जो पक्षकारों की भूमि को अलग-अलग करने के लिए उत्तर से दक्षिण दिशा (ऊर्ध्वाधर) लगाई गई थी, के पश्चिम की ओर स्थित दस एकड़ भूमि को संयुक्त रूप से जोत रहे थे । मृतक उक्त मेंड के पूर्व की ओर स्थित भाग को जोत रहा था ।

ऐसा होते हुए, बाद के प्रक्रम पर ठाकुर सिंह और चंदन सिंह ने भूमि की अदला-बदली करनी चाही और मृतक को संपूर्ण सोलह एकड़ भूमि के दक्षिण की ओर स्थित छह एकड़ भूमि को जोतने के लिए कहा जिससे वे शेष भूमि की जुताई करने में समर्थ हो सकें । यह बात मृतक को मंजूर नहीं थी । भाइयों में उक्त विवाद के कारण आरंभ में सिविल मुकदमेबाजी हुई और बाद में इसके कारण एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटी, जिसमें दलीप सिंह की मृत्यु हो गई । घटना की उत्पत्ति बोए हुए खेत पर एक विवाद से हुई जो संपूर्ण सोलह एकड़ भूमि में से चार एकड़ की पट्टी है ।

5. तारीख 26 अक्तूबर, 1980 को अभि. सा. 1, उसके माता-पिता और भाई अपने मकान में थे तब उनका नौकर रोहतास उन्हें यह सूचित करने के लिए आया कि ठाकुर सिंह और चंदन सिंह 20-25 श्रमिकों का प्रयोग करके धान की फसल (दलीप सिंह द्वारा बोई हुई) की कटाई कर रहे हैं और इसके उपरांत वे उस ओर रवाना हुए । अभि. सा. 1 लोहे की बरी लगी लाठी लिए हुए था और अन्य निहत्थे थे । घटनास्थल पर पहुंचने पर दलीप सिंह ने ठाकुर सिंह और चंदन सिंह को फसल काटने से रुकने के लिए कहा । ठाकुर सिंह गंडासी से लैस था, करनैल सिंह तलवार से लैस था, चंदन सिंह और हरचरण सिंह लाठियों से लैस थे, गुरमेल सिंह (प्रथम अपीलार्थी) बल्लम से लैस था, सिंघाड़ा सिंह निहत्था था, केवल सिंह (द्वितीय अपीलार्थी) के पास देशी पिस्तौल थी और बचन सिंह, अवतार सिंह और करतार सिंह अपने हाथों में बंदूकें लिए हुए थे । इसके पश्चात् सह-अभियुक्त ने दलीप सिंह और उसके व्यक्तियों को खेत से निकल जाने के लिए कहा और इसी बीच उनके द्वारा लगाए गए व्यक्ति फसल काटते रहे । शीघ्र ही, बचन सिंह, अवतार सिंह और केवल सिंह, जो अग्न्यायुध लिए हुए थे, ने दलीप सिंह पर उसे जान से मारने की दृष्टि से गोली चला दी और अग्न्यायुध की क्षतियां पहुंचने पर वह नीचे गिर गया । जब अभि. सा. 1 दलीप सिंह की ओर दौड़ा तो अन्य अभियुक्तों ने उसे, उसके भाई निर्मल सिंह और दलीप सिंह को भी अपने आयुधों से क्षतियां पहुंचाईं । अभि. सा. 1 ने आत्मरक्षा में अपनी लाठी लहराई । जब अभियुक्त घटनास्थल से चले गए, तो उसने एक जीप

लाने की व्यवस्था की और अस्पताल के रास्ते में दलीप सिंह की मृत्यु हो गई ।

6. अभियुक्तों के विरुद्ध इन प्रश्नों पर कि क्या वहां एक विधिविरुद्ध जमाव था या नहीं और क्या दलीप सिंह की मृत्यु मानव वध प्रकृति की थी, विश्वासोत्पादक कारणों पर आधारित समवर्ती निष्कर्षों को दृष्टिगत करते हुए हम उन निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए कोई बाध्यकारी कारण या आधार नहीं पाते हैं । इसी प्रकार, निचले न्यायालयों ने भी समवर्ती रूप से यह पाया था कि ठाकुर सिंह और उसके आदमी (अभियुक्त पक्ष) आक्रामक थे और अभियोजन पक्ष अभियुक्तों में से दो अभियुक्तों अर्थात् ठाकुर सिंह और चंदन सिंह पर पाई गई क्षतियों को स्पष्ट करने में सफल रहा था । हमारे द्वारा सावधानीपूर्वक विचार करने पर, हमने पाया है कि उन समवर्ती निष्कर्षों में भी किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । तथापि, अपीलार्थियों की ओर से दी गई दलीलों (नीचे निर्दिष्ट की गई) को ध्यान में रखते हुए कतिपय प्रश्नों पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है ।

7. अपीलार्थी की यह दलील है कि यदि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य को विश्वसनीय मान भी लिया जाए तो भी मृतक के शव पर पाई गई किसी भी मृत्यु-पूर्व क्षति को उस पर आरोपित नहीं किया जा सकता है । इस दलील के साथ-साथ यह दलील कि दोषसिद्धि को धारा 304 के अधीन परिवर्तित किया जाना चाहिए, बेतुकी प्रतीत होती है भले ही पूरी तरह असंगत न हो । यह दलील दी गई है कि अपीलार्थी केवल एक बल्लम अर्थात् भाला लिए हुए था । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट, प्रदर्श क-4 से प्रकट नहीं होता है कि बल्लम से कोई क्षति कारित की गई थी । इसके अतिरिक्त, यह दलील दी गई है कि सिद्धदोष व्यक्तियों में से किसी से भी किसी आयुध की बरामदगी नहीं हुई थी, बल्लम की बात तो दूर । ऐसी दलीलों के साथ अग्रसर होने से पूर्व, केवल अभि. सा. 4 डा. एच. बी. भट्ट के साक्ष्य को निर्दिष्ट करना उपयुक्त होगा जिसने तारीख 27 अक्तूबर, 1980 को दलीप सिंह के शव की मरणोत्तर परीक्षा की थी और प्रदर्श क-4 रिपोर्ट तैयार की थी । प्रदर्श क-4 मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट का अनुशीलन करने पर मृतक को

पहुंची मृत्यु-पूर्व की निम्नलिखित क्षतियां थीं :–

(1) दाईं जांघ के आंतरिक भाग पर, जानुपृष्ठीय खात से 12 सें. मी. ऊपर, जो दांए घुटने के जोड़ से 9 सें. मी. ऊपर दाईं जांघ के सामने के बाह्य भाग पर 5 सें. मी. × 1. सें. मी. के निकासी घाव से जुड़ा था, 1 सें. मी. × 0.5 सें. मी. का बंदूक की गोली का प्रविष्टि घाव । घाव के रास्ते में की सभी रक्त धमनियां और ऊतक फटे हुए थे । उर्वास्थि टुकड़े-टुकड़े थी । घाव में गोलियों के चार टुकड़े पाए गए थे । त्वचा पर कोई कालिश, गोदन और झुलसन मौजूद नहीं थी ।

(2) बाईं जांघ के आंतरिक भाग पर, बाएं जानुपृष्ठीय खात से लगभग 13 सें. मी. ऊपर, जो 0.5 सें. मी. × 4 सें. मी. के विद्यमान प्रविष्टि घाव जुड़ा था, 0.5 सें. मी. × 0.5 सें. मी. का बंदूक की गोली का प्रविष्टि घाव । कोई कालिश नहीं देखी गई ।

3. तर्जनी, अनामिका और मध्य अंगुलियों के पीछे मध्य में प्रत्येक पर 2 सें. मी. × 1 सें. मी. माप का खरोंचयुक्त नील ।

(4) सिर पर बाईं तरफ बाएं कान से 12 सें. मी. ऊपर 6 सें. मी. × 0.5 सें. मी. × हड्डी की गहराई तक विदीर्ण घाव ।

(5) दाईं प्रबाहु के पीछे दाईं कलाई के जोड़ से लगभग 3 सें. मी. ऊपर 3 सें. मी. × 1 सें. मी. का नील ।

8. अभि. सा. 4 डा. एच. बी. भट्ट ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृत्यु का कारण क्षतियों की वजह से पहुंचा सदमा और रक्तस्राव था । उसने स्पष्ट रूप से यह भी अभिसाक्ष्य दिया था कि क्षतियां मृत्यु कारित करने के लिए प्रकृति के मामूली अनुक्रम में पर्याप्त थीं । हमने पहले ही यह अभिनिर्धारित किया है कि ये समवर्ती निष्कर्ष कि दलीप सिंह की मृत्यु मानव वध थी, विश्वासोत्पादक कारणों पर आधारित है और इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । क्षति सं. 1, जो एक बंदूक की गोली से पहुंचा घाव है, जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है, से घाव के मार्ग में की रक्त धमनियां और ऊतक पूरी तरह फट गए थे और उक्त

घाव के आकार से प्रकट होता है कि यह बहुत ही गंभीर था । बंदूक से पहुंची दूसरी क्षति भी इतनी ही गंभीर प्रकृति की थी । इस प्रकार, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य का समर्थन अभि. सा. 4 के साक्ष्य के साथ-साथ प्रदर्श क-4 रिपोर्ट से होता है कि मृतक को अग्न्यायुध से गोलियां लगी थीं और बंदूक की गोलियों से हुए घावों के कारण उसकी मृत्यु हुई थी । बंदूक की गोलियों से पहुंची इन क्षतियों के अतिरिक्त मृतक को तीन मृत्यु-पूर्व की क्षतियां भी पहुंची थीं, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है । अपीलार्थी की दलील को ध्यान में रखते हुए, जिसे ऊपर निर्दिष्ट किया गया है, अभि. सा. 1 दर्शन सिंह और अभि. सा. 2 निर्मल सिंह जो मृतक के पुत्र हैं, को पहुंची क्षतियां सुसंगत हैं । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के रूप में उनके परिसाक्ष्य इस आशय के हैं कि उन्हें भी उसी घटना में क्षतियां पहुंची थीं और उनके साक्ष्य का समर्थन अभि. सा. 3 डा. एन. के. टंडन के साक्ष्य से और प्रदर्श क-2 और क-3 से होता है । अभि. सा. 3 के साक्ष्य के साथ-साथ प्रदर्श क-3 का अनुशीलन करने पर दर्शन सिंह को निम्नलिखित क्षतियां पहुंची थीं :–

(1) बाईं भुजा के कंधे पर पिछली तरफ 2 सें. मी. × ¼ सें. मी. की खरोंच ।

(2) बाएं कंधे पर पिछली तरफ 2/1/2 सें. मी. × 1 सें. मी. का नील ।

(3) बाएं कंधे पर पिछली तरफ 3 सें. मी. × ¾ सें. मी. × ½ सें. मी. का विदीर्ण घाव ।

(4) बाएं कान के उपरि भाग में 5 सें. मी. × 1½ सें. मी. का नील ।

(5) सिर के पिछले भाग में 3 सें. मी. × ½ सें. मी. × हड्डी की गहराई तक चिरा-फटा हुआ घाव । एक्स-रे कराने का परामर्श दिया गया ।

(6) पीठ पर 5 सें. मी. × 2 सें. मी. का नील ।

(7) बाएं कंधे के पीछे पिछली तरफ 2 सें. मी. x 1 सें. मी. का नील ।

9. अभि. सा. 3 के साक्ष्य और प्रदर्श क-2 से प्रकट होता है कि अभि. सा. 2 निर्मल सिंह को निम्नलिखित क्षतियां पहुंची थीं :–

(1) बाईं तरफ निचली भुजा पर ऊपर की ओर कलाई के जोड़ के 5 सें. मी. ऊपर 3 सें. मी. × 3 सें. मी. माप का घसीटने का नील ।

(2) बाईं भुजा पर ऊपर के भाग पर 5 सें. मी. × 1½ सें. मी. का नील ।

(3) सिर के मध्य में 3½ सें. मी. × ½ सें. मी. × हड्डी की गहराई तक विदीर्ण घाव । एक्स-रे कराने का परामर्श दिया गया ।

10. यद्यपि यह पाया गया था कि अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 के अधीन कोई मामला नहीं बनाया गया था, तो भी स्पष्ट रूप से अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 को पहुंची क्षतियों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 324/149 और 323/149 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था । निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया कि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने अपीलार्थी की मौजूदगी और सहभागिता के संबंध में विनिर्दिष्ट रूप से अभिसाक्ष्य दिया था । हमारे ध्यान में यह बताने के लिए कुछ नहीं लाया गया है कि निचले न्यायालयों का निष्कर्ष था कि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य से कोई गंभीर विरोधाभास निकलकर आया था, जिससे उनके परिसाक्ष्यों को अविश्वसनीय कहा जा सके । ऐसी परिस्थितियों में, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य को, जिसका समर्थन अभि. सा. 4 के साथ-साथ प्रदर्श क-4 और अभि. सा. 3 तथा प्रदर्श क-2 और क-3 से भी होता है, को केवल विश्वसनीय कहा जा सकता है, जैसा कि निचले न्यायालयों द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है । उनके साक्ष्य से, जैसा कि निचले न्यायालयों द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, विधिविरुद्ध जमाव का गठन करना प्रकट होता है जिसमें अपीलार्थी भी एक सदस्य था । अन्यथा भी, अपीलार्थी की दलीलों से, जैसा कि इसमें ऊपर वर्णन किया गया है, यह प्रकट होता है कि विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य होने

की बात को गंभीर रूप से चुनौती नहीं दी गई है और उनकी मुख्य दलील यह है कि अभियोजन पक्ष ने उसके भागरूप किसी स्पष्ट कृत्य को सिद्ध नहीं किया था । दोषसिद्धि को परिवर्तित करने के लिए आगे की दलील का मूल्यांकन करने के प्रयोजन के लिए इसकी युक्तियुक्तता की परख इस उजागर तथ्य के परिणाम, यदि कोई है, पर भी विचार करके की जानी चाहिए कि दस सिद्धदोष व्यक्तियों में से आठ की या तो उच्च न्यायालय के समक्ष या इस न्यायालय के समक्ष अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी ।

11. पूर्वोक्त दलीलों के संदर्भ में, कतिपय अन्य सहबद्ध प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक हो गया है । इस संबंध में प्रथम प्रश्न यह है कि जब एक बार अभियोजन पक्ष ने किसी अभियुक्त/दोषसिद्ध व्यक्ति की विधिविरुद्ध जमाव में सदस्यता को सिद्ध कर दिया है तो क्या आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत के आधार पर उसकी सहापराधिता को सिद्ध करने के लिए अलग से उसके स्पष्ट कृत्य को भी सिद्ध किया जाना चाहिए । हमारे अनुसार, भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन पदावली को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष पर ऐसा कोई भार नहीं डाला जा सकता है । यद्यपि इस प्रश्न पर अनेक विनिश्चय हैं, तो भी हम **अमरीक राय और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1], **सुरेन्द्र और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] और **युनिस** उर्फ **करिया** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[3] वाले मामले में के विनिश्चयों को निर्दिष्ट करना पर्याप्त समझते हैं । **अमरीक राय** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यहां तक कि किसी विधिविरुद्ध जमाव में सक्रिय मानसिकता के साथ सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए मौजूदगी भी किसी व्यक्ति को विधिविरुद्ध जमाव के कृत्यों के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी बनाती है । **सुरेन्द्र** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सामान्य उद्देश्य का निष्कर्ष विभिन्न कारकों जैसे आयुध जिससे सदस्य लैस थे, उनकी

---

[1] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1379.

[2] ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 1743.

[3] ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 539.

गतिविधियां, उनके द्वारा कारित हिंसात्मक कृत्य और उसके परिणाम से निकाला जाना चाहिए । **युनिस** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि विधिविरुद्ध जमाव के भाग के रूप में अभियुक्त की मौजूदगी उसकी दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त है । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि जब विधिविरुद्ध जमाव के भाग के रूप में अभियुक्त की घटनास्थल पर मौजूदगी विवादग्रस्त न हो तो यह बात उसे दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त होगी, भले ही उस पर कोई स्पष्ट कृत्य आरोपित न किया गया हो ।

12. अपीलार्थी की दलीलों का मूल्यांकन करने के लिए विचार किया जाने वाला अगला प्रश्न यह है कि क्या सह-अभियुक्तों की मृत्यु हो जाने के कारण दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या पांच से कम हो जाने से भारतीय दंड संहिता की धारा 149 को ध्यान में रखते हुए उसके/उनके प्रतिनिधिक दायित्व के मामले पर विचार करने के लिए कोई असर या प्रभाव पड़ता है । इस स्थिति पर कोई दो मत नहीं हो सकते हैं कि अपील में अभियुक्तों/दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या सह-अभियुक्त/सह-दोषसिद्ध व्यक्तियों की दोषमुक्ति के कारण पांच से कम हो जाना और सह-दोषसिद्ध व्यक्तियों की मृत्यु हो जाने के कारण यह संख्या पांच से कम हो जाना, ये दोनों बातें भिन्न और सुभिन्न हैं । पूर्ववर्ती स्थिति के असर और प्रभाव की बात अब अनिर्णीत विषय नहीं है । **अमर सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में सात अभियुक्त व्यक्तियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 148, धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोपित किया गया था । अभियोजन का यह पक्षकथन नहीं था कि अन्य व्यक्ति भी अपराध के कारित करने में अंतर्वलित थे । यह अभिनिर्धारित किया गया कि सात अभियुक्त में से तीन की दोषमुक्ति के कारण शेष चार अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 148 के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था ।

13. **नेथाला पोथुराजू और अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[2] वाले

---

[1] (1987) 1 एस. सी. सी. 679.

[2] (1992) 1 एस. सी. सी. 49.

मामले में भी इस स्थिति को दोहराया गया था । वह ऐसा मामला था, जहां अभियोजन का पक्षकथन यह था कि सात अभियुक्त व्यक्तियों ने एक विधिविरुध जमाव का गठन किया था और एक सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करते हुए हत्या कारित की थी और उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन आरोपित किया गया था । उनमें से चार को दोषमुक्त कर दिया गया था । अपील में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उक्त तथ्यात्मक स्थिति में शेष तीन अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 लागू करके दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था । साथ ही साथ, यह भी अभिनिर्धारित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 149 का लागू न होना दोषसिद्ध अभियुक्तों/अपीलार्थियों के लिए एक वर्जन नहीं होगा यदि साक्ष्य से एक सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए अपराध का कारित करना प्रकट होता है । उक्त उपबंध और ऊपर निर्दिष्ट विनिश्चयों से यह प्रकट होता है कि कसौटी यह है कि सामान्य उद्देश्य रखने वाले व्यक्ति अवश्य पांच या अधिक होने चाहिए । हम यह भी कहना चाहेंगे कि ऐसे व्यक्तियों को उस मामले में अपवर्जित किया जाना चाहिए जो मात्र दर्शक हों ।

14. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अपील के लंबित रहते हुए सह-दोषसिद्ध व्यक्तियों की मृत्यु के कारण दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या में कमी का प्रभाव और असर उस प्रभाव और असर से भिन्न होना लाजिमी है जो दोषमुक्ति के कारण अभियुक्तों/दोषसिद्ध व्यक्तियों की संख्या में कमी से होता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 394(1) पर विचार करते हुए, धारा 377 या धारा 378 के अधीन प्रत्येक अपील का अभियुक्त की मृत्यु पर अंतिम रूप से उपशमन हो जाएगा । इसकी उपधारा (2) में यह उपबंधित है कि अध्याय 29 के अधीन प्रत्येक अन्य अपील (जुर्माने के दंडादेश की अपील के सिवाय) का अपीलार्थी की मृत्यु पर अंतिम रूप से उपशमन हो जाएगा । स्थिति यह है कि जुर्माने के दंडादेश के विरुद्ध अपील के सिवाय प्रत्येक अपील का अपीलार्थी की मृत्यु पर उपशमन हो जाएगा, क्योंकि ऐसी परिस्थितियों में अपीलाधीन दंडादेश को निष्पादित नहीं किया जा सकेगा । यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 394 की पदावली से सुझाव मिलता है कि तदधीन उपबंध भारत के

संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत लेकर की गई अपील के संबंध में लागू नहीं होते हैं, इस स्थिति को इस न्यायालय द्वारा **हरनाम सिंह** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[1] और **हरि प्रसाद छपोलिया** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामलों में के विनिश्चयों में अन्यथा स्थिर किया गया था । **हरनाम सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 394 भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत लेकर की गई अपील के संबंध में लागू नहीं होती है और इसलिए प्रश्न यह है कि क्या तदधीन की गई अपील का अपीलार्थी की मृत्यु पर उपशमन हो जाएगा जबकि यह कड़ाईपूर्वक उस धारा के अधीन शासित नहीं होती है । इसके अतिरिक्त यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि समरूपता के हित में भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अपीलों पर इसे लागू करने का कोई विधिमान्य कारण नहीं है क्योंकि कई सारे नियम उन नियमों से भिन्न हैं जो संहिता के अधीन अपील को शासित करते हैं । **हरि प्रसाद छपोलिया** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 394 के सिद्धांत भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अपीलों को लागू होंगे ।

15. 'उपशमन' या 'उपशमन होना' शब्द को दंड प्रक्रिया संहिता में परिभाषित नहीं किया गया है । उक्त परिस्थितियों में, इसके शब्दकोशीय अर्थ पर विचार किया जाना चाहिए । दांडिक कार्यवाहियों के संबंध में ब्लैक लॉ डिक्शनरी, दसवें संस्करण में दिए गए अर्थ पर विचार करते हुए उपशमन से अभिप्रेत है 'दांडिक कार्यवाहियों का मुकदमेबाजी के सामान्य अनुक्रम में उनका समापन होने से पूर्व रुक जाना, जब प्रतिवादी की मृत्यु हो जाती है' । इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि दांडिक कार्यवाहियों में उपशमन का अर्थ 'ऐसी कार्यवाहियों के लंबित रहते हुए अभियुक्त/दोषसिद्ध व्यक्ति की मृत्यु के कारण ऐसी कार्यवाहियों का रुक

[1] (1975) 3 एस. सी. सी. 343.

[2] (2008) 7 एस. सी. सी. 690.

जाना' के रूप में लगाया जा सकता है । संक्षेप में, यह प्रकट होता है कि दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील का (जुर्माने के दंडादेश की अपील के सिवाय) अपीलार्थी की मृत्यु पर उपशमन हो जाएगा क्योंकि ऐसी स्थिति में अपीलाधीन दंडादेश को निष्पादित नहीं किया जा सकेगा । उपशमन निश्चित रूप से दोषमुक्ति से भिन्न है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 394(2) के परंतुक पर दृष्टिपात करने से ही यह स्थिति पूरी तरह स्पष्ट हो जाएगी । उक्त परंतुक इस प्रकार है :–

> "परंतु जहां अपील दोषसिद्धि और मृत्यु के या कारावास के दंडादेश के विरुद्ध है और अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी की मृत्यु हो जाती है, वहां उसका कोई भी निकट नातेदार अपीलार्थी की मृत्यु के तीस दिन के अंदर अपील जारी रखने की इजाजत के लिए अपील न्यायालय में आवेदन कर सकता है और यदि इजाजत दे दी जाती है तो अपील का उपशमन नहीं होगा ।"

16. पूर्वोक्त चर्चा का सारांश यह है कि मात्र इस तथ्य से कि या तो उच्च न्यायालय के समक्ष 1992 की दांडिक अपील सं. 1510 के लंबित रहने के दौरान या इस अपील के लंबित रहने के दौरान दस दोषसिद्ध व्यक्तियों में से सात की मृत्यु हो जाने से विधिविरुद्ध जमाव करके सामान्य उद्देश्य की पूर्ति से उद्भूत आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व के लिए इस उपबंध को लागू न करने का कोई कारण नहीं हो सकता है ।

17. पूर्वोक्त बिंदुओं को उपरोक्तानुसार अभिनिर्धारित करने के पश्चात् अब हम अपीलार्थी की इस दलील पर विचार करेंगे कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 304 के भाग 1 या भाग 2 के अधीन परिवर्तित किया जाना चाहिए । हमने पहले ही इस तथ्य का उल्लेख किया है कि अपीलार्थी को मात्र भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित नहीं किया गया था । उसे धारा 302 और धारा 149 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था । इसलिए विधिविरुद्ध जमाव में अपीलार्थी की सदस्यता के बारे में समवर्ती निष्कर्ष के साथ हमारी सहमति को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी उस जमाव के सदस्यों में से किसी सदस्य द्वारा कारित किए गए कृत्य के

लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के फलस्वरूप आन्वयिक/प्रतिनिधिक दायित्व से बच नहीं सकता है यदि विधिविरुद्ध जमाव का सामान्य उद्देश्य हत्या कारित करना था न कि घोर क्षति कारित करना । हम ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि धारा 149 का उद्देश्य इस बात को विनिर्दिष्ट करना है कि जिस व्यक्ति का मामला इसके दायरे में आता है उसे यह प्रतिरक्षा प्रस्तुत करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता कि विधिविरुद्ध जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में कारित किया गया अपराध उसने स्वयं अपने हाथ से कारित नहीं किया था ।

18. हमने पहले ही **सुरेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय को निर्दिष्ट किया है जिसमें इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि सामान्य उद्देश्य का निष्कर्ष विभिन्न कारकों, जैसे आयुध जिनसे सदस्य लैस थे, उनकी गतिविधियां, उनके द्वारा कारित किए गए हिंसात्मक कृत्य और उनके परिणाम से निकाला जाना चाहिए । **कुलदीप यादव और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 149 को लागू करने के लिए अवश्य यह दर्शित किया जाना चाहिए कि अपराध में आलिप्त करने वाला कृत्य विधिविरुद्ध जमाव के सामान्य उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए किया गया था और यह अवश्य अन्य सदस्यों की जानकारी में होना चाहिए कि सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में ऐसा कृत्य किए जाने की संभावना है । **जय करण और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में के विनिश्चय में अपीलार्थी जय करण और बाबू को भारतीय दंड संहिता की धारा 148, धारा 149 के साथ पठित धारा 302 और धारा 149 के साथ पठित धारा 323 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और अन्य अपीलार्थी वीरभद्र को भारतीय दंड संहिता की धारा 148, धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था । निचले न्यायालय ने पाया कि अभियुक्त व्यक्ति बंदूकों, कांटा और बंक से लैस थे और पाया कि उन्होंने मृतक की हत्या कारित की थी और अन्य व्यक्तियों को क्षतिग्रस्त किया था । इस न्यायालय ने

---

[1] (2011) 5 एस. सी. सी. 324.

[2] (2003) 12 एस. सी. सी. 655.

अभिनिर्धारित किया कि साक्षियों के साक्ष्य की संपुष्टि चिकित्सा साक्ष्य से होती है और परिणामस्वरूप अभियुक्तों की आरोपित अपराधों के लिए दोषसिद्धि को कायम रखा गया था । इन विनिश्चयों और इन विनिश्चयों से प्रकटित विधि की स्थिति को ध्यान में रखते हुए हम ऊपर उल्लिखित प्रश्न पर विचार करेंगे ।

19. अब, हम अभियुक्त के विरुद्ध आरोपित अपराधों के कारित करने में अभिकथित रूप से प्रयुक्त आयुधों की बरामदगी न होने के प्रभाव, यदि कोई है, पर विचार करेंगे । इस विषय में, केवल **राकेश और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में के विनिश्चय को निर्दिष्ट करना उचित है । यह, जहां तक सुसंगत है, इस प्रकार है :–

> "किसी अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए अपराध कारित करने में प्रयुक्त आयुध की बरामदगी होना अनिवार्य नहीं है । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 घटना के विश्वसनीय और भरोसेमंद प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं और उन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से कथन किया था कि अभियुक्त-1 राकेश ने बंदूक से गोली चलाई थी और मृतक को क्षति पहुंची थी । बंदूक से पहुंची क्षति को चिकित्सा साक्ष्य तथा डा. संतोष कुमार, अभि. सा. 5 के अभिसाक्ष्य से सिद्ध और साबित किया गया है । क्षति सं. 1 बंदूक की गोली से पहुंची क्षति है । इसलिए अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के विश्वसनीय प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य को नामंजूर करना संभव नहीं है, जिन्होंने गोली चलते हुए देखी थी । इस बात का अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के इस अभिसाक्ष्य की विश्वसनीयता से कोई लेना-देना नहीं है कि अभियुक्त-1 ने बंदूक से मृतक को गोली मारी थी, विशिष्ट रूप से चूंकि इस बात की संपुष्टि शरीर में पाई गई गोली से होती है और अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 के परिसाक्ष्य से भी संपुष्टि हुई है । इसलिए केवल इस कारण कि प्राक्षेपिकी की रिपोर्ट से दर्शित

---

[1] (2021) 7 एस. सी. सी. 188.

होता है कि बरामद की गई गोली का मिलान बरामद की गई बंदूक से नहीं होता है, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के विश्वसनीय और भरोसेमंद अभिसाक्ष्य को नामंजूर करना संभव नहीं है ।"

उक्त परिस्थितियों में और **राकेश और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, आयुधों की बरामदगी न होना प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य को त्यक्त करने का आधार नहीं हो सकता है । अब, हम प्रस्तुत मामले में साक्ष्य को निर्दिष्ट करेंगे । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2, जो क्षतिग्रस्त साक्षी थे, के साक्ष्य को मात्र इस कारण कि वे मृतक के पुत्र हैं, अविश्वसनीय नहीं माना जा सकता है या अस्वीकार नहीं किया जा सकता है । इस स्थिति को अभिनिर्धारित करने के लिए किसी विनिश्चय के बारे में उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है कि मृतक का नातेदार होना उनके वृत्तांत को अविश्वसनीय मानने का कारण नहीं है क्योंकि यह स्थिति भली-भांति स्थिर है । इस मामले में, निचले न्यायालयों ने पाया था कि प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 से ऐसी कोई बात नहीं निकलवाई जा सकी थी, जो उन्हें अविश्वसनीय बना सके । वास्तव में, विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों द्वारा आयुधों से लैस होने और उनके प्रयोग के संबंध में उनके साक्ष्य की संपुष्टि प्रदर्श क-4 सहित अभि. सा. 4 के साक्ष्य से होती है । उनका यह वृत्तांत कि विधिविरुद्ध जमाव के कुछ सदस्य अन्य घातक आयुध लिए हुए थे, इसकी संपुष्टि भी प्रदर्श क-2 और क-3 सहित अभि. सा. 3 के साक्ष्य से होती है । हमने उन पहलुओं को केवल इस तथ्य पर जोर देने के लिए निर्दिष्ट किया है कि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 को निचले न्यायालयों द्वारा ठीक ही विश्वसनीय साक्षी अभिनिर्धारित किया गया है ।

20. अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य से यह प्रकट होता है कि विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य अग्न्यायुध लिए हुए थे और उन्होंने उनका प्रयोग मृतक दलीप सिंह के विरुद्ध किया था । अन्य घातक आयुधों का प्रयोग दलीप सिंह के विरुद्ध और इन साक्षियों के विरुद्ध भी किया गया था । जब तथ्य यह है कि दलीप सिंह को दो गोलियां लगी

थीं और इसके पश्चात् भी विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों द्वारा उस पर आक्रमण किया गया था, तो कैसे सामान्य उद्देश्य को दलीप सिंह की हत्या कारित करने की बजाय अन्य उद्देश्य कहा जा सकता है । एक गोली अत्यधिक निकट से चलाई गई थी, यह बात इस तथ्य से स्पष्ट है कि इससे न केवल घाव के मार्ग में की रक्त धमनियां और ऊतक फट गए थे अपितु, उर्वास्थि, जो मानव शरीर की सबसे मजबूत हड्डी है, भी टुकड़े-टुकड़े हो गई थी । यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि उस स्थान पर केवल एक बंदूक की गोली से पहुंची क्षति थी क्योंकि बंदूक की गोली का अन्य घाव बाईं जांघ के आंतरिक भाग पर था । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के अभिसाक्ष्य से यह प्रकट होता है कि दलीप सिंह बंदूक की गोली से ऐसी क्षतियां पहुंचने पर नीचे गिर गया था और जब उन्होंने उसको बचाने के लिए जाने का प्रयत्न किया तो उन पर आयुधों से आक्रमण किया गया था । इसके अतिरिक्त, दलीप सिंह, जो उस समय जमीन पर गिर गया था, पर पुन: आक्रमण किया गया था । जब किसी व्यक्ति पर, जिसे बंदूक की गोली से क्षतियां पहुंची हो और अत्यधिक रक्तस्राव हो रहा हो, पुन: आक्रमण किया जाता है और जो व्यक्ति उसके बचाव के लिए आए उन पर भी आक्रमण किया गया हो, तब ऐसी परिस्थितियों से केवल यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सामान्य उद्देश्य उस व्यक्ति को जान से मारने का था । इन तथ्यों और परिस्थितियों में, निचले न्यायालयों द्वारा मूल्यांकन किए गए साक्ष्य से प्रकटित उनके द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि विधिविरुद्ध जमाव का सामान्य उद्देश्य दलीप सिंह की हत्या कारित करना था, अनुचित नहीं कहा जा सकता है जिससे इस न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप करने की आवश्यकता हो । वास्तविकता यह है कि विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य, जिनकी संख्या दस थी, उस स्थान पर न केवल अग्न्यायुधों से लैस होकर अपितु अन्य घातक आयुधों से भी लैस होकर इकट्ठा हुए थे और जिस रीति में उन्होंने हिंसा की थी और अंततोगत्वा परिणाम से निश्चित रूप से उक्त निष्कर्ष का समर्थन होता है ।

21. इस स्थिति के संबंध में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि

आपराधिक मानव वध को हत्या बनाने के लिए वह कृत्य जिसके द्वारा मृत्यु कारित की जाती है, न केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अधीन पहले से चौथे खंडों में से किसी एक या अधिक खंड के अंतर्गत आना चाहिए अपितु वे कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के पांच अपवादों में से किसी के अंतर्गत भी नहीं आने चाहिएं । यद्यपि अपीलार्थी की दलील यह है कि धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्धि को धारा 304/149 के अधीन परिवर्तित किया जाना चाहिए, किंतु वास्तविकता यह है कि वह इसे भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के पांच अपवादों में से किसी के भीतर लाने में असफल रहा है । ऐसी स्थिति में, इन दलीलों पर विचार करने का कतई कोई प्रश्न नहीं है कि आपराधिक मानव वध या तो धारा 304 (भाग 1) या धारा 304 (भाग 2) के अंतर्गत आता है ।

22. इस मामले में उपरोक्त स्थिति होने के कारण हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि उच्च न्यायालय ने इस अपील में अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज करके और उसके विरुद्ध पारित दोषसिद्धि और दंडादेशों की पुष्टि करके न्यायोचित किया था । इस अपील में कोई गुणागुण नहीं है और इसलिए यह खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 114

झारखंड राज्य

बनाम

शैलेन्द्र कुमार राय उर्फ पांडव राय

[2022 की दांडिक अपील सं. 1441]

31 अक्तूबर, 2022

न्यायमूर्ति डा. धनंजय वाई. चंद्रचूड़ और न्यायमूर्ति हिमा कोहली

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 32(1) [सपठित दंड संहिता, 1860 की धारा 302, 341, 376 और 448] – मृत्युकालिक कथन – अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा मृतका के साथ बलात्संग किया जाना और उस पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगाया जाना – दाह क्षतियों के कारण कुछ समय के पश्चात् विपदग्रस्त की मृत्यु हो जाना – विपदग्रस्त द्वारा पुलिस के समक्ष किए गए कथन को मृत्युकालिक कथन मानकर विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा विपदग्रस्त के कथन को मृत्युकालिक कथन के रूप में ग्राह्य न होने के आधार पर अभियुक्त-प्रत्यर्थी को दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां मृतका की मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में यह निष्कर्ष निकाला गया हो कि उसकी मृत्यु उसे पहुंची दाह क्षतियों के परिणामस्वरूप रक्तविषायन (सेप्टिसेमिया) से हुई थी और मृतका द्वारा अपने कथन में स्पष्ट रूप से यह कहा गया हो कि अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा उसके साथ बलात्संग किया गया था और फिर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा दी गई थी, उसके इस कथन से धारा 32(1) की शर्तों का समाधान हो जाता है क्योंकि यह कथन मृतका की मृत्यु तथा उस संव्यवहार की परिस्थितियों से संबंधित होने के कारण जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, स्वयमेव एक सुसंगत तथ्य है और एक मृत्युकालिक कथन है, इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने के कारण उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हुए अभियुक्त-प्रत्यर्थी को

दोषसिद्ध करना न्यायोचित होगा ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 32(1) – मृत्युकालिक कथन – ग्राह्यता और साक्ष्यिक महत्व – संपुष्टि की आवश्यकता – किसी मृत्युकालिक कथन को यदि संभव हो तो आदर्शत: किसी मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जाना चाहिए, तो भी किसी मृत्युकालिक कथन को केवल इस आधार पर अग्राह्य नहीं कहा जा सकता कि ऐसा कथन किसी पुलिस कार्मिक द्वारा अभिलिखित किया गया था अपितु पुलिस द्वारा अभिलिखित किया गया ऐसा कथन ग्राह्य है या नहीं, इसका विनिश्चय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् किया जाना चाहिए और यदि मृत्युकालिक कथन अन्यथा संदेहास्पद न हो तो ऐसा कोई नियम नहीं है कि इसकी संपुष्टि चिकित्सा या अन्य साक्ष्य द्वारा किया जाना आज्ञापक हो ।

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रत्यर्थी-अभियुक्त विपदग्रस्त-मृतका के मकान में घुसा और उसने अभिकथित रूप से विपदग्रस्त को जमीन पर पटक दिया और उसके साथ बलात्संग किया तथा धमकी दी कि यदि उसने शोर मचाया तो वह उसे जान से मार देगा । जब वह सहायता के लिए चिल्लाई तब प्रत्यर्थी ने अभिकथित रूप से उस पर मिट्टी का तेल छिड़क दिया और माचिस की तिल्ली से आग लगा दी । उसके द्वारा सहायता के लिए चिल्लाने पर उसका दादा, माता और गांव का एक निवासी उसके कमरे में आए । प्रत्यर्थी अभिकथित रूप से उन्हें देखकर घटनास्थल से फरार हो गया । विपदग्रस्त का उसे पहुंची क्षतियों के लिए अस्पताल में उपचार किया गया । पुलिस थाना के थाना भारसाधक अधिकारी को घटना के संबंध में जानकारी प्राप्त हुई और वह अस्पताल गए और उसी दिन विपदग्रस्त का फर्द बयान अभिलिखित किया । विपदग्रस्त के कथन के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई और अन्वेषण आरंभ किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत अन्वेषण अधिकारी द्वारा अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 341, 376 और 448 के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया । विपदग्रस्त की बाद में मृत्यु हो गई और इसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा

302 के संदर्भ में एक अनुपूरक आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया । सेशन न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 341, 376 और 448 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । प्रत्यर्थी-अभियुक्त द्वारा झारखंड उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ मृतका के कथन को मृत्युकालिक के रूप में ग्राह्य न होने के आधार पर सेशन न्यायालय के निर्णय को अपास्त कर दिया गया और प्रत्यर्थी को दोषमुक्त कर दिया । राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – डा. आर. महतो (अभि. सा. 8) द्वारा तैयार की गई मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में कहा गया है कि विपदग्रस्त की मृत्यु का कारण रक्तविषायन (सेप्टिसीमिया) था जो विपदग्रस्त को पहुंची दाह क्षतियों के परिणामस्वरूप हुआ था । प्रतिरक्षा पक्ष ने इस निष्कर्ष की सत्यता को चुनौती देने की ईप्सा की । डा. आर. महतो से प्रतिपरीक्षा के दौरान पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा कि उसे स्पष्ट रूप से स्मरण है कि मृतका का उपचार कर रहे डाक्टर ने उसे बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था । तथापि, उसे उस अस्पताल में स्थानांतरित नहीं किया गया था । उस अनामित डाक्टर को, जिसने अनुमित रूप से मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था, सेशन न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाहियों में साक्षी के रूप में नामित नहीं किया गया था और साक्ष्य देने के लिए नहीं बुलाया गया था । प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले काउंसेल ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों में यह तथ्य था कि मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल स्थानांतरित नहीं किया गया था, एक महत्वपूर्ण परिस्थिति थी । उन्होंने तर्क दिया कि परिणामस्वरूप यह साबित नहीं किया गया था कि मृतका की मृत्यु दाह क्षतियों के कारण हुई थी । इस तर्क से ऐसा प्रतीत होता है कि यदि अनामित डाक्टर द्वारा अनुमित रूप से दिए गए परामर्श (उसे बोकारो दाह क्षति अस्पताल स्थानांतरित करने के लिए) को मान लिया गया होता तो विपदग्रस्त की मृत्यु नहीं होती । जैसा कि उच्च

न्यायालय के विनिश्चय वाले भाग में उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय ने इस तर्क को स्वीकार किया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि मृतका के कथन को एक मृत्युकालिक कथन नहीं समझा जा सकता है क्योंकि मृत्यु का कारण सिद्ध नहीं किया गया था । डा. आर. महतो के इस कथन का कि एक अन्य डाक्टर ने मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था, अवलंब यह तर्क देने के लिए लिया गया कि ऐसा निर्देश वास्तव में दिया गया था और उसकी अनदेखी की गई थी । डा. आर. महतो का परिसाक्ष्य (केवल इस सीमा तक कि उन्होंने एक अन्य डाक्टर की राय के बारे में साक्ष्य देने की ईप्सा की है, जिसने अनुमित रूप से मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था) साक्ष्य अधिनियम की धारा 60 को ध्यान में रखते हुए अग्राह्य है । यहां, इस तथ्य को कि एक अनामित डाक्टर ने मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल में रेफर किया था, अप्रत्यक्ष रूप से साबित करने की ईप्सा की गई है । मृतका के लिए सर्वोत्तम उपचार के बारे में अनामित डाक्टर की राय को डा. आर. महतो की प्रतिपरीक्षा के माध्यम से प्रकट करने की ईप्सा की गई है । ऐसा करना साक्ष्य अधिनियम की धारा 60 में के निषेध के कारण अननुज्ञेय है, जिसके निबंधनों के अनुसार कोई मौखिक साक्ष्य जो किसी राय के बारे में है, उस व्यक्ति का ही साक्ष्य होना चाहिए जो वह राय धारण करता है । अत: उसका परिसाक्ष्य (इस सीमित बिंदु के बारे में कि क्या किसी अन्य डाक्टर द्वारा विपदग्रस्त को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया गया था) अग्राह्य है और अनुश्रुत साक्ष्य की श्रेणी में आएगा । तथापि, उसकी मुख्य परीक्षा में उसका परिसाक्ष्य तथा प्रतिपरीक्षा के दौरान उसके अन्य उत्तर दूषित नहीं हो जाते हैं । उसका परिसाक्ष्य उसकी स्वयं की राय और उन आधारों के बारे में है जिन पर वह इसे धारण करता है । विपदग्रस्त की मृत्यु के कारण सहित उसके परिसाक्ष्य का शेष भाग निस्संदेह ग्राह्य है । डा. आर. महतो के परिसाक्ष्य में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मृत्यु का कारण विपदग्रस्त को पहुंचीं दाह क्षतियों से कारित रक्तविषायन है । मृतका के कथन से धारा 32 की उपधारा (1) में अधिकथित शर्तों का समाधान होता है क्योंकि यह मृत्यु के कारण तथा

उस संव्यवहार की परिस्थितियों जिसके फलस्वरूप मृत्यु हुई थी, दोनों से संबंधित है । ऐसा इसलिए है क्योंकि कथन में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रत्यर्थी ने उस पर मिट्टी का तेल छिड़का और उसे आग लगा दी । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में भी यह निष्कर्ष निकाला गया है कि मृत्यु का कारण मृतका को पहुंचीं दाह क्षतियों द्वारा कारित रक्तविषायन (सेप्टिसीमिया) है । मृतका के कथन से उपदर्शित होता है कि उसे प्रत्यर्थी द्वारा उस पर मिट्टी का तेल छिड़कने और उसे आग लगा देने के परिणामस्वरूप दाह क्षतियां पहुंची थीं । इसके अतिरिक्त, मृतका के कथन से यह भी पता चलता है कि प्रत्यर्थी ने उसे आग लगाने से पूर्व उसके साथ बलात्संग किया था – यह घटना उस संव्यवहार की परिस्थितियों का वर्णन है, जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी । अत: मृतका के कथन से धारा 32(1) में दी गई शर्तों का समाधान होता है और यह स्वयमेव एक सुसंगत तथ्य है । इसे इस अपील का न्यायनिर्णयन करने के प्रयोजन के लिए एक मृत्युकालिक कथन समझा जाएगा । (पैरा 32, 33, 34 और 35)

इस आशय का कोई नियम नहीं है कि मृत्युकालिक कथन किसी मजिस्ट्रेट के बजाय किसी पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए जाने पर अग्राह्य है । यद्यपि मृत्युकालिक कथन को, यदि संभव हो तो, आदर्शत: किसी मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जाना चाहिए, तो भी यह नहीं कहा जा सकता है कि पुलिस कार्मिक द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन केवल इसी कारण से अग्राह्य हो जाते हैं । यह मुद्दा कि क्या पुलिस द्वारा अभिलिखित किया गया मृत्युकालिक कथन ग्राह्य है या नहीं, इसका विनिश्चय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् किया जाना चाहिए । उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में यह गलत मत व्यक्त किया है कि डा. आर. के. पांडेय ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कहा था कि वह उस समय जब विपदग्रस्त का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जा रहा था, साथ वाले कमरे में एक अन्य रोगी का परीक्षण कर रहा था । प्रतिपरीक्षा के अभिलेख से यह उपदर्शित होता है कि डा. आर. के. पांडेय ने यह कहा था कि वह साथ वाली मेज पर (न कि साथ वाले कमरे में जैसा कि

उच्च न्यायालय द्वारा गलत रूप से उल्लेख किया गया है) रोगी का परीक्षण कर रहा था । उच्च न्यायालय ने इस तथ्य का यह अभिनिर्धारित करने के लिए गलत रूप से अवलंब लिया था कि विपदग्रस्त के कथन को उसका मृत्युकालिक कथन नहीं माना जा सकता है । डा. आर. के. पांडेय से उनकी प्रतिपरीक्षा के दौरान उनसे पूछे गए उत्तर से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस मृत्युकालिक कथन को इस आधार पर नामंजूर नहीं किया जा सकता कि वह एक अन्य कमरे में था जब इसे अभिलिखित किया गया था – वह स्पष्ट रूप से उसी कमरे में था और मृत्युकालिक कथन लल्लन प्रसाद द्वारा उसकी मौजूदगी में अभिलिखित किया गया था । लल्लन प्रसाद और डा. आर. के. पांडेय, दोनों ने अपनी प्रतिपरीक्षा (प्रतिपरीक्षाओं) के दौरान इस तथ्य को प्रमाणित किया है । डा. आर. के. पांडेय इस बात से भी संतुष्ट था कि मृतका कथन करने के लिए शारीरिक और मानसिक रूप से समर्थ है और इस बात को लिखित में प्रमाणित किया था । मृत्युकालिक कथन विपदग्रस्त के शब्दों में अभिलिखित किया गया था और उसे इसे पढ़कर सुनाया गया था और इसके पश्चात् उसने उस पर अपने हस्ताक्षर किए थे । इस न्यायालय के पास यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि कथन सिखाने-पढ़ाने का परिणाम था या मृतका कथन करने के लिए असमर्थ थी । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह उपदर्शित होता हो कि मृतका और प्रत्यर्थी के बीच ऐसी कोई दुश्मनी थी जिसके कारण मृतका घटनाओं का असत्य ब्योरा देगी और प्रत्यर्थी को मिथ्या रूप से फंसाएगी । अत: न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि मृत्युकालिक कथन स्वैच्छिक रूप से किया गया था और सत्य है । मृतका उस समय कथन करने के लिए मानसिक रूप से समर्थ थी जब उसने लल्लन प्रसाद को कथन किया था । मृत्युकालिक कथन से पूरी तरह से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्यर्थी ने मृतका के साथ बलात्संग किया, उस पर मिट्टी का तेल छिड़का और उसे आग लगा दी । मृत्यु का कारण रक्तविषायन (सेप्टिसीमिया) था, जो दाह क्षतियों के परिणामस्वरूप हुआ था । अत: विपदग्रस्त की मृत्यु प्रत्यर्थी द्वारा उसे कारित की गई क्षतियों का प्रत्यक्ष परिणाम था । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है जिससे प्रत्यर्थी की दोषिता के बारे में युक्तियुक्त संदेह उद्भूत होता हो । (पैरा 41, 45, 46, 48 और 49)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2017]	(2017) 1 एस. सी. सी. 529 : **रमेश** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	53
[2013]	(2013) 14 एस. सी. सी. 643 : **लिल्लू** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	61
[2012]	(2012) 12 एस. सी. सी. 120 : **सुरिन्द्र कुमार** बनाम **पंजाब राज्य** ;	44
[2006]	(2006) 1 एस. सी. सी. 283 : **विष्णु** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	51
[2005]	(2005) 9 एस. सी. सी. 94 : **पंजाब राज्य** बनाम **अजायब सिंह** ;	59
[2003]	(2003) 2 एस. सी. सी. 473 : **कर्नाटक राज्य** बनाम **शरीफ** ;	41
[1998]	(1998) 4 एस. सी. सी. 517 : **राम बिहारी यादव** बनाम **बिहार राज्य** ;	43
[1997]	(1997) 1 एस. सी. सी. 481 : **भागीरथ** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	41
[1997]	(1997) 4 एस. सी. सी. 192 : **सतबीर** बनाम **सूरत सिंह** ;	59
[1985]	(1985) 1 एस. सी. सी. 552 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **राम सागर यादव** ;	52
[1964]	ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 900 : **मोती सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	28
[1958]	ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 22 : **खुशाल राव** बनाम **बंबई राज्य** ।	42

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 1441.

2006 की दांडिक अपील (खंड न्यायपीठ) सं. 1533 में झारखंड उच्च न्यायालय, रांची के तारीख 27 जनवरी, 2018 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री विष्णु शर्मा, (सुश्री) मधुस्मिता बोरा, पवन किशोर सिंह, दीपांकर सिंह (सुश्री) अनुपमा शर्मा और अभिषेक वर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री बृज किशोर शर्मा, विक्रम और अभिषेक यादव

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति डा. धनंजय वाई. चंद्रचूड़ ने दिया ।

न्या. चंद्रचूड़ – यह अपील झारखंड उच्च न्यायालय के तारीख 27 जनवरी, 2018 के निर्णय से उद्भूत हुई है । उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी द्वारा की गई अपील मंजूर की और अपर सेशन न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय-II, देवघर द्वारा क्रमश: तारीख 10 अक्तूबर, 2006 और 11 अक्तूबर, 2006 को पारित की गई दोषसिद्धि और इसके परिणामस्वरूप दंडादेश को अपास्त कर दिया । सेशन न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में "भारतीय दंड संहिता") की धारा 302, 376, 341 और 448 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया था और उसे आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया था ।

क. पृष्ठभूमि

2. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि प्रत्यर्थी तारीख 7 नवंबर, 2014 की दोपहर को नारंगी गांव में विपदग्रस्त और मृतका के मकान में घुसा । यह अभिकथन किया गया है कि उसने विपदग्रस्त को जमीन पर पटक दिया और उसके साथ बलात्संग किया तथा धमकी दी कि यदि उसने शोर मचाया तो वह उसे जान से मार देगा । जब वह सहायता के लिए चिल्लाई तब प्रत्यर्थी ने अभिकथित रूप से उस पर मिट्टी का तेल छिड़क दिया और माचिस की तिल्ली से आग लगा दी । उसके द्वारा सहायता के लिए चिल्लाने पर उसका दादा, माता और गांव का एक

निवासी उसके कमरे में आए । प्रत्यर्थी अभिकथित रूप से उन्हें देखकर घटनास्थल से फरार हो गया ।

3. विपदग्रस्त के परिवार (उक्त ग्रामीण के साथ) ने आग बुझाई और उसे सदर अस्पताल, देवघर ले गए, जहां उसे भर्ती किया गया और उसे पहुंची क्षतियों के लिए उपचार किया गया । पुलिस थाना सारवां के थाना भारसाधक अधिकारी को घटना के संबंध में जानकारी प्राप्त हुई और वह देवघर गए, जहां उन्होंने उसी दिन (अर्थात् 7 नवंबर, 2004) को विपदग्रस्त का फर्द बयान अभिलिखित किया । उसने अपने कथन में घटना का वर्णन किया जैसा कि ऊपर पैरा 2 में वर्णित किया गया है ।

4. विपदग्रस्त के कथन के आधार पर पुलिस थाना सारवां में 2004 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 163 रजिस्ट्रीकृत की गई और अन्वेषण आरंभ किया गया । लल्लन प्रसाद अन्वेषक अधिकारी था और बाद में सुरेश यादव ने उससे अन्वेषण का कार्य संभाला । अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत अन्वेषण अधिकारी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 341, 376 और 448 के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र प्रस्तुत किया । विपदग्रस्त की तारीख 14 दिसंबर, 2004 को मृत्यु हो गई और इसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के संदर्भ में एक अनुपूरक आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया ।

5. प्रत्यर्थी ने अपनी दोषिता से इनकार किया ।

6. विचारण के दौरान, अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन के समर्थन में बारह साक्षियों की परीक्षा कराई और प्रतिरक्षा ने तीन साक्षियों की परीक्षा कराई । मुख्य परीक्षा और प्रतिपरीक्षा में उनके परिसाक्ष्यों का सिंहावलोकन तथा साक्षियों के रूप में उनकी प्रास्थिति निम्नानुसार है :–

i. अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा कराए गए साक्षियों के परिसाक्ष्यों का सिंहावलोकन

क. **लल्लन प्रसाद, अभि. सा. 11**

7. पुलिस थाना, सारवां के थाना भारसाधक अधिकारी, लल्लन

प्रसाद ने अभिसाक्ष्य दिया कि उसे तारीख 7 नवंबर, 2004 को घटना के संबंध में जानकारी प्राप्त हुई, जिसके उपरांत वह देवघर गया । उसने उसी दिन सदर अस्पताल, देवघर में स्वयं अपने हस्तलेख में विपदग्रस्त का कथन अभिलिखित किया और उसके कथन की अंतर्वस्तुओं को उसे पढ़कर सुनाया । विपदग्रस्त ने उसकी मौजूदगी में कथन पर अपने हस्ताक्षर किए और उसने भी उस कथन पर हस्ताक्षर किए । लल्लन प्रसाद की मौजूदगी में विपदग्रस्त के दादा और माता तथा सह-ग्रामवासी ने भी कथन पर अपने हस्ताक्षर किए और डा. आर. के. पांडेय ने प्रमाणित किया कि विपदग्रस्त कथन करने के लिए समर्थ है और कथन पर अपने हस्ताक्षर किए ।

8. उसके पश्चात्, उसने डा. आर. के. पांडेय और अन्य साक्षियों के कथन अभिलिखित किए । एक ज्येष्ठ नर्स रेखा दास गुप्ता ने विपदग्रस्त के अंतर्वस्त्र सुपुर्द किए ; लल्लन प्रसाद ने उन्हें अभिरक्षा में लिया और उनका अभिलेखन करने के लिए एक अभिग्रहण सूची तैयार की ।

9. अन्वेषण अधिकारी ने कथन किया कि उसने घटनास्थल का परीक्षण किया था और जले हुए कपड़े, एक खाली बोतल जो मिट्टी के तेल की प्रतीत हो रही थी और बरामदे में धूल पाई थी, जहां कथित रूप से अपराध घटित हुआ था । उसने पाया कि दीवार और फर्श पर जलने के चिह्न थे । उसने जले हुए कपड़े और खाली बोतल अभिगृहीत की और एक अभिग्रहण सूची तैयार की । उसने विभिन्न अन्य साक्षियों के कथन भी अभिलिखित किए ।

10. प्रतिपरीक्षा के दौरान लल्लन प्रसाद से पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में उसने कथन किया कि उसने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, देवघर को या तो प्रत्यर्थी या मृतका के कथन अभिलिखित करने के लिए अध्यपेक्षा नहीं की थी । इसके अतिरिक्त, उसने उस समय पर ड्यूटी पर डाक्टर से या सिविल सर्जन से विपदग्रस्त का कथन अभिलिखित करने के लिए अनुरोध नहीं किया था । उसने कथन किया कि उसने स्वयं उसका कथन अभिलिखित किया था क्योंकि उसका स्वास्थ्य तेजी से बिगड़ रहा था ।

11. उसने कथन किया कि उसे यह स्मरण नहीं है कि क्या विपदग्रस्त को गहन चिकित्सा इकाई में भर्ती किया गया था या सामान्य वार्ड में तथा उसी वार्ड में भर्ती रोगियों की संख्या का भी स्मरण नहीं है । अन्वेषण अधिकारी ने साक्ष्य दिया कि उसे माचिस, मिट्टी के तेल का दीपक, लालटेन या कोई अन्य सामग्री भी नहीं पाई थी जिससे घटनास्थल पर आग लगाई जा सके । उसने कथन किया कि उसने उस खाली बोतल को प्रयोगशाला नहीं भेजा था जो उसने घटनास्थल से अभिगृहीत की थी क्योंकि उसके द्वारा इसे अभिगृहीत करने के कुछ समय पश्चात् उसका स्थानांतरण कर दिया गया था ।

ख. **डा. आर. के. पांडेय, अभि. सा. 6**

12. डा. आर. के. पांडेय, सदर अस्पताल में चिकित्सा अधिकारी ने साक्ष्य दिया कि उसने 7 नवंबर, 2004 को विपदग्रस्त का परीक्षण किया था जब उसे पहुंची दाह क्षतियों के उपचार के लिए अस्पताल लाया गया था । उन्होंने प्रमाणित किया कि मृतका कथन करने के लिए मानसिक और शारीरिक रूप से समर्थ थी । जिस समय मृतका ने लल्लन प्रसाद को अपना कथन किया था उस समय डा. आर. के. पांडेय मृतका के साथ वाली मेज पर किसी रोगी का परीक्षण कर रहे थे ।

ग. **डा. मीनू मुखर्जी, अभि. सा. 9**

13. डा. मीनू मुखर्जी, सदर अस्पताल में एक चिकित्सा अधिकारी ने अभिसाक्ष्य दिया कि वह विपदग्रस्त का परीक्षण करने के लिए गठित चिकित्सा बोर्ड की एक सदस्य थी, जब उसे पहुंची क्षतियों का उपचार चल रहा था । इस साक्षी ने साक्ष्य दिया कि चिकित्सा बोर्ड ने तारीख 7 नवंबर, 2004 को मृतका का परीक्षण किया था और निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले थे :–

(क) मृतका के जघन क्षेत्र, स्तनों और उसकी खोपड़ी के अग्र क्षेत्र में जलने के घाव थे ;

(ख) मृतका के जघन क्षेत्र में बाह्य बाल नहीं पाए गए ;

(ग) योनि पर धब्बों की विकृतिजन्य रिपोर्ट से प्रकट हुआ कि

मृतका के जघन्य क्षेत्र में कोई शुक्राणु (मृत या जीवित) नहीं था ।

(घ) योनि के परीक्षण से पता चला कि दो अंगुलियां आसानी से प्रविष्ट की जा सकती थी ; और

(ङ) मृतका के 14 ऊपरी और निचले दांत थे, जो अधूरे थे । जघन सहवर्धन 40 प्रतिशत था । उसकी कलाई के एक्स-रे से उपदर्शित हुआ कि उसकी आयु 17 वर्ष से कम है ।

14. चिकित्सा बोर्ड ने अपने परीक्षण और निष्कर्षों के आधार पर राय दी कि :–

(क) मृतका की आयु लगभग 16 वर्ष थी ; और

(ख) मैथुन की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता, हालांकि इस संबंध में कोई निश्चित राय नहीं दी जा सकती ।

चिकित्सा बोर्ड के निष्कर्षों तथा उसकी राय को डा. मीनू मुखर्जी द्वारा तैयार की गई एक रिपोर्ट में अभिलिखित किया गया था । चिकित्सा बोर्ड के अन्य सदस्यों ने इस रिपोर्ट पर अपने हस्ताक्षर किए ।

15. प्रतिपरीक्षा के दौरान डा. मीनू मुखर्जी से पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में उसने कहा कि गतिशील शुक्राणु मैथुन के 72 घंटे के पश्चात् तक और गतिहीन शुक्राणु मैथुन के पश्चात् 7 से 10 दिनों तक देखे जा सकते हैं । उन्होंने यह भी कहा कि हो सकता है मृतका ने अभिकथित अपराध की तारीख से पूर्व मैथुन किया होगा और उसकी योनि में दो अंगुलियों का प्रवेश होने का अर्थ है कि उसे मैथुन करने की आदत थी । उसने प्रतिरक्षा पक्ष के इस सुझाव का भी खंडन किया कि उसने ऐसी चिकित्सा रिपोर्ट इसलिए तैयार की थी क्योंकि उच्च अधिकारियों ने ऐसा करने के लिए उस पर दबाव डाला था ।

घ. **डा. आर. महतो, अभि. सा. 8**

16. डा. आर. महतो, सदर अस्पताल के उप अधीक्षक ने यह साक्ष्य दिया कि उसने तारीख 14 दिसंबर, 2004 को मृतका के शव की मरणोत्तर परीक्षा की थी और निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले थे :–

(क) शव के विभिन्न स्थानों पर फफोले थे, उसके सिर, चेहरे और छाती पर पपड़ियां थीं । ये क्षतियां गंभीर रूप से जलने के कारण हुई थीं और लगभग छह सप्ताह पहले की थीं ;

(ख) विभिन्न विच्छेदनों से पता चला कि खोपड़ी अविकल थी, मस्तिष्क पदार्थ पीला पड़ गया था, फेफड़े पीले थे, हृदय के दाहिने कक्ष में रक्त था और बायां कक्ष खाली था, उदर और मूत्राशय खाली थे । यकृत, प्लीहा और गुर्दे संकुलित थे ।

17. अपने निष्कर्षों के आधार पर डा. आर. महतो ने यह निष्कर्ष निकाला कि विपदग्रस्त की मृत्यु रक्तविषायन के कारण हुई थी, जो मृतका को पहुंची गंभीर दाह क्षतियों का परिणाम था । उन्होंने अपने निष्कर्षों और राय को मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में अभिलिखित किया था ।

18. प्रतिपरीक्षा के दौरान उससे पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में उन्होंने कहा कि रक्तविषायन से ग्रस्त लोगों की मानसिक स्थिति में बदलाव आ सकता है जिसके कारण वे चिड़चिड़े हो सकते हैं और कोई प्रश्न पूछने पर उत्तर नहीं भी दे सकते हैं । उन्होंने यह भी कहा कि मृतका का उपचार कर रहे डाक्टर ने उसे बोकारो दाह अस्पताल रेफर किया था ।

ङ. **सुरेश यादव, अभि. सा. 12**

19. सुरेश यादव, पुलिस थाना, सारवां के पुलिस अधिकारी ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसने लल्लन प्रसाद से मामले का अन्वेषण तारीख 18 नवंबर, 2004 को संभाला था । उसने भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 341, 376 और 448 के अधीन अपराधों के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया । जब उसे पता चला कि विपदग्रस्त की तारीख 14 दिसंबर, 2004 को मृत्यु हो गई है, तो वह सदर अस्पताल गया और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 के अधीन एक मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की । उसके पश्चात्, उसने मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट प्राप्त की और प्रत्यर्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के प्रति निर्देश करते हुए एक अनुपूरक आरोप पत्र प्रस्तुत किया ।

च. **रेखा दास गुप्ता, अभि. सा. 7**

20. रेखा दास गुप्ता, सदर अस्पताल में नर्स लल्लन प्रसाद द्वारा तैयार की गई अभिग्रहण सूची की साक्षी थी जब मृतका के अंतर्वस्त्र अभिगृहीत किए गए थे ।

छ. **पक्षद्रोही साक्षी**

21. निम्नलिखित साक्षियों ने आरंभ में अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया था किंतु बाद में पक्षद्रोही घोषित किए गए थे :

(क) पार्वती देवी, अभि. सा. 1 (मृतका की माता) ;

(ख) बिभूति भूषण रे, अभि. सा. 2 (मृतका का दादा) ;

(ग) मृत्युंजय रे, अभि. सा. 3 ;

(घ) संजय कुमार, अभि. सा. 4 ;

(ङ) सुनील कुमार रे, अभि. सा. 5 ; और

(च) बाल कृष्ण रे, अभि. सा. 10

ii. प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा परीक्षा कराए गए साक्षियों के परिसाक्ष्यों का सिंहावलोकन

क. **धीरेन्द्र राय, प्रति. सा. 1**

22. धीरेन्द्र राय, नारंगी गांव के निवासी ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि प्रत्यर्थी के विरुद्ध एक मिथ्या मामला संस्थित किया गया था और काशी राय और प्रत्यर्थी के बीच कतिपय भूमि की सिंचाई को लेकर अनबन थी । उसने यह साक्ष्य दिया कि वह मृतका के मकान में घुसा था और देखा कि वह जल रही थी किंतु उसने आग बुझाने का प्रयत्न नहीं किया था । उसके अनुसार, उस समय मृतका के परिवार का कोई सदस्य मौजूद नहीं था ।

23. प्रतिपरीक्षा के दौरान उससे पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में उसने कहा कि उसने उन पुलिस कार्मिकों को कोई कथन नहीं किया था जो अपराध का अन्वेषण करने के लिए गांव में गए थे ।

ख. **दशरथ तिवारी, प्रति. सा. 2**

24. दशरथ तिवारी, नारंगी गांव के निवासी ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि उसने मृतका को उसे दाह क्षतियां पहुंचने के पश्चात् देखा था और वह बोलने की स्थिति में नहीं थी ।

ग. **बालमुकंद राय, प्रति. सा. 3**

25. बालमुकंद राय, नारंगी गांव के निवासी ने यह साक्ष्य दिया कि मृतका को जब वह खाना पका रही थी, एक दुर्घटना के परिणामस्वरूप दाह क्षतियां पहुंची थीं ।

iii. सेशन न्यायालय का विनिश्चय

26. सेशन न्यायालय ने तारीख 10 अक्तूबर, 2006 के अपने निर्णय द्वारा प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 341, 376 और 448 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया । सेशन न्यायालय ने तारीख 11 अक्तूबर, 2006 के अपने आदेश द्वारा प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए कठोर आजीवन कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दस वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश दिया । इन दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया गया था । भारतीय दंड संहिता की धारा 341 और 448 के अधीन किए गए दंडनीय अपराधों के लिए पृथक् दंडादेश देने की आवश्यकता नहीं समझी गई ।

27. सेशन न्यायालय द्वारा की गई दोषसिद्धि अभिलेख पर के साक्ष्य का उसके द्वारा किए गए मूल्यांकन तथा विधि की स्थिति के आधार पर निम्नलिखित निबंधनों के अनुसार थी :–

(क) प्रतिरक्षा पक्ष के इस प्रकथन को नामंजूर कर दिया गया था कि मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने के समय पर कथनकर्ता/मृतका की मानसिक समर्थता के बारे में कोई प्रमाणपत्र नहीं था क्योंकि डा. आर. के. पांडेय ने यह प्रमाणित किया था कि मृतका कथन करने के लिए मानसिक रूप से समर्थ है ;

(ख) प्रतिरक्षा पक्ष के इस तर्क को स्वीकार नहीं किया गया था कि मृतका के परिवार के सदस्यों को पक्षद्रोही घोषित किया जाना अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक था क्योंकि अभियोजन का यह पक्षकथन नहीं था कि पक्षद्रोही साक्षी शिकायत की गई घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी थे । इसकी बजाय, पक्षद्रोही साक्षियों की परीक्षा की ईप्सा यह साबित करने के लिए की गई थी कि मृतका ने अपने परिवार के सदस्यों को बताया था कि अभियुक्त ने उसके साथ बलात्संग किया था और उसे आग लगा दी थी । सेशन न्यायालय ने यह उल्लेख किया कि पक्षद्रोही साक्षियों को रिश्वत देकर अथवा उनके जान-माल की धमकी देकर अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य न देने के लिए राजी किया जा सकता है । केवल यह तथ्य अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक साबित नहीं होता है ;

(ग) किसी पुलिस अधिकारी के द्वारा कोई मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने पर कोई वर्जन नहीं है ।

(घ) अभि. सा. 11 का यह परिसाक्ष्य कि डा. आर. के. पांडेय (अभि. सा. 6) की बजाय डा. बी. के. पांडेय ने प्रमाणित किया था कि मृतका मानसिक और शारीरिक रूप से समर्थ थी, यह एक टंकण संबंधी त्रुटि थी । अत: प्रतिरक्षा पक्ष के इस सुझाव को नामंजूर कर दिया गया था कि बी. के. पांडेय नामक डाक्टर सदर अस्पताल में ड्यूटी पर था और उसने यह प्रमाणित करने के लिए इनकार कर दिया था कि मृतका कथन करने के लिए शारीरिक और मानसिक रूप से समर्थ है ;

(ङ) डा. आर. के. पांडेय के इस परिसाक्ष्य से कि मृतका गहन पीड़ा में थी, यह निष्कर्ष नहीं निकलता है कि वह अन्वेषण अधिकारी को कथन करते समय पूरी तरह होश में नहीं थी ;

(च) डा. मीनू मुखर्जी के इस परिसाक्ष्य से कि उसे बलात्संग का

कोई चिह्न नहीं पाया था, निश्चायक रूप से इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता है कि प्रत्यर्थी ने मृतका के साथ बलात्संग किया था या नहीं । चिकित्सा अधिकारियों की राय से तथ्य संबंधी साक्षियों का महत्व कम नहीं हो जाता ; और

(छ) इस तथ्य से कि घटनास्थल से अभिगृहीत की गई बोतल रासायनिक विश्लेषण के लिए नहीं भेजी गई थी, यह निष्कर्ष नहीं निकलता है कि प्रत्यर्थी ने मृतका पर मिट्टी का तेल नहीं छिड़का था ।

सेशन न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि मृत्युकालिक कथन स्वैच्छिक, विश्वसनीय था और इसमें किसी तरह की कोई कमी नहीं थी । इसलिए यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित कर दिया है और प्रत्यर्थी को मृत्युकालिक कथन के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 341, 376 और 448 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया ।

iv. अपील में उच्च न्यायालय का निर्णय

28. प्रत्यर्थी ने झारखंड उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने तारीख 27 जनवरी, 2018 के अपने निर्णय द्वारा निम्नलिखित कारणों से सेशन न्यायालय के निर्णय को अपास्त कर दिया और प्रत्यर्थी को दोषमुक्त कर दिया :–

(क) मृतका के परिवार के सदस्यों को पक्षद्रोही घोषित किया गया था ;

(ख) डा. आर. के. पांडेय ने अपनी मुख्य परीक्षा में कहा था कि मृत्युकालिक कथन उसकी मौजूदगी में अभिलिखित किया गया था । तथापि, प्रतिपरीक्षा के दौरान अपनी बात का खंडन करते हुए कहा कि वह उस कमरे से सटे कमरे में एक अन्य रोगी को देख रहा था जिसमें मृतका का उपचार किया जा रहा था । अत: मृत्युकालिक कथन उसकी मौजूदगी में अभिलिखित नहीं किया गया था ;

(ग) प्रतिपरीक्षा के दौरान उससे पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में डा. आर. महतो ने कहा कि विपदग्रस्त के परिवार के सदस्य को परामर्श दिया गया था कि विपदग्रस्त को बेहतर उपचार के लिए बोकारो दाह-क्षति अस्पताल ले जाना चाहिए किंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया ;

(घ) **मोती सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में के विनिश्चय के कारण मृतका द्वारा किया गया कथन मृत्युकालिक कथन के रूप में ग्राह्य नहीं है ; और

(ङ) डा. मीनू मुखर्जी (अभि. सा. 9) ने जब विपदग्रस्त का परीक्षण किया था तो उसने मैथुन का कोई चिह्न नहीं पाया था ।

इन कारणों से, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष प्रत्यर्थी के विरुद्ध आरोपों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है । अपीलार्थी ने संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन इस न्यायालय की अधिकारिता का अवलंब लिया है और उच्च न्यायालय के विनिश्चय को चुनौती दी है । इन कार्यवाहियों में तारीख 2 जनवरी, 2019 को नोटिस जारी किया गया था ।

ख. विवाद्यक

29. पक्षकारों की ओर से दी गई दलीलों के आधार पर अवधारण के लिए दो प्रश्न उद्भूत होते हैं :–

(क) क्या मृतका का कथन भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32(1) के अधीन सुसंगत है ; और

(ख) क्या अभियोजन पक्ष ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध आरोपों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है ।

ग. दलीलें

30. श्री विष्णु शर्मा ने अपीलार्थी की ओर से बहस की । उनकी

[1] ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 900.

दलीलें थीं :–

(क) उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का सही ढंग से मूल्यांकन नहीं किया था । डा. आर. के. पांडेय मृतका के साथ वाली मेज पर रोगी को देख रहे थे न कि उस कमरे के साथ वाले कमरे में रोगी को देख रहे थे जिसमें मृतका भर्ती थी ; और

(ख) मृतका की मरणोत्तर परीक्षा मृत्यु के 12 घंटे के भीतर की गई थी । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में निष्कर्ष निकाला गया था कि मृत्यु का कारण मृतका को पहुंचीं दाह क्षतियों की वजह से हुआ रक्तविषायन था ।

31. अपीलार्थी की ओर से दी गई दलीलों का प्रत्यर्थी द्वारा विरोध किया गया, जिसके काउंसेल श्री बृज किशोर मिश्रा ने निम्नलिखित दलीलें दीं :–

(क) यद्यपि मृत्युकालिक कथन से उपदर्शित होता है कि प्रत्यर्थी ने मृतका के साथ बलात्संग किया था, किंतु चिकित्सा बोर्ड की रिपोर्ट में कहा गया है कि इस संबंध में कोई निश्चित राय नहीं दी जा सकती । यह दर्शित करने के लिए कि प्रत्यर्थी ने मृतका के साथ बलात्संग किया था, मृत्युकालिक कथन के अलावा कोई साक्ष्य नहीं है ; और

(ख) विपदग्रस्त की मृत्यु शिकायत की गई घटना घटने के लगभग एक माह पश्चात् हुई थी । अत: मृतका द्वारा अन्वेषण अधिकारी को किया गया कथन एक मृत्युकालिक कथन नहीं है ।

घ. विश्लेषण

i. मृतका का कथन भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32(1) के अधीन सुसंगत है

क. **विपदग्रस्त की मृत्यु उसे पहुंचीं दाह क्षतियों के कारण हुई थी**

32. डा. आर. महतो (अभि. सा. 8) द्वारा तैयार की गई मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में कहा गया है कि विपदग्रस्त की मृत्यु का कारण

रक्तविषायन (सेप्टिसीमिया) था जो विपदग्रस्त को पहुंचीं दाह क्षतियों के परिणामस्वरूप हुआ था । प्रतिरक्षा पक्ष ने इस निष्कर्ष की सत्यता को चुनौती देने की ईप्सा की ।

33. डा. आर. महतो से प्रतिपरीक्षा के दौरान पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा कि उसे स्पष्ट रूप से स्मरण है कि मृतका का उपचार कर रहे डाक्टर ने उसे बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था । तथापि, उसे उस अस्पताल में स्थानांतरित नहीं किया गया था । उस अनामित डाक्टर को, जिसने अनुमित रूप से मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था, सेशन न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाहियों में साक्षी के रूप में नामित नहीं किया गया था और साक्ष्य देने के लिए नहीं बुलाया गया था । प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले काउंसेल ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों में यह तथ्य था कि मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल स्थानांतरित नहीं किया गया था, एक महत्वपूर्ण परिस्थिति थी । उन्होंने तर्क दिया कि परिणामस्वरूप यह साबित नहीं किया गया था कि मृतका की मृत्यु दाह क्षतियों के कारण हुई थी । इस तर्क से ऐसा प्रतीत होता है कि यदि अनामित डाक्टर द्वारा अनुमित रूप से दिए गए परामर्श (उसे बोकारो दाह क्षति अस्पताल स्थानांतरित करने के लिए) को मान लिया गया होता तो विपदग्रस्त की मृत्यु नहीं होती । जैसा कि उच्च न्यायालय के विनिश्चय वाले भाग में उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय ने इस तर्क को स्वीकार किया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि मृतका के कथन को एक मृत्युकालिक कथन नहीं समझा जा सकता है क्योंकि मृत्यु का कारण सिद्ध नहीं किया गया था ।

34. डा. आर. महतो के इस कथन का कि एक अन्य डाक्टर ने मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था, अवलंब यह तर्क देने के लिए लिया गया है कि ऐसा निर्देश वास्तव में दिया गया था और उसकी अनदेखी की गई थी । प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से काउंसेल ने डाक्टर आर. महतो के परिसाक्ष्य का अवलंब यह सिद्ध करने के लिए लेने की ईप्सा की गई कि :–

(क) एक अनामिक डाक्टर ने मृतका का परीक्षण किया था ;

(ख) इस डाक्टर ने यह राय दी थी कि मृतका का उपचार बोकारो दाह क्षति अस्पताल में किया जाना चाहिए ;

(ग) इस डाक्टर ने मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था ;

(घ) मृतका और उसके परिवार में इस परामर्श की अनदेखी की थी ; और

(ङ) यदि विपदग्रस्त का उपचार सदर अस्पताल की बजाय बोकारो दाह क्षति अस्पताल में किया गया होता तो उसकी मृत्यु नहीं हुई होती ।

डा. आर. महतो का परिसाक्ष्य (केवल इस सीमा तक कि उन्होंने एक अन्य डाक्टर की राय के बारे में साक्ष्य देने की ईप्सा की है, जिसने अनुमित रूप से मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया था) साक्ष्य अधिनियम की धारा 60 को ध्यान में रखते हुए अग्राह्य है । धारा 60 में अनुबंधित है कि मौखिक साक्ष्य प्रत्यक्ष होना चाहिए :–

"**मौखिक साक्ष्य प्रत्यक्ष होना चाहिए** – मौखिक साक्ष्य समस्त अवस्थाओं में चाहे वे कैसी भी हों, प्रत्यक्ष ही होगा, अर्थात् –

यदि वह किसी देखे जा सकने वाले तथ्य के बारे में है, तो वह ऐसे साक्षी का ही साक्ष्य होगा जो कहता है कि उसने उसे देखा ;

यदि वह किसी सुने जा सकने वाले तथ्य के बारे में है, तो वह ऐसे साक्षी का ही साक्ष्य होगा जो कहता है कि उसने उसे सुना ;

यदि वह किसी ऐसे तथ्य के बारे में है जिसका किसी अन्य इंद्रिय द्वारा या किसी अन्य रीति से बोध हो सकता था, तो वह ऐसे साक्षी का ही साक्ष्य होगा जो कहता है कि उसने उसका बोध इंद्रिय द्वारा या उस रीति से किया ;

यदि वह किसी राय के, या उन आधारों के, जिन पर वह राय धारित है, बारे में है, तो वह उस व्यक्ति का ही साक्ष्य

होगा जो वह राय उन आधारों पर धारण करता है :

परंतु विशेषज्ञों की राय, जो सामान्यत: विक्रय के लिए प्रस्थापित की जाने वाली किसी पुस्तक में अभिव्यक्त है, और वे आधार, जिन पर ऐसी राय धारित है, यदि रचयिता मर गया है, या वह मिल नहीं सकता है या वह साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है या उसे इतने विलंब या व्यय के बिना जितना न्यायालय अयुक्तियुक्त समझता है, साक्षी के रूप में बुलाया नहीं जा सकता हो, ऐसी पुस्तकों को पेश करके साबित किए जा सकेंगे :

परंतु यह भी कि यदि मौखिक साक्ष्य दस्तावेज से भिन्न किसी भौतिक चीज के अस्तित्व या दशा के बारे में है, तो न्यायालय यदि वह ठीक समझे, ऐसी भौतिक चीज का अपने निरीक्षणार्थ पेश किया जाना अपेक्षित कर सकेगा ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

35. यहां, इस तथ्य को कि एक अनामित डाक्टर ने मृतका को बोकारो दाह क्षति अस्पताल में रेफर किया था, अप्रत्यक्ष रूप से साबित करने की ईप्सा की गई है । मृतका के लिए सर्वोत्तम उपचार के बारे में अनामित डाक्टर की राय को डा. आर. महतो की प्रतिपरीक्षा के माध्यम से प्रकट करने की ईप्सा की गई है । ऐसा करना साक्ष्य अधिनियम की धारा 60 में के निषेध के कारण अननुज्ञेय है, जिसके निबंधनों के अनुसार कोई मौखिक साक्ष्य जो किसी राय के बारे में है, उस व्यक्ति का ही साक्ष्य होना चाहिए जो वह राय धारण करता है । अत: उसका परिसाक्ष्य (इस सीमित बिंदु के बारे में कि क्या किसी अन्य डाक्टर द्वारा विपदग्रस्त को बोकारो दाह क्षति अस्पताल रेफर किया गया था) अग्राह्य है और अनुश्रुत साक्ष्य की श्रेणी में आएगा । तथापि, उसकी मुख्य परीक्षा में उसका परिसाक्ष्य तथा प्रतिपरीक्षा के दौरान उसके अन्य उत्तर दूषित नहीं हो जाते हैं । उसका परिसाक्ष्य उसकी स्वयं की राय और उन आधारों के बारे में है जिन पर वह इसे धारण करता है । विपदग्रस्त की मृत्यु के कारण सहित उसके परिसाक्ष्य का शेष भाग

निस्संदेह ग्राह्य है । डा. आर. महतो के परिसाक्ष्य में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मृत्यु का कारण विपदग्रस्त को पहुंचीं दाह क्षतियों से कारित रक्तविषायन है ।

36. उच्च न्यायालय ने **मोती सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए लिया था कि विपदग्रस्त का कथन मृत्युकालिक कथन के रूप में अग्राह्य था । उस मामले में, अभियुक्त ने अभिकथित रूप से मृतक को गोली मार दी थी । विपदग्रस्त को अस्पताल में भर्ती कराया गया, उसकी क्षतियों के लिए उपचार किया गया और उसके पश्चात् छुट्टी दे दी गई थी । कुछ सप्ताह के पश्चात् बंदूक की गोली से पहुंचें घावों के कारण उसकी मृत्यु हो गई और मरणोत्तर परीक्षा करने से पूर्व ही उसका दाह-संस्कार कर दिया गया था । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि विपदग्रस्त की मृत्यु के कारण के बारे में अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं है । परिणामत:, उसके कथन को साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन उसकी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया नहीं माना गया था, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी । **मोती सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले का उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया अवलंब भ्रामक है क्योंकि प्रस्तुत मामले में मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से सिद्ध होता है कि विपदग्रस्त की मृत्यु उसे पहुंचीं दाह क्षतियों से कारित रक्तविषायन के परिणामस्वरूप हुई थी । अत: प्रस्तुत मामले में विपदग्रस्त का कथन वास्तव में ऐसा कथन है जो उसकी मृत्यु के कारण के बारे में और उन परिस्थितियों के संबंध में सुसंगत है जिनके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी, जिसे इस निर्णय के पश्चात्वर्ती भाग में विस्तार से बताया गया है ।

ख. मृतका का कथन उसकी मृत्यु के कारण से और उस संव्यवहार की परिस्थितियों से संबंधित है जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी

37. साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 में उपबंधित है कि कतिपय दशाओं में उन व्यक्तियों द्वारा किए गए कथन जो साक्षियों के रूप में

बुलाए नहीं जा सकते (और इसलिए प्रत्यक्ष साक्ष्य देने में असमर्थ हैं) सुसंगत हैं । धारा 32 के उप खंड (1) के अधीन मृत्युकालिक कथनों को सुसंगत बनाया गया है :–

> "वे दशाएं जिनमें उस व्यक्ति द्वारा सुसंगत तथ्य का किया गया कथन सुसंगत है, जो मर गया है या मिल नहीं सकता, इत्यादि – सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे, जो मर गया है, या मिल नहीं सकता है या जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है या जिसकी हाजिरी इतने विलंब या व्यय के लिए उपाप्त नहीं की जा सकती, जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को अयुक्तियुक्त प्रतीत होता है, निम्नलिखित दशाओं में स्वयमेव सुसंगत हैं –
>
> (1) जबकि वह मृत्यु के कारण से संबंधित है – जबकि वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, तब उन मामलों में, जिनमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो ।
>
> ऐसे कथन सुसंगत हैं चाहे उस व्यक्ति को, जिसने उन्हें किया है, उस समय जब वे किए गए थे, मृत्यु की प्रत्याशंका थी या नहीं और चाहे उस कार्यवाही की, जिसमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत होता है, प्रकृति कैसी ही क्यों न हो ।
>
> ..... ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

38. धारा 32 के निबंधनों के अनुसार, सुसंगत तथ्यों के कथन (लिखित या मौखिक) स्वयमेव सुसंगत तथ्य होते हैं जब वे निम्नलिखित प्रवर्ग के लोगों द्वारा किए जाते हैं :–

(क) कोई व्यक्ति जो मर गया है ;

(ख) कोई व्यक्ति जो मिल नहीं सकता है ;

(ग) कोई व्यक्ति जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है ; या

(घ) कोई व्यक्ति जिसकी हाजिरी विलंब या व्यय के बिना उपाप्त नहीं की जा सकती ।

खंड (1) से यह उपदर्शित होता है कि उन दशाओं में जहां किसी व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो, उस व्यक्ति द्वारा किया गया कथन सुसंगत है जब वह :–

(क) मृत्यु के कारण से ;

(ख) उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, संबंधित है ।

39. वर्तमान मामले में, मृतका के कथन से धारा 32 की उपधारा (1) में अधिकथित शर्तों का समाधान होता है क्योंकि यह मृत्यु के कारण तथा उस संव्यवहार की परिस्थितियों जिसके फलस्वरूप मृत्यु हुई थी, दोनों से संबंधित है । ऐसा इसलिए है क्योंकि कथन में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रत्यर्थी ने उस पर मिट्टी का तेल छिड़का और उसे आग लगा दी । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में भी यह निष्कर्ष निकाला गया है कि मृत्यु का कारण मृतका को पहुंचीं दाह क्षतियों द्वारा कारित रक्तविषायन (सेप्टिसीमिया) है । मृतका के कथन से उपदर्शित होता है कि उसे प्रत्यर्थी द्वारा उस पर मिट्टी का तेल छिड़कने और उसे आग लगा देने के परिणामस्वरूप दाह क्षतियां पहुंची थीं ।

40. इसके अतिरिक्त, मृतका के कथन से यह भी पता चलता है कि प्रत्यर्थी ने उसे आग लगाने से पूर्व उसके साथ बलात्संग किया था – यह घटना उस संव्यवहार की परिस्थितियों का वर्णन है, जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी । अत: मृतका के कथन से धारा 32(1) में दी गई शर्तों का समाधान होता है और यह स्वयमेव एक सुसंगत तथ्य है । इसे इस अपील का न्यायनिर्णयन करने के प्रयोजन के लिए एक मृत्युकालिक कथन समझा जाएगा ।

ग. **मृत्युकालिक कथन की ग्राह्यता और साक्ष्यिक महत्व**

41. इस आशय का कोई नियम नहीं है कि मृत्युकालिक कथन

किसी मजिस्ट्रेट के बजाय किसी पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए जाने पर अग्राह्य है । (**कर्नाटक राज्य** बनाम **शरीफ**[1] और **भागीरथ** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले देखें) । यद्यपि मृत्युकालिक कथन को, यदि संभव हो तो, आदर्शत: किसी मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जाना चाहिए, तो भी यह नहीं कहा जा सकता है कि पुलिस कार्मिक द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन केवल इसी कारण से अग्राह्य हो जाते हैं । यह मुद्दा कि क्या पुलिस द्वारा अभिलिखित किया गया मृत्युकालिक कथन ग्राह्य है या नहीं, इसका विनिश्चय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् किया जाना चाहिए ।

42. **खुशाल राव** बनाम **बंबई राज्य**[3] वाले मामले में इस न्यायालय ने वे मानदंड विरचित किए हैं जिनके आधार पर मृत्युकालिक कथनों का मूल्यांकन किया जा सकता है :–

> "16. ..... (1) विधि के आत्यंतिक नियम के रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि कोई मृत्युकालिक कथन दोषसिद्धि का तब तक एकमात्र आधार नहीं बन सकता है जब तक इसकी संपुष्टि नहीं हो जाती ;
>
> (2) प्रत्येक मामले का अवधारण उसके स्वयं के तथ्यों के आधार पर उन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए जिनमें मृत्युकालिक कथन किया गया था ;
>
> (3) एक साधारण प्रतिपादना के रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि मृत्युकालिक कथन अन्य साक्ष्य की बनिश्वत एक कमजोर प्रकार का साक्ष्य होता है ;
>
> (4) किसी मृत्युकालिक कथन का किसी अन्य साक्ष्य जितना ही महत्व होता है और इसका मूल्यांकन परिवर्ती परिस्थितियों को

---

[1] (2003) 2 एस. सी. सी. 473.

[2] (1997) 1 एस. सी. सी. 481.

[3] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 22.

ध्यान में रखते हुए और साक्ष्य के विवेचन को शासित करने वाले सिद्धांतों के प्रतिनिर्देश करके किया जाना चाहिए ;

(5) कोई मृत्युकालिक कथन जो किसी सक्षम मजिस्ट्रेट द्वारा उचित रीति में अर्थात् प्रश्नों और उत्तरों के रूप में, और यथासाध्य कथन करने वाले के शब्दों में अभिलिखित किया गया है, वह ऐसे मृत्युकालिक कथन की बजाय अधिक महत्व रखता है जो ऐसे मौखिक परिसाक्ष्य पर निर्भर है जो मानव स्मृति और मानव चरित्र की सभी दुर्बलताओं से ग्रसित हो सकता है ; और

(6) किसी मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता की परख करने के लिए न्यायालय को इन परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए, जैसे मृत्युन्मुख व्यक्ति द्वारा अवलोकन करने का अवसर, उदाहरण के लिए यदि अपराध रात्रि में कारित किया गया था, तो क्या वहां पर्याप्त रोशनी थी ; क्या उस व्यक्ति की कथन किए गए तथ्यों को स्मरण करने का सामर्थ्य कथन करते समय उसके नियंत्रण से परे परिस्थितियों द्वारा बाधित तो नहीं हो गया था ; यदि उसके पास कथन को शासकीय रूप से अभिलिखित करने के अतिरिक्त मृत्युकालिक कथन करने के कई अवसर थे तो कथन आद्योपांत संगत रहा हो ; और यह कि कथन शीघ्रतम अवसर पर किया गया था और हितबद्ध पक्षकारों द्वारा सिखाने-पढ़ाने का परिणाम नहीं था ।"

43. जैसा कि **राम बिहारी यादव** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, इस तथ्य से कि मृत्युकालिक कथन प्रश्नों और उत्तरों के रूप में नहीं है, न तो इसकी ग्राह्यता पर और न ही इसके साक्ष्यिक महत्व पर असर पड़ता है :–

"9. ..... साधारणतया, मृत्युकालिक कथन को प्रश्नों और उत्तरों के रूप में अभिलिखित किया जाना चाहिए किंतु यदि कोई

[1] (1998) 4 एस. सी. सी. 517.

मृत्युकालिक कथन विस्तारपूर्वक नहीं है अपितु केवल कुछेक वाक्य हैं और कथन करने वाले के वास्तविक शब्दों में है, तो मात्र यह तथ्य कि यह प्रश्न-उत्तर रूप में नहीं है, इसकी स्वीकार्यता या विश्वसनीयता के विरुद्ध एक आधार नहीं हो सकता है ।"

44. वास्तव में, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **सुरिन्द्र कुमार** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में मान्यता प्रदान की गई है, मृत्युकालिक कथनों को सदैव प्रश्नों और उत्तरों के रूप में अभिलिखित करना संभव नहीं हो सकता है :–

"19. जहां तक हमारे समक्ष मामले का संबंध है, हम केवल यह उल्लेख कर सकते हैं कि किसी मृत्युकालिक कथन को अभिलिखित करने के लिए कोई रूप-विधान विहित नहीं है । वास्तव में, ऐसा कोई रूप-विधान विहित नहीं किया जा सकता । अत: यह आबद्धकर नहीं है कि किसी मृत्युकालिक कथन को प्रश्न-उत्तर रूप में अभिलिखित किया जाए । ऐसे अवसर हो सकते हैं जब ऐसा करना संभव हो सकता है और ऐसे अवसर भी हो सकते हैं जब या तो तात्कालिक स्थिति के कारण या उस पीड़ा और वेदना के कारण जो विपदग्रस्त को उस सुसंगत समय पर हो सकती है, ऐसा करना संभव नहीं हो सकता है ।"

45. उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में यह गलत मत व्यक्त किया है कि डा. आर. के. पांडेय ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कहा था कि वह उस समय जब विपदग्रस्त का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जा रहा था, साथ वाले कमरे में एक अन्य रोगी का परीक्षण कर रहा था । प्रतिपरीक्षा के अभिलेख से यह उपदर्शित होता है कि डा. आर. के. पांडेय ने यह कहा था कि वह साथ वाली मेज पर (न कि साथ वाले कमरे में जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा गलत रूप से उल्लेख किया गया है) रोगी का परीक्षण कर रहा था । उच्च न्यायालय ने इस तथ्य का यह अभिनिर्धारित करने के लिए गलत रूप से अवलंब लिया था कि

[1] (2012) 12 एस. सी. सी. 120.

विपदग्रस्त के कथन को उसका मृत्युकालिक कथन नहीं माना जा सकता है । डा. आर. के. पांडेय से उनकी प्रतिपरीक्षा के दौरान उनसे पूछे गए उत्तर से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस मृत्युकालिक कथन को इस आधार पर नामंजूर नहीं किया जा सकता कि वह एक अन्य कमरे में था जब इसे अभिलिखित किया गया था – वह स्पष्ट रूप से उसी कमरे में था और मृत्युकालिक कथन लल्लन प्रसाद द्वारा उसकी मौजूदगी में अभिलिखित किया गया था । लल्लन प्रसाद और डा. आर. के. पांडेय, दोनों ने अपनी प्रतिपरीक्षा (प्रतिपरीक्षाओं) के दौरान इस तथ्य को प्रमाणित किया है ।

46. डा. आर. के. पांडेय इस बात से भी संतुष्ट था कि मृतका कथन करने के लिए शारीरिक और मानसिक रूप से समर्थ है और इस बात को लिखित में प्रमाणित किया था । मृत्युकालिक कथन विपदग्रस्त के शब्दों में अभिलिखित किया गया था और उसे इसे पढ़कर सुनाया गया था और इसके पश्चात् उसने उस पर अपने हस्ताक्षर किए थे । हमारे पास यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि कथन सिखाने-पढ़ाने का परिणाम था या मृतका कथन करने के लिए असमर्थ थी । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह उपदर्शित होता हो कि मृतका और प्रत्यर्थी के बीच ऐसी कोई दुश्मनी थी जिसके कारण मृतका घटनाओं का असत्य ब्यौरा देगी और प्रत्यर्थी को मिथ्या रूप से फंसाएगी ।

47. इसके अतिरिक्त, लल्लन प्रसाद को यह स्मरण नहीं था कि क्या मृतका सामान्य वार्ड में भर्ती की गई थी या गहन चिकित्सा इकाई (आईसीयू) में । इस तथ्य से मृत्युकालिक कथन की प्रमाणिकता दूषित नहीं हो जाती है क्योंकि डा. आर. के. पांडेय ने यह साक्ष्य दिया है कि इसे उसकी मौजूदगी में अभिलिखित किया गया था ।

48. अत: हमारा यह समाधान हो जाता है कि मृत्युकालिक कथन स्वैच्छिक रूप से किया गया था और सत्य है । मृतका उस समय कथन करने के लिए मानसिक रूप से समर्थ थी जब उसने लल्लन प्रसाद को कथन किया था ।

ii. अभियोजन पक्ष ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है

49. मृत्युकालिक कथन से पूरी तरह से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्यर्थी ने मृतका के साथ बलात्संग किया, उस पर मिट्टी का तेल छिड़का और उसे आग लगा दी । मृत्यु का कारण रक्तविषायन (सेप्टिसीमिया) था, जो दाह क्षतियों के परिणामस्वरूप हुआ था । अत: विपदग्रस्त की मृत्यु प्रत्यर्थी द्वारा उसे कारित की गई क्षतियों का प्रत्यक्ष परिणाम था । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है जिससे प्रत्यर्थी की दोषिता के बारे में युक्तियुक्त संदेह उद्भूत होता हो ।

50. प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि चिकित्सा बोर्ड को बलात्संग का कोई साक्ष्य नहीं पाया था और इसलिए प्रत्यर्थी मृतका के साथ बलात्संग करने का दोषी नहीं है । चिकित्सा बोर्ड द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट में कहा गया है कि मैथुन की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है, यद्यपि इस संबंध में कोई निश्चित राय नहीं दी जा सकती । बलात्संग किए जाने के बारे में चिकित्सा साक्ष्य के अभाव का यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता है कि मृतका के साथ बलात्संग नहीं किया गया था । उसके मृत्युकालिक कथन में स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि प्रत्यर्थी ने उसे आग लगाने से पूर्व उसके साथ बलात्संग किया था और ऐसा कोई नियम नहीं है कि जब मृत्युकालिक कथन अन्यथा संदेहास्पद न हो तो मृत्युकालिक कथन की चिकित्सा या अन्य साक्ष्य द्वारा संपुष्टि करना आज्ञापक हो ।

51. **विष्णु** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि किसी चिकित्सा विशेषज्ञ की राय किसी तथ्य के विद्यमान होने के बारे में निश्चायक नहीं है :–

> "चिकित्सा अधिकारी की राय न्यायालय की सहायता करने के लिए है क्योंकि वह तथ्यों का साक्षी नहीं है और चिकित्सा अधिकारी द्वारा दिया गया साक्ष्य वास्तव में एक परामर्शी स्वरूप का है और

[1] (2006) 1 एस. सी. सी. 283.

तथ्यों के साक्षी पर आबद्धकर नहीं है ।"

52. **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **राम सागर यादव**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि न तो विधि का और न ही साक्ष्य का कोई नियम है कि किसी मृत्युकालिक कथन के आधार पर तब तक कार्यवाही न की जा सकती हो जब तक इसकी संपुष्टि नहीं हो जाती है :–

> "13. यह सुस्थिर है कि विधि की दृष्टि से किसी मृत्युकालिक कथन के आधार पर संपुष्टि के बिना कार्यवाही की जा सकती है । {खुशाल राव **बनाम** बंबई राज्य [ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 22 = 1958 एस. सी. आर. 552 = 1958 क्रिमिनल ला जर्नल 106] ; हरबंश सिंह **बनाम** पंजाब राज्य [ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 439 = 1962 सप्ली. (1) एस. सी. आर. 104 = (1962) 1 क्रिमिनल ला जर्नल 479] ; गोपाल सिंह **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य [(1972) 3 एस. सी. सी. 268 = 1972 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 513 = 1972 क्रिमिनल ला जर्नल 1045] वाले मामले देखें} । यहां तक कि प्रज्ञा का भी ऐसा कोई नियम नहीं है जिसे विधि के ऐसे नियम के रूप में निश्चित किया गया हो कि किसी मृत्युकालिक कथन पर तब तक कार्यवाही नहीं की जा सकती जब तक कि इसकी संपुष्टि न हो जाए । न्यायालय का प्राथमिक प्रयास यह पता लगाने का होना चाहिए कि क्या मृत्युकालिक कथन सत्य है या नहीं । यदि यह सत्य है, तो संपुष्टि का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं होता । मृत्युकालिक कथन की संपुष्टि की आवश्यकता केवल तब है यदि मृत्युकालिक कथन की परिस्थितियां स्पष्ट और विश्वसनीय न हों, तब न्यायालय स्वयं को आश्वस्त करने के लिए मृत्युकालिक कथन की संपुष्टि की तलाश कर सकता है ।"

53. अभि. सा. 1 से 5 और अभि. सा. 10 को (मृतका के परिवार के सदस्य होने के कारण और अन्य व्यक्ति उसके जानकार होने के कारण) सेशन न्यायालय में कार्यवाहियों के दौरान पक्षद्रोही घोषित किया

---

[1] (1985) 1 एस. सी. सी. 552.

गया था । विपदग्रस्त की मृत्यु के पश्चात् (या उससे पहले भी) विभिन्न कारणों से साक्षियों का पक्षद्रोही हो जाना आम बात है । **रमेश** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने साक्षियों के पक्षद्रोही हो जाने के लिए उत्तरदायी निम्नलिखित कुछ कारण बतलाए थे :–

"44. विभिन्न मामलों का विश्लेषण करने पर निम्नलिखित कारण बताए जा सकते हैं जिससे साक्षी न्यायालय के समक्ष अपने कथनों से मुकर जाते हैं और पक्षद्रोही हो जाते हैं –

(i) डराना/अभित्रास ।

(ii) विभिन्न तरीकों द्वारा प्रलोभन देना ।

(iii) अभियुक्तों द्वारा बाहुबल और धनबल का उपयोग ।

(iv) झूठे साक्षियों का उपयोग ।

(v) विचारण में लगने वाला अत्यधिक समय ।

(vi) अन्वेषण और विचारण के दौरान साक्षियों द्वारा सामना की जाने वाली बाधाएं ।

(vii) साक्षी के पक्षद्रोही होने की जांच के लिए कोई स्पष्ट विधान न होना ।

..... ।

48. उपरोक्त के अतिरिक्त, साक्षियों के पक्षद्रोही होने का एक और महत्वपूर्ण कारण 'समझौते की प्रवृत्ति' भी बताई जा सकती है । बलात्संग के विचारणों में ऐसी प्रवृत्ति पर टिप्पणी करते हुए प्रतीक्षा बक्शी ने अपनी पुस्तक ['जस्टिस इज ए सीक्रेट : कम्प्रोमाइज इन रेप ट्रायल्स' (2010) 44, अंक 3, कंट्रीब्यूशंस इन इंडियन सोसियोलॉजी भारतीय समाज शास्त्र में योगदान, पृष्ठ 207-233] में इस समस्या को निम्नलिखित रीति में रेखांकित किया है –

'..... यहां साक्षी की सुरक्षा की कोई व्यवस्था नहीं है,

[1] (2017) 1 एस. सी. सी. 529.

> जो आतंक को सामाजिक-कानूनी समझौते की सौदेबाजी में बदल देता है । यही कारण है कि यदि विपदग्रस्त अपनी जिजीविषा नहीं खोती, तो भी अभियोजन पक्ष के साक्षी मुकदमे के समय का विचारण आने तक अक्सर ही अपने बयान से पलट जाते हैं ।.....।'"

54. इन कारकों के अतिरिक्त, जो साक्षी मृतका को जानते हैं वे भी पक्षद्रोही हो सकते हैं क्योंकि वे भी अपनी जिंदगी जीना चाहते हैं । किसी प्रियजन के बलात्संग और मृत्यु के समय की परिवर्ती परिस्थितियों के बारे में साक्ष्य देना अत्यंत पीड़ादायक स्थिति होती है और आपराधिक न्याय व्यवस्था की धीमी गति इस पीड़ा को और भी अधिक बढ़ा देती है ।

55. मृतका के परिवार के सदस्यों सहित कतिपय साक्षियों को पक्षद्रोही घोषित किया गया था, यह बात अभियोजन पक्ष के पक्षकथन पर संदेह करने के लिए अपर्याप्त है । अभियोजन पक्ष का यह पक्षकथन नहीं था कि पक्षद्रोही साक्षी अपराध के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी थे । बल्कि, इन साक्षियों के परिसाक्ष्य मुख्य रूप से यह दर्शित करने के लिए सुसंगत थे कि मृतका ने विभिन्न व्यक्तियों को सतत रूप से यह कहा था कि प्रत्यर्थी ने बलात्संग किया और उसकी हत्या कर दी । ऐसे साक्ष्य का अभाव, जिससे विशिष्ट समयावधि के दौरान मृत्युकालिक कथन किए जाने की बात सिद्ध होती हो, अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक नहीं है । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, मृत्युकालिक कथन विपदग्रस्त के शब्दों में अभिलिखित किया गया था और उसे पढ़कर सुनाया गया था तथा इसके पश्चात् उसने इस पर अपने हस्ताक्षर किए थे ।

56. धीरेन्द्र राय (प्रति. सा. 1) ने साक्ष्य दिया था कि प्रत्यर्थी के विरुद्ध एक मिथ्या मामला संस्थित किया गया था किंतु वह अपनी इस राय के लिए कोई विश्वसनीय कारण देने में असफल रहा । हम इस बात से सहमत नहीं हैं कि भूमि की सिंचाई के संबंध में किसी छोटे से विवाद के कारण मृतका प्रत्यर्थी के विरुद्ध बलात्संग के झूठे आरोप लगाएगी या

उसके द्वारा उसे जलाए जाने के बारे में झूठ बोलेगी, विशेष रूप से तब जब वह भूमि की सिंचाई के बारे में अभिकथित विवाद में पक्षकार भी नहीं थी ।

57. दशरथ तिवारी (अभि. सा. 2) ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृतका जल जाने के पश्चात् बोलने में असमर्थ थी । यह बात स्पष्ट रूप से मिथ्या है जैसा कि लल्लन प्रसाद और डा. आर. के. पांडेय, दोनों के परिसाक्ष्यों से सिद्ध होता है । डा. आर. के. पांडेय ने यह प्रमाणित किया था कि मृतका शारीरिक और मानसिक रूप से समर्थ है और जब लल्लन प्रसाद द्वारा उसका कथन अभिलिखित किया गया था तब वह वहां मौजूद थे । डा. आर. के. पांडेय को प्रत्यर्थी के प्रति कोई विद्वेष नहीं था, न ही प्रतिरक्षा पक्ष ने कोई सुझाव दिया था कि उसने विद्वेष किया था । उसके पास विपदग्रस्त के स्वास्थ्य के संबंध में मिथ्या परिसाक्ष्य देने, या उसका कथन अभिलिखित करते समय मिथ्या आरोग्य प्रमाणपत्र देने का कोई कारण नहीं था ।

58. बालमुकुंद राय (प्रति. सा. 3) ने साक्ष्य दिया था कि मृतका खाना पकाने के दौरान क्षतिग्रस्त हो गई थी । हम इसे पूरी तरह से अविश्वसनीय मानते हैं । अभिलेख से ऐसी कोई बात प्रकट नहीं होती है जिससे यह सुझाव मिलता हो कि मृतका के पास प्रत्यर्थी को फंसाने के लिए कहानी गढ़ने का कोई कारण था । इसके अतिरिक्त, ऐसा कोई सुझाव नहीं मिलता है कि बालमुकुंद राय उस समय विपदग्रस्त के घर में मौजूद था जब अनुमित घटना घटित हुई थी । यदि उसने घटना देखी थी, तो प्रश्न उठता है कि जब धीरेन्द्र राय ने अनुमित रूप से विपदग्रस्त के मकान में प्रवेश किया था, उस समय वह कहां चला गया था । मृत्युकालिक कथन का बालमुकुंद राय के परिसाक्ष्य से अधिक साक्ष्यिक महत्व है और हम मृत्युकालिक कथन में वर्णित घटनाओं के वृत्तांत को स्वीकार करते हैं ।

59. इन कारणों से, हमारा यह निष्कर्ष है कि अभियोजन पक्ष ने सेशन न्यायालय के समक्ष अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया था । उच्च न्यायालय को सेशन न्यायालय के निर्णय को पहले ही चर्चा किए गए कारणों से उलटना नहीं चाहिए था । जबकि यह

न्यायालय सामान्यत: उच्च न्यायालयों द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करता है, तो भी यह पूर्ण न्याय करने के लिए और न्याय की हानि को रोकने के लिए दोषमुक्ति के आदेशों को उलटने के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग कर सकता है (**सतबीर** बनाम **सूरत सिंह**[1] और **पंजाब राज्य** बनाम **अजायब सिंह**[2] वाला मामला देखें) । अत: हम उच्च न्यायालय के तारीख 27 जनवरी, 2018 के विनिश्चय को अपास्त करते हैं और सेशन न्यायालय के प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 341, 376 और 448 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध करते हुए तारीख 10 अक्तूबर, 2006 के निर्णय तथा प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए कठोर आजीवन कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 10 वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश देते हुए तारीख 11 अक्तूबर, 2006 के आदेश को प्रत्यावर्तित करते हैं । ये दंडादेश साथ-साथ चलेंगे । प्रत्यर्थी को दंडादेश भुगतने के लिए तुरंत अभिरक्षा में लिया जाएगा ।

ङ. विदाई टिप्पणियां

60. विपदग्रस्त को मैथुन करने की आदत थी या नहीं, इस बात का अवधारण करने के लिए विपदग्रस्त का परीक्षण करते समय चिकित्सा बोर्ड ने जो जांच की थी, उसे "दो अंगुली परीक्षण" कहते हैं । इस न्यायालय ने अभिकथित बलात्संग और यौन उत्पीड़न के मामलों में किए जाने वाले इस शर्मनाक और घृणित परीक्षण की बार-बार निंदा की है । इस तथाकथित परीक्षण का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है और इससे न तो बलात्संग के अभिकथन साबित होते हैं और न ही नासाबित होते हैं । बल्कि इससे वे महिलाएं पुन: पीड़ित होती हैं और उन्हें फिर से आघात पहुंचता है जो यौन उत्पीड़न का शिकार हुई हों और यह उनकी गरिमा को ठेस पहुंचाने का कार्य भी है । "दो अंगुली परीक्षण" या योनि द्वारा परीक्षण कतई नहीं किया जाना चाहिए ।

---

[1] (1997) 4 एस. सी. सी. 192.

[2] (2005) 9 एस. सी. सी. 94.

61. **लिल्लू** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि "दो अंगुली परीक्षण" निजता, सम्मान और गरिमा के अधिकार का हनन करता है :–

> "13. ..... बलात्संग की पीड़िताएं इस प्रकार की विधिक सहायता की हकदार हैं, जिससे उन्हें पुन: आघात न लगे या उनके शारीरिक और मानसिक सम्मान और गरिमा को ठेस न पहुंचे । वे ऐसी रीति से किए जाने वाली चिकित्सा प्रक्रियाओं की भी हकदार हैं जिनसे उनके सहमति के अधिकार का सम्मान होता हो । चिकित्सा प्रक्रियाएं ऐसी रीति से नहीं की जानी चाहिएं, जो क्रूर, अमानवीय अथवा अपमानजनक हों और लिंग-आधारित हिंसा के मामलों पर विचार करते समय सर्वोच्च प्राथमिकता पीड़िता का स्वास्थ्य होना चाहिए । राज्य यौन हिंसा के पीड़ितों को ऐसी सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए बाध्यताधीन हैं । उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए उचित उपाय किए जाने चाहिएं और उनकी निजता पर कोई मनमाना या विधिविरुद्ध हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए ।
>
> 14. इस प्रकार, उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, निस्संदेह दो अंगुली परीक्षण और इसका निर्वचन बलात्संग की पीड़िताओं की निजता, शारीरिक और मानसिक सम्मान तथा गरिमा का हनन करता है ।"

62. क्या किसी स्त्री को "मैथुन की आदत" है या "मैथुन की अभ्यस्त" है, यह बात यह अवधारण करने के प्रयोजनार्थ असंगत है कि क्या किसी विशिष्ट मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के संघटक मौजूद हैं या नहीं । यह तथाकथित परीक्षण इस गलत धारणा पर आधारित है कि यौन रूप से सक्रिय स्त्री का बलात्संग नहीं किया जा सकता । इस सच्चाई से इनकार नहीं किया जा सकता कि यह न्यायनिर्णयन करते समय कि क्या अभियुक्त ने स्त्री के साथ बलात्संग किया था या नहीं, स्त्री के पूर्ववर्ती यौन जीवन से कोई लेना-देना नहीं है । इसके अतिरिक्त, किसी स्त्री के परिसाक्ष्य का साक्ष्यिक महत्व उसके

---

[1] (2013) 14 एस. सी. सी. 643.

पूर्व यौन जीवन पर निर्भर नहीं करता है । यह पितृसत्तात्मक और लिंगवादी विचार है कि कोई स्त्री जब कहती है कि उसके साथ बलात्संग किया गया था, तो केवल इस कारण से उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि वह यौन रूप से सक्रिय है ।

63. विधानमंडल ने दांडिक विधि (संशोधन) अधिनियम 2013 को अधिनियमित करते समय, जिसके द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ साक्ष्य अधिनियम की धारा 53क अंत:स्थापित करने के लिए संशोधन किया गया था, इस तथ्य को स्पष्ट रूप से मान्यता दी थी । साक्ष्य अधिनियम की धारा 53क के निबंधनों के अनुसार, यौन अपराधों के अभियोजनों में विपदग्रस्त के चरित्र या किसी व्यक्ति के साथ उसके पूर्ववर्ती यौन अनुभव का साक्ष्य सहमति या सहमति की गुणवत्ता के मुद्दे के लिए सुसंगत नहीं होगा ।

64. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने यौन हिंसा के मामलों में चिकित्सा प्रदाताओं के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत जारी किए हैं[1] । इन मार्गदर्शक सिद्धांतों में "दो अंगुली परीक्षण" को अभिनिषिद्ध किया गया है :–

> "बलात्संग/लैंगिक हिंसा को सिद्ध करने के लिए योनि परीक्षण जिसे आमतौर पर 'दो अंगुली परीक्षण' कहा जाता है, नहीं किया जाना चाहिए और योनि के आकार का यौन हिंसा के मामले से कोई लेना-देना नहीं है । योनि परीक्षण केवल वयस्क महिलाओं का ही किया जा सकता है जब चिकित्सीय रूप से ऐसा करना आवश्यक हो ।
>
> योनिच्छद की जांच भी असंगत है क्योंकि योनिच्छद साइकिल चलाने, घुड़सवारी करने या हस्तमैथुन जैसे कई कारणों से फट सकता है । अविकल योनिच्छद होने से लैंगिक हिंसा की बात से इनकार नहीं किया जा सकता और फटे हुआ योनिच्छद से यह साबित नहीं होता है कि पूर्वकाल में मैथुन हुआ ही हो । अत: यौन

[1] स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, "यौन हिंसा के उत्तरजीवियों/पीड़ितों के लिए चिकित्सा-विधिक सहायता" ।

हिंसा के मामलों में परीक्षण के निष्कर्षों को अभिलिखित करते समय योनिच्छद को भी जननांगों का एक भाग माना जाना चाहिए । केवल वे ही बातें अभिलिखित की जानी चाहिएं जो हमले की घटना (ताजा फटन, रक्तस्राव, सूजन आदि जैसे निष्कर्ष) के लिए सुसंगत हों ।"

65. यद्यपि इस मामले में "दो अंगुली परीक्षण" एक दशक से अधिक पहले किया गया था, किंतु यह खेदजनक है कि यह आज भी जारी है ।

66. हम केंद्र सरकार तथा राज्य सरकारों को निदेश देते हैं कि :–

(क) यह सुनिश्चित किया जाए कि स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा विरचित मार्गदर्शक सिद्धांत सभी सरकारी और प्राइवेट अस्पतालों को परिचालित किए जाएं ;

(ख) यौन उत्पीड़न और बलात्संग की पीड़िताओं की जांच करते समय अपनाई जाने वाली उचित प्रक्रिया को संसूचित करने के लिए चिकित्सा कर्मियों के लिए कार्यशालाएं आयोजित की जाएं ; और

(ग) यौन उत्पीड़न और बलात्संग की पीड़िताओं की जांच करते समय अपनाई जाने वाली प्रक्रियाओं में "दो अंगुली परीक्षण" या योनि परीक्षण विहित नहीं किया गया है, यह सुनिश्चित करते हुए चिकित्सा विद्यालयों में पाठ्यक्रम की समीक्षा की जाए ।

67. इस निर्णय की एक प्रति सचिव, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार को भेजी जाए । सचिव, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार इस निर्णय की प्रतियां प्रत्येक राज्य के प्रधान सचिव (सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग) को भेजेंगे । प्रत्येक राज्य के स्वास्थ्य विभागों के प्रधान सचिव भी इस निर्णय के भाग ङ में दिए गए निर्देशों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए उत्तरदायी होंगे । प्रत्येक राज्य के गृह विभाग के सचिव इस संबंध में अतिरिक्त

रूप से पुलिस महानिदेशकों को निदेश जारी करेंगे । पुलिस महानिदेशक इन निदेशों को पुलिस अधीक्षकों को संसूचित करेंगे ।

68. कोई भी व्यक्ति जो इस न्यायालय के निदेशों का उल्लंघन करके "दो अंगुली परीक्षण" या योनि परीक्षण (अभिकथित लैंगिक हमले के शिकार व्यक्ति की जांच करते समय) करेगा, वह अवचार का दोषी होगा ।

69. यह अपील उपरोक्त निबंधनों के अनुसार मंजूर की जाती है ।

70. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989

(1989 का अधिनियम संख्यांक 33)

[11 सितंबर, 1989]

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों पर अत्याचार का अपराध करने का निवारण करने के लिए, ऐसे अपराधों के निवारण के लिए विशेष न्यायालयों का तथा ऐसे अपराधों से पीड़ित व्यक्तियों को राहत देने का और उनके पुनर्वास का तथा उससे संबंधित या उसके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के चालीसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1
प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2. परिभाषाएं – (1) इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "अत्याचार" से धारा 3 के अधीन दंडनीय अपराध अभिप्रेत है ;

(ख) "संहिता" से दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

अभिप्रेत है ;

(ग) "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों" के वही अर्थ हैं जो संविधान के अनुच्छेद 366 के खंड (24) और खंड (25) में हैं ;

(घ) "विशेष न्यायालय" से धारा 14 में विशेष न्यायालय के रूप में विनिर्दिष्ट कोई सेशन न्यायालय अभिप्रेत है ;

(ङ) "विशेष लोक अभियोजक" से विशेष लोक अभियोजक के रूप में विनिर्दिष्ट लोक अभियोजक या धारा 15 में निर्दिष्ट अधिवक्ता अभिप्रेत है ;

(च) उन शब्दों और पदों के, जो इस अधिनियम में प्रयुक्त हैं किन्तु परिभाषित नहीं हैं और संहिता या भारतीय दंड संहिता में परिभाषित हैं, वही अर्थ हैं जो, यथास्थिति, संहिता में या भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) में है ।

(2) इस अधिनियम में किसी अधिनियमिति या उसके किसी उपबंध के प्रति किसी निर्देश का अर्थ किसी ऐसे क्षेत्र के संबंध में जिसमें ऐसी अधिनियमिति या ऐसा उपबंध प्रवृत्त नहीं है, यह लगाया जाएगा कि वह उस क्षेत्र में प्रवृत्त तत्स्थानी विधि, यदि कोई हो, के प्रतिनिर्देश है ।

अध्याय 2

अत्याचार के अपराध

3. अत्याचार के अपराधों के लिए दंड – (1) कोई भी व्यक्ति, जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं है, –

(i) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को अखाद्य या घृणाजनक पदार्थ पीने या खाने के लिए मजबूर करेगा ;

(ii) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य के परिसर या पड़ोस में मल-मूत्र, कूड़ा, पशु-शव या कोई अन्य घृणाजनक पदार्थ इकट्ठा करके उसे क्षति पहुंचाने, अपमानित करने या क्षुब्ध करने के आशय से कार्य करेगा ;

(iii) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य के शरीर से बलपूर्वक कपड़े उतारेगा या उसे नंगा या उसके चेहरे या शरीर को पोतकर घुमाएगा या इसी प्रकार का कोई अन्य ऐसा कार्य करेगा जो मानव के सम्मान के विरुद्ध है ;

(iv) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य के स्वामित्वाधीन या उसे आबंटित या किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा उसे आबंटित किए जाने के लिए अधिसूचित किसी भूमि को सदोष अधिभोग में लेगा या उस पर खेती करेगा या उसे आबंटित भूमि को अंतरित करा लेगा ;

(v) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को उसकी भूमि या परिसर से सदोष बेकब्जा करेगा या किसी भूमि, परिसर या जल पर उसके अधिकारों के उपभोग में हस्तक्षेप करेगा ;

(vi) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को 'बेगार' करने के लिए या सरकार द्वारा लोक प्रयोजनों के लिए अधिरोपित किसी अनिवार्य सेवा से भिन्न अन्य समरूप प्रकार के बलात्श्रम या बंधुआ मजदूरी के लिए विवश करेगा या फुसलाएगा ;

(vii) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को मतदान न करने के लिए या किसी विशिष्ट अभ्यर्थी के लिए मतदान करने के लिए या विधि द्वारा उपबंधित से भिन्न रीति से मतदान करने के लिए मजबूर या अभित्रस्त करेगा ;

(viii) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य के विरुद्ध मिथ्या, द्वेषपूर्ण या तंग करने वाला वाला वाद या दांडिक या अन्य विधिक कार्यवाही संस्थित करेगा ;

(ix) किसी लोक सेवक को कोई मिथ्या या तुच्छ जानकारी देगा और उसके द्वारा अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को क्षति पहुंचाने या क्षुब्ध करने के लिए ऐसे लोकसेवक से उसकी विधिपूर्ण शक्ति का प्रयोग कराएगा ;

(x) जनता को दृष्टिगोचर किसी स्थान में अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य का अपमान करने के आशय

से साशय उसको अपमानित या अभित्रस्त करेगा ;

(xi) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति की किसी महिला का अनादर करने या उसकी लज्जा भंग करने के आशय से हमला या बल प्रयोग करेगा ;

(xii) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति की किसी महिला की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में होने पर उस स्थिति का प्रयोग उसका लैंगिक शोषण करने के लिए, जिसके लिए वह अन्यथा सहमत नहीं होती, करेगा ;

(xiii) किसी स्रोत, जलाशय या किसी अन्य उद्‌गम के जल को जो आमतौर पर अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के सदस्यों द्‌वारा उपयोग में लाया जाता है, दूषित या गंदा करेगा जिससे कि वह उस प्रयोजन के लिए कम उपयुक्त हो जाए जिसके लिए उसका आमतौर पर प्रयोग किया जाता है ;

(xiv) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को सार्वजनिक अभिगम के स्थान के मार्ग के किसी रूढ़िजन्य अधिकार से वंचित करेगा या ऐसे सदस्य को बाधा पहुंचाएगा जिससे कि वह ऐसे सार्वजनिक अभिगम के स्थान का उपयोग करने या वहां पहुंचने से निवारित हो जाए जहां जनता के अन्य सदस्यों या उसके किसी भाग को उपयोग करने का या पहुंचने का अधिकार है ;

(xv) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को अपना मकान, गांव या अन्य निवास-स्थान छोड़ने के लिए मजबूर करेगा या कराएगा,

वह, कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी किन्तु जो पांच वर्ष तक की हो सकेगी, और जुर्माने से, दंडनीय होगा ।

(2) कोई भी व्यक्ति जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं है –

(i) मिथ्या साक्ष्य देगा या गढ़ेगा जिससे उसका आशय

अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को किसी ऐसे अपराध के लिए जो तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा मृत्यु दंड से दंडनीय है, दोषसिद्ध कराना है या वह यह जानता है कि इससे उसका दोषसिद्ध होना संभाव्य है, वह आजीवन कारावास से और जुर्माने से दंडनीय होगा ; और यदि अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी निर्दोष सदस्य को ऐसे मिथ्या या गढ़े हुए साक्ष्य के फलस्वरूप दोषसिद्ध किया जाता है और फांसी दी जाती है तो वह व्यक्ति, जो ऐसा मिथ्या साक्ष्य देता है या गढ़ता है, मृत्यु दंड से दंडनीय होगा ;

(ii) मिथ्या साक्ष्य देगा या गढ़ेगा जिससे उसका आशय अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को ऐसे अपराध के लिए जो मृत्यु दंड से दंडनीय नहीं है किन्तु सात वर्ष या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय है, दोषसिद्ध कराना है या वह यह जानता है कि उससे उसका दोषसिद्ध होना संभाव्य है, वह कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी किन्तु जो सात वर्ष या उससे अधिक की हो सकेगी और जुर्माने से, दंडनीय होगा ;

(iii) अग्नि या किसी विस्फोटक पदार्थ द्वारा रिष्टि करेगा जिससे उसका आशय अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य की किसी सम्पत्ति को नुकसान पहुंचाना है या वह यह जानता है कि उससे ऐसा होना संभाव्य है वह कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी किन्तु जो सात वर्ष तक की हो सकेगी, और जुर्माने से, दंडनीय होगा ;

(iv) अग्नि या किसी विस्फोटक पदार्थ द्वारा रिष्टि करेगा जिससे उसका आशय किसी ऐसे भवन को जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य द्वारा साधारणत: पूजा के स्थान के रूप में या मानव आवास के स्थान के रूप में या संपत्ति की अभिरक्षा के लिए किसी स्थान के रूप में उपयोग किया जाता है, नष्ट करता है या वह यह जानता है कि उससे ऐसा होना संभाव्य है, वह आजीवन कारावास से, और जुर्माने से दंडनीय होगा ;

(v) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अधीन दस वर्ष या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय कोई अपराध किसी व्यक्ति या सम्पत्ति के विरुद्ध इस आधार पर करेगा कि ऐसा व्यक्ति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य है या ऐसी सम्पत्ति ऐसे सदस्य की है, वह आजीवन कारावास से, और जुर्माने से, दंडनीय होगा ;

(vi) यह जानते हुए या यह विश्वास करने का कारण रखते हुए कि इस अध्याय के अधीन कोई अपराध किया गया है, वह अपराध किए जाने के किसी साक्ष्य को, अपराधी को विधिक दंड से बचाने के आशय से गायब करेगा या उस आशय से अपराध के बारे में कोई ऐसी जानकारी देगा जो वह जानता है या विश्वास करता है कि वह मिथ्या है, वह उस अपराध के लिए उपबंधित दंड से दंडनीय होगा ; या

(vii) लोक सेवक होते हुए इस धारा के अधीन कोई अपराध करेगा, वह कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष से कम की नहीं होगी किन्तु जो उस अपराध के लिए उपबंधित दंड तक हो सकेगी, दंडनीय होगा ।

4. कर्तव्यों की उपेक्षा के लिए दंड – कोई भी लोक सेवक, जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं है, इस अधिनियम के अधीन उसके द्वारा पालन किए जाने के लिए अपेक्षित अपने कर्तव्यों की जानबूझकर उपेक्षा करेगा, वह कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी किन्तु जो एक वर्ष तक की हो सकेगी, दंडनीय होगा ।

5. पश्चात्वर्ती दोषसिद्धि के लिए वर्धित दंड – कोई व्यक्ति, जो इस अध्याय के अधीन किसी अपराध के लिए पहले ही दोषसिद्ध हो चुका है ; दूसरे अपराध या उसके पश्चात्वर्ती किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, वह कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष से कम की नहीं होगी किन्तु जो उस अपराध के लिए उपबंधित दंड तक हो सकेगी, दंडनीय होगा ।

6. भारतीय दंड संहिता के कतिपय उपबंधों का लागू होना – इस अधिनियम के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए ; भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 34, अध्याय 3, अध्याय 4, अध्याय 5, अध्याय 5क, धारा 149 और अध्याय 23 के उपबंध, जहां तक हो सके, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे भारतीय दंड संहिता के प्रयोजनों के लिए लागू होते हैं ।

7. कतिपय व्यक्तियों की संपत्ति का समपहरण – (1) जहां कोई व्यक्ति इस अध्याय के अधीन दंडनीय किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है, वहां विशेष न्यायालय, कोई दंड देने के अतिरिक्त, लिखित रूप में आदेश द्वारा, यह घोषित कर सकेगा कि उस व्यक्ति की कोई संपत्ति, स्थावर या जंगम, या दोनों, जिनका उस अपराध को करने में प्रयोग किया गया है, सरकार को समपहृत हो जाएगी ।

(2) जहां कोई व्यक्ति इस अध्याय के अधीन किसी अपराध का अभियुक्त है, वहां उसका विचारण करने वाला विशेष न्यायालय ऐसा आदेश करने के लिए स्वतंत्र होगा कि उसकी सभी या कोई संपत्ति, स्थावर या जंगम या दोनों, ऐसे विचारण की अवधि के दौरान, कुर्क की जाएगी और जहां ऐसे विचारण का परिणाम दोषसिद्धि है वहां इस प्रकार कुर्क की गई संपत्ति उस सीमा तक समपहरण के दायित्वाधीन होगी जहां तक वह इस अध्याय के अधीन अधिरोपित किसी जुर्माने की वसूली के प्रयोजन के लिए अपेक्षित है ।

8. अपराधों के बारे में उपधारणा – इस अध्याय के अधीन किसी अपराध के लिए अभियोजन में, यदि यह साबित हो जाता है कि –

(क) अभियुक्त ने इस अध्याय के अधीन अपराध करने के अभियुक्त व्यक्ति की, या युक्तियुक्त रूप से संदेहास्पद व्यक्ति की कोई वित्तीय सहायता की है तो विशेष न्यायालय, जब तक कि तत्प्रतिकूल साबित न किया जाए, यह उपधारणा करेगा कि ऐसे व्यक्ति ने उस अपराध का दुष्प्रेरण किया है ;

(ख) व्यक्तियों के किसी समूह ने इस अध्याय के अधीन

अपराध किया है, और यदि यह साबित हो जाता है कि किया गया अपराध भूमि या किसी अन्य विषय के बारे में किसी विद्यमान विवाद का फल है तो यह उपधारणा की जाएगी कि यह अपराध सामान्य आशय या सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने के लिए किया गया था ।

9. शक्तियों का प्रदान किया जाना – (1) संहिता में या इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध में किसी बात के होते हुए भी, यदि राज्य सरकार ऐसा करना आवश्यक या समीचीन समझती है, तो वह –

(क) इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के निवारण के लिए और उससे निपटाने के लिए, या

(ख) इस अधिनियम के अधीन किसी मामले या मामलों के वर्ग या समूह के लिए,

किसी जिले या उनके किसी भाग में, राज्य सरकार के किसी अधिकारी को राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसे जिले या उसके भाग में संहिता के अधीन पुलिस अधिकारी द्वारा प्रयोक्तव्य शक्तियां या, यथास्थिति, ऐसे मामले या मामलों के वर्ग या समूह के लिए, और विशिष्टतया किसी विशेष न्यायालय के समक्ष व्यक्तियों की गिरफ्तारी, अन्वेषण और अभियोजन की शक्तियां प्रदान कर सकेगी ।

(2) पुलिस के सभी अधिकारी और सरकार के अन्य सभी अधिकारी इस अधिनियम के या उसके अधीन बनाए गए किसी नियम, स्कीम या आदेश के उपबंधों के निष्पादन में उपधारा (1) में निर्दिष्ट अधिकारी की सहायता करेंगे ।

(3) संहिता के उपबंध, जहां तक हो सके, उपधारा (1) के अधीन किसी अधिकारी द्वारा शक्तियों के प्रयोग के संबंध में लागू होंगे ।

अध्याय 3
निष्कासन

10. ऐसे व्यक्ति का हटाया जाना जिसके द्वारा अपराध किए जाने की संभावना है – (1) जहां विशेष न्यायालय का, परिवाद या पुलिस

रिपोर्ट पर, यह समाधान हो जाता है कि संभाव्यता है कि कोई व्यक्ति संविधान के अनुच्छेद 224 में यथानिर्दिष्ट 'अनुसूचित क्षेत्रों' या 'जनजाति क्षेत्रों' में सम्मिलित किसी क्षेत्र में इस अधिनियम के अध्याय 2 के अधीन कोई अपराध करेगा वहां वह, लिखित आदेश द्वारा, ऐसे व्यक्ति को यह निदेश दे सकेगा कि वह ऐसे क्षेत्र की सीमाओं से परे, ऐसे मार्ग से होकर और इतने समय के भीतर हट जाए, जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, और दो वर्ष से अनधिक ऐसी अवधि के लिए जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, उस क्षेत्र में जिससे हट जाने का उसे निदेश दिया गया था, वापस न लौटे ।

(2) विशेष न्यायालय, उपधारा (1) के अधीन आदेश के साथ उस उपधारा के अधीन निर्दिष्ट व्यक्ति को वे आधार संसूचित करेगा जिन पर वह आदेश किया गया है ।

(3) विशेष न्यायालय, उस व्यक्ति द्वारा जिसके विरुद्ध ऐसा आदेश किया गया है, या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा आदेश की तारीख से तीस दिन के भीतर किए गए अभ्यावेदन पर ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे उपधारा (1) के अधीन किए गए आदेश को प्रतिसंहृत या उपान्तरित कर सकेगा ।

11. किसी व्यक्ति द्वारा संबंधित क्षेत्र से हटने में असफल रहने और वहां से हटने के पश्चात् उसमें प्रवेश करने की दशा में प्रक्रिया – (1) यदि कोई व्यक्ति जिसको धारा 10 के अधीन किसी क्षेत्र से हट जाने के लिए कोई निदेश जारी किया गया है –

(क) निदेश किए गए रूप में हटने में असफल रहता है ; या

(ख) इस प्रकार हटने के पश्चात् उपधारा (2) के अधीन विशेष न्यायालय की लिखित अनुज्ञा के बिना उस क्षेत्र में ऐसे आदेश में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर प्रवेश करता है,

तो विशेष न्यायालय उसे गिरफ्तार करा सकेगा और उसे उस क्षेत्र के बाहर ऐसे स्थान पर, जो विशेष न्यायालय विनिर्दिष्ट करे, पुलिस अभिरक्षा में हटवा सकेगा ।

(2) विशेष न्यायालय, लिखित आदेश द्वारा, किसी ऐसे व्यक्ति

को जिसके विरुद्ध धारा 10 के अधीन आदेश किया गया है, अनुज्ञा दे सकेगा कि वह उस क्षेत्र में जहां से हट जाने का उसे निदेश दिया गया था ऐसी अस्थायी अवधि के लिए और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो ऐसे आदेश में विनिर्दिष्ट की जाएं, लौट सकता है और अधिरोपित शर्तों के सम्यक् अनुपालन के लिए उससे अपेक्षा कर सकेगा कि वह प्रतिभू सहित या उसके बिना, बंधपत्र निष्पादित करे ।

(3) विशेष न्यायालय किसी भी समय ऐसी अनुज्ञा को प्रतिसंहृत कर सकेगा ।

(4) ऐसा व्यक्ति, जो ऐसी अनुज्ञा से उस क्षेत्र में वापस आता है, जिससे उसे हटने के लिए निदेश दिया गया था, अधिरोपित शर्तों का अनुपालन करेगा और जिस अस्थायी अवधि के लिए लौटने की उसे अनुज्ञा दी गई थी उसके अवसान पर या ऐसी अस्थायी अवधि के अवसान के पूर्व ऐसी अनुज्ञा के प्रतिसंहृत किए जाने पर ऐसे क्षेत्र से बाहर हट जाएगा और धारा 10 के अधीन विनिर्दिष्ट अवधि के अनवसित भाग के भीतर नई अनुज्ञा के बिना वहां नहीं लौटेगा ।

(5) यदि कोई व्यक्ति अधिरोपित शर्तों में से किसी का पालन करने में या तद्नुसार स्वयं को हटाने में असफल रहेगा या इस प्रकार हट जाने के पश्चात् ऐसे क्षेत्र में नई अनुज्ञा के बिना प्रवेश करेगा या लौटेगा तो विशेष न्यायालय उसे गिरफ्तार करा सकेगा और उसे उस क्षेत्र के बाहर ऐसे स्थान को, जो विशेष न्यायालय विनिर्दिष्ट करे, पुलिस अभिरक्षा में हटवा सकेगा ।

12. ऐसे व्यक्तियों के, जिनके विरुद्ध धारा 10 के अधीन आदेश किया गया है, माप और फोटो आदि लेना – (1) प्रत्येक ऐसा व्यक्ति, जिसके विरुद्ध धारा 10 के अधीन आदेश किया गया है, विशेष न्यायालय द्वारा ऐसी अपेक्षा की जाने पर, किसी पुलिस अधिकारी को अपने माप और फोटो लेने देगा ।

(2) यदि उपधारा (1) में निर्दिष्ट कोई व्यक्ति, जिससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने माप या फोटो लेने दे, इस प्रकार माप या फोटो लिए जाने का प्रतिरोध करता है या उससे इनकार करता है, तो यह विधिपूर्ण होगा कि माप या फोटो लिए जाने को सुनिश्चित करने के लिए

सभी आवश्यक उपाय किए जाएं ।

(3) उपधारा (2) के अधीन लिए जाने वाले माप या फोटो का प्रतिरोध या उससे इनकार करने को भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 186 के अधीन अपराध समझा जाएगा ।

(4) जहां धारा 10 के अधीन किया गया आदेश प्रतिसंहृत कर दिया जाता है वहां उपधारा (2) के अधीन लिए गए सभी माप और फोटो (जिसके अंतर्गत नेगेटिव भी है) नष्ट कर दिए जाएंगे या उस व्यक्ति को सौंप दिए जाएंगे जिसके विरुद्ध आदेश किया गया था ।

13. धारा 10 के अधीन आदेश के अननुपालन के लिए शास्ति – वह व्यक्ति, जो धारा 10 के अधीन किए गए विशेष न्यायालय के आदेश का उल्लंघन करेगा, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से, दंडनीय होगा ।

अध्याय 4
विशेष न्यायालय

14. विशेष न्यायालय – राज्य सरकार, शीघ्र विचारण का उपबंध करने के प्रयोजन के लिए, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति की सहमति से, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए प्रत्येक जिले के लिए एक सेशन न्यायालय को विशेष न्यायालय के रूप में विनिर्दिष्ट करेगी ।

15. विशेष लोक अभियोजक – राज्य सरकार, प्रत्येक विशेष न्यायालय के लिए, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, एक लोक अभियोजक विनिर्दिष्ट करेगी या किसी ऐसे अधिवक्ता को, जिसने कम से कम सात वर्ष तक अधिवक्ता के रूप में विधि-व्यवसाय किया हो, उस न्यायालय में मामलों के संचालन के प्रयोजन के लिए विशेष लोक अभियोजक के रूप में नियुक्त करेगी ।

अध्याय 5
प्रकीर्ण

16. राज्य सरकार की सामूहिक जुर्माना अधिरोपित करने की शक्ति – सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 (1955 का 22) की धारा

10क के उपबन्ध, जहां तक हो सके, इस अधिनियम के अधीन सामूहिक जुर्माना अधिरोपित करने और उसे वसूल करने के प्रयोजनों के लिए और उससे संबद्ध सभी अन्य विषयों के लिए लागू होंगे ।

17. विधि और व्यवस्था तंत्र द्वारा निवारक कार्रवाई – (1) यदि जिला मजिस्ट्रेट या उपखंड मजिस्ट्रेट या किसी अन्य कार्यपालक मजिस्ट्रेट या किसी पुलिस अधिकारी को, जो पुलिस उप-अधीक्षक की पंक्ति से नीचे का न हो, इत्तिला प्राप्त होने पर और ऐसी जांच करने के पश्चात् जो वह आवश्यक समझे, यह विश्वास करने का कारण है कि किसी ऐसे व्यक्ति या ऐसे व्यक्तियों के समूह द्वारा, जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के नहीं हैं, और जो उसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर किसी स्थान पर निवास करते हैं या बार-बार आते-जाते हैं, इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध करने की संभावना है या उन्होंने अपराध करने की धमकी दी है और उसकी यह राय है कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है तो वह उस क्षेत्र को अत्याचारग्रस्त क्षेत्र घोषित कर सकेगा तथा शांति और सदाचार बनाए रखने तथा लोक व्यवस्था और प्रशांति बनाए रखने के लिए आवश्यक कार्रवाई कर सकेगा और निवारक कार्रवाई कर सकेगा ।

(2) संहिता के अध्याय 8, अध्याय 10 और अध्याय 11 के उपबंध, जहां तक हो सके, उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए लागू होंगे ।

(3) राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, एक या अधिक स्कीमें वह रीति विनिर्दिष्ट करते हुए बना सकेगी जिससे उपधारा (1) में निर्दिष्ट अधिकारी अत्याचारों के निवारण के लिए तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों में सुरक्षा की भावना पुनः लाने के लिए स्कीम या स्कीमों में विनिर्दिष्ट समुचित कार्रवाई करेंगे ।

18. अधिनियम के अधीन अपराध करने वाले व्यक्तियों को संहिता की धारा 438 का लागू न होना – संहिता की धारा 438 की कोई बात इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध करने के अभियोग पर किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी के किसी मामले के संबंध में लागू नहीं होगी ।

19. इस अधिनियम के अधीन अपराध के लिए दोषी व्यक्तियों को संहिता की धारा 360 या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के उपबंध का लागू न होना – संहिता की धारा 360 के उपबंध और अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (1958 का 20) के उपबंध अठारह वर्ष से अधिक आयु के ऐसे व्यक्ति के संबंध में लागू नहीं होंगे जो इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है ।

20. अधिनियम का अन्य विधियों पर अध्यारोही होना – इस अधिनियम में जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय, इस अधिनियम के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि या किसी रूढ़ि या प्रथा या किसी अन्य विधि के आधार पर प्रभाव रखने वाले किसी लिखत में उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे ।

21. अधिनियम का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित करने का सरकार का कर्तव्य – (1) राज्य सरकार, ऐसे नियमों के अधीन रहते हुए, जो केन्द्रीय सरकार इस निमित्त बनाए, इस अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए ऐसे उपाय करेगी जो आवश्यक हों ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे उपायों के अंतर्गत निम्नलिखित हो सकेगा, –

(i) ऐसे व्यक्तियों को, जिन पर अत्याचार हुआ है, न्याय प्राप्त करने में समर्थ बनाने के लिए पर्याप्त सुविधाओं की, जिनके अंतर्गत विधिक सहायता भी है, व्यवस्था ;

(ii) इस अधिनियम के अधीन अपराध के अन्वेषण और विचारण के दौरान साक्षियों जिनके अंतर्गत अत्याचार से पीड़ित व्यक्ति भी हैं यात्रा और भरणपोषण के व्यय की व्यवस्था ;

(iii) अत्याचारों से पीड़ित व्यक्तियों के आर्थिक और सामाजिक पुनरुद्धार की व्यवस्था ;

(iv) इस अधिनियम के उपबन्धों के उल्लंघन के लिए अभियोजन प्रारंभ करने या उनका पर्यवेक्षण करने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति ;

(v) ऐसे समुचित स्तरों पर, जो राज्य सरकार ऐसे उपायों की रचना या उनके क्रियान्वयन के लिए उस सरकार की सहायता करने के लिए ठीक समझे, समितियों की स्थापना करना ;

(vi) इस अधिनियम के उपबंधों के बेहतर क्रियान्वयन के लिए उपायों का सुझाव देने की दृष्टि से इस अधिनियम के उपबन्धों के कार्यकरण का समय-समय पर सर्वेक्षण करने की व्यवस्था ;

(vii) उन क्षेत्रों की पहचान करना जहां अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों पर अत्याचार होने की संभावना है और ऐसे उपाय करना जिससे ऐसे सदस्यों की सुरक्षा सुनिश्चित हो सके ।

(3) केन्द्रीय सरकार ऐसे उपाय करेगी जो उपधारा (1) के अधीन राज्य सरकारों द्वारा किए गए उपायों में समन्वय करने के लिए आवश्यक हों ।

(4) केन्द्रीय सरकार, प्रत्येक वर्ष, संसद् के प्रत्येक सदन के पटल पर इस धारा के उपबंधों के अनुसरण में स्वयं उसके द्वारा और राज्य सरकारों द्वारा किए गए उपायों के संबंध में एक रिपोर्ट रखेगी ।

22. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण – इस अधिनियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई भी वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध या राज्य सरकार या सरकार के किसी अधिकारी या प्राधिकारी या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध नहीं होगी ।

23. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम बना सकेगी ।

(2) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि

उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

———————

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	290.00
4.	मानव अधिकार – डा. शिवदत्त शर्मा – 2006	340	120	60.00
5.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान (सिंधी भाषा में)	1998	कीमत रु. 45/-
4. बहुभाषी संविधान शब्दावली	1986	कीमत रु. 12/-
5. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/ product/ product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in